श्री राम लाल प्रभु जी पर ब्रह्मणे नमः

श्री 1008 योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज

चरितामृत

# श्री योग महादिव्य रामायण

## छटा खण्ड ( शिक्षा काण्ड )

लेखक

चमन लाल कपूर "सेवक"

प्रकाशकयोग साधन आश्रम
3-माडल टाउन होशियारपुर ( पंजाब )

श्री राम लाल प्रभु जी पर ब्रह्मणे नमः

श्री **1008** योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज

चरितामृत

# श्री योग महादिव्य रामायण

## छटा खण्ड ( शिक्षा काण्ड )


लेखक

चमन लाल कपूर "सेवक"



प्रकाशकयोग साधन आश्रम

**3**–माडल टाउन होशियारपुर ( पंजाब )

प्रथम बार........................1000

योगेश्वर राम लालन्द............109

विक्रम संवत.....................2054

ईस्वी सन्........................1997

भेंट : 100 रु:

ॐ

# समर्पण

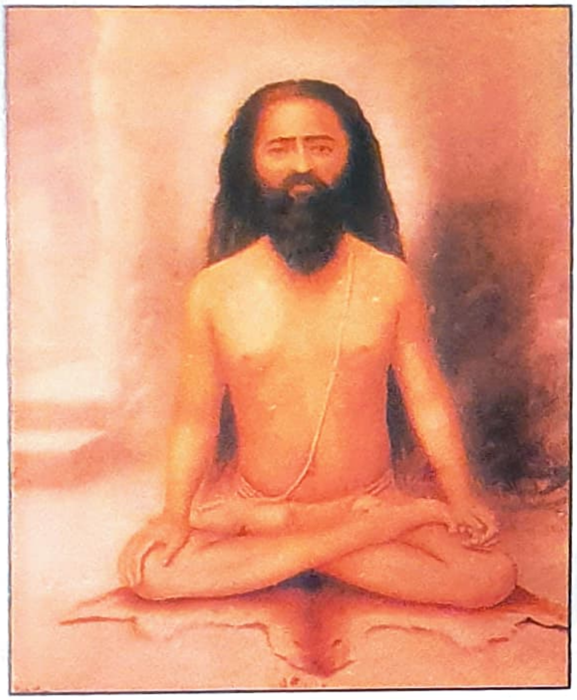

योगेश्वर श्री १००८
प्रभु राम लाल जी महाराज

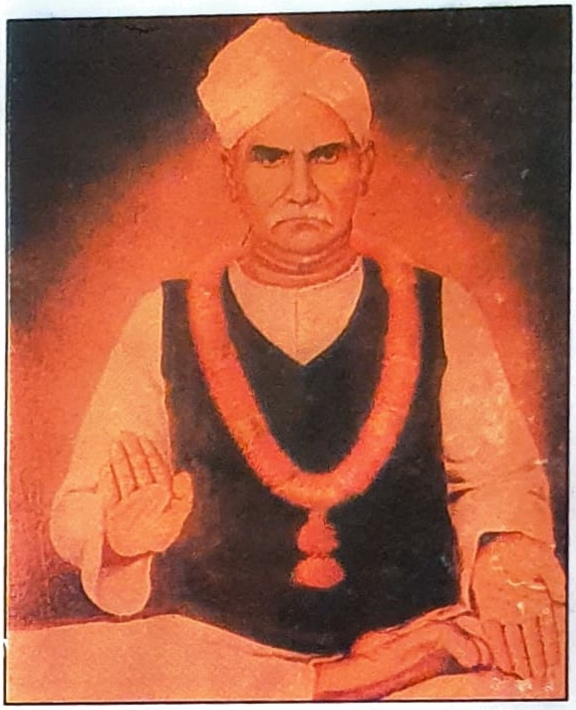

योगेश्वर श्री १००८
स्वामी मुलख राज जी महाराज

अर्पित तेरे चरण में,
यौगिक शिक्षा काण्ड।
तुझ से शिक्षा पा सके,
यह सकल ब्रह्माण्ड॥

# श्री योग महादिव्य रामायण (शिक्षा काण्ड)

## भूमिका

'श्री योग महादिव्य रामायण' का 'शिक्षा काण्ड' योग जिज्ञासु भक्तों के अनुशीलनार्थ प्रभु कृपा से प्रकाशित हुआ है। इस काण्ड में श्री सद्गुरु योगेश्वर स्वामी मुलख राज जी महाराज और एक साधु महात्मा के संवाद द्वारा हठ योग के साधनों का सरलता पूर्वक विवेचन किया गया है।

इकावन दिनों के इस संवाद में हठ योग के "सप्त साधनों" का विस्तार पूर्वक वर्णन है। हठ योग के सप्त साधन हैं—शोधन, दृढ़ता, स्थिरता, धीरता, लाघव, प्रत्यक्ष और निर्लिप्ता यही साधन हैं जिन द्वारा मनुष्य योग की सर्वोच्च भूमियों और अन्ततः कैवल्य अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है।

सप्त साधनों में से प्रत्येक के अन्तर्गत आने वाली यौगिक क्रियाओं का विवेचन और साधकों के मन में उत्पन्न होने वाले प्रश्नों के उत्तर तथा शंकाओं का समाधान भी मिलेगा।

प्रत्येक साधन से संबंधित क्रियायें इस प्रकार से हैं—

| हठ योग के सप्त साधन | सप्त साधन संबंधित क्रियायें |
|---|---|
| 1. शोधन | षट्कर्म |
| 2. दृढ़ता | आसन |
| 3. स्थिरता | मुद्रा |
| 4. धीरता | प्रत्याहार |
| 5. लाघव | प्राणायाम |
| 6. प्रत्यक्ष | ध्यान |
| 7. निर्लिप्ता | समाधि |

कौन-सी क्रिया किस दिन की शिक्षा के अन्तर्गत है इसका ज्ञान पाठकों को इस ग्रंथ की विषय सूची से ही प्राप्त हो सकेगा।

आशा है हठ योग के जिज्ञासु वर्ग के लिए यह "शिक्षा काण्ड" उपयोगी सिद्ध होगा।

निवेदक

श्री सद्गुरु चरणों का 'सेवक'

चमन लाल कपूर

# श्री योग महादिव्य रामायण (शिक्षा काण्ड)

## विषय-सूची



| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| 1 | पहला | 3482 से 3506 | एक साधु का श्री स्वामी जी महाराज के चरणों में आना, प्रश्न करना कि योग क्या होता है। उत्तर मिलना योग दो प्रकार का—हठ योग, राज योग। हठ योग के सात साधनों की क्रियाओं के नाम वताने और षटकर्म की छः क्रियायें बतला कर सूत्र नेति, रबर नेति और जल नेति का ज्ञान कराना। दुग्ध नेति के गुण बतलाने। गज करणी का दृष्टि के लिए लाभ बतलाना। | 2 |
| 2 | दूसरा | 3506 से 3512 | सूत्र नेति, जल नेति, गज करणी का अभ्यास कराना और वस्त्र धौति का वर्णन। | 15 |
| 3 | तीसरा | 3513 से 3522 | वस्त्र धौति और वमन क्रिया का अभ्यास। धौति के चार भेदों—अन्तर, दन्त, हृद् और मूल शोधन का कथन। | 18 |
| 4 | चौथा | 3522 से 3530 | अन्तर धौति के भेदों—वातसार, वारिसार, वह्निसार, बहिष्कृत का कथन और वात सार का अभ्यास। वारिसार के गुण बतलाने। | 24 |
| 5 | पांचवा | 3530 से 3541 | वारिसार का अभ्यास कराना। बह्निसार का ज्ञान। | 30 |
| 6 | छटा | 3541 से 3550 | बह्निसार का अभ्यास दो भेदों में। बहिष्कृत धौति का कथन। | 36 |
| 7 | सातवां | 3550 से 3560 | बहिष्कृत धौति का अभ्यास, दन्त धौति और जिह्वामूल धौति का कथन। | 41 |

| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| 8 | आठवां | 3560 से 3570 | जिह्वामूल धौति का अभ्यास, कपाल रन्ध्र धौति का अभ्यास। कपाल शुद्धि के लाभ और तदर्थ अन्य उपाय जैसे नेति, विपरीतकरी मुद्रा, गजकरणी, पादहस्तासन, कपाल भाति आदि का उल्लेख। | 47 |
| 9 | नवमां | 3570 से 3580 | कपाल भाति के दो प्रकार और उनका अभ्यास। मूल शोधन की विधि और उस के गुणों का उल्लेख । | 54 |
| 10 | दसवां | 3580 से 3590 | मूल शोधन के गुणों का बखान। नौली क्रिया का वर्णन और उस का अभ्यास। उड्डियान बंध का अभ्यास। योग के छः शत्रुओं का उल्लेख—व्याधि, स्त्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति। मानसिक रोगों—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार—का वर्णन। | 59 |
| 11 | ग्यारहवां | 3590 से 3600 | कामादि मानसिक रोगों की निवृत्ति के उपाय। स्त्यानादि विघ्नों और अन्तरायों का वर्णन। | 65 |
| 12 | बारहवां | 3600 से 3510 | अन्तरायों का उल्लेख। श्रद्धा के चार आधार। बस्ती क्रिया की विधि | 70 |
| 13 | तेरहवां | 3610 से 3620 | बस्ती क्रिया का अधिक वर्णन। त्राटक क्रिया की विधियां और अभ्यास तथा लाभ। कपाल भाति का अभ्यास। | 76 |
| 14 | चौदहवां | 3620 से 3630 | कपाल भाति के दो रूपों का अभ्यास। आसनों का उल्लेख। आसन असंख्य। आसनों से लाभ। आसन शारीरिक व्यायाम की सात्विक रीति। | 81 |
| 15 | पंदरहवां | 3630 से 3640 | जीवन तत्व के सात साधनों के नाम और उनका अभ्यास | 87 |
| 16 | सोलहवां | 3640 से 3650 | आहार संबंधी विशेष उपदेश। | 93 |

| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| 17 | सतरहवां | 3650 से 3660 | योग आसनों का प्रसंग। मुख्य रूप में चौदह आसनों के नाम। सर्वांगासन, पश्चिमोत्तानासन, सर्पासन, सिद्धासन, धनुरासन—इन आसनों का अभ्यास कराना और इनके लाभों का कथन। | 99 |
| 18 | अठारहवां | 3660 से 3670 | हलासन, उष्ट्रासन, वज्रासन, बद्धपद्मासन, चक्रासन, मयूरासन—इन आसनों की शिक्षा। | 104 |
| 19 | उन्नीसवां | 3670 से 3680 | शीर्षासन पर विशेष विवेचन। वृक्षासन, वृश्चिकासन का अभ्यास। | 110 |
| 20 | बीसवां | 3680 से 3690 | मनुष्य की आयु के अनुसार चार आश्रम। जैसे ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। प्रत्येक आश्रम में आयु और अवस्था के अनुसार आसन करने की शिक्षा। दीर्घायु प्राप्ति और स्वास्थ्य लाभ के लिए आसनों का महत्व। चारों आश्रमों में मनुष्य के अन्य विशेष कर्तव्यों का उल्लेख। | 115 |
| 21 | इक्कीसवां | 3690 से 3700 | वानप्रस्थ और सन्यास आश्रमों में मनुष्य के धर्म और योग के साधनों का उल्लेख। पांच प्राणों और पांच उपप्राणों का वर्णन। प्राण शक्ति के महत्व का कथन। | 121 |
| 22 | बाईसवां | 3700 से 3710 | मेरुदण्ड में स्थित षट्चक्र प्राण शक्ति के केन्द्र। उनका और प्राण नाडियों का विस्तृत विवेचन। प्राण साधना में गुरुकृपा का महत्व। कुण्डलिनी शक्ति का ज्ञान। | 127 |
| 23 | तईसवां | 3710 से 3720 | योग में सिद्धि का अधिकारी वही जो यम नियम का पालन करे। अहिंसादि पांच यमों के पालन करने पर क्रमशः आलौकिक सिद्धियो की प्राप्ति। | 133 |
| 24 | चौबीसवां | 3720 से 3730 | अपरिग्रह के पालन से पूर्व जन्म का ज्ञान। अपरिग्रह और वैराग्य की अभिन्नता। वैराग्य के दो प्रकार—अपर वैराग्य और पर वैराग्य | 137 |
| 25 | पच्चीसवां | 3730 से 3740 | शौचादि पांच नियमों के पालन पर विस्तृत विवेचन। उन पर चलने का फल कथन। योगेश्वर श्री प्रभु राम लाल जी महाराज के अवतारी होने का उल्लेख। | 143 |

| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| 26 | छब्बीसवां | 3740 से 3750 | योगेश्वर श्री प्रभु राम लाल जी महाराज द्वारा योग के पुनःउद्धार हेतु अवतार ले और तीन शरीरों की रचना कर जग में योग विद्या का प्रसार करना।<br>प्रभु दर्शन हेतु तीन मुख्य गुण—जिज्ञासा चित्त शुद्धि और प्रभुकृपा। चित्त शुद्धि के चार उपाय—मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा। | 150 |
| 27 | सताईसवां | 3750 से 3760 | प्रभु कृपा प्रभु इच्छा पर आधारित। नाडी शोधन प्राणायाम की शिक्षा। पूरक, कुंभक, रेचक की मात्रों का ज्ञान। | 157 |
| 28 | अठाइसवां | 3760 से 3770 | नाडी शोधन प्राणायाम की मात्राओं पर विवेचना। प्राणायाम के लिए उपयुक्त स्थान। मन और प्राण के संगम पर विस्तृत विवेचन। | 162 |
| 29 | उनत्तीसवां | 3770 से 3780 | प्राणायाम के अभ्यास से चित्त की एकाग्रता और कुण्डलिनी जागरण। ईडा, पिंगला और सुषुम्ना नाडियों के अपने-अपने कार्यों पर प्रकाश। सुषुम्ना नाडी का योग में विशेष महत्व। सुषुम्ना नाडी योग शास्त्रों में 'हृदय' नाम से कथित। | 168 |
| 30 | तीसवां | 3780 से 3790 | प्राणायाम और प्रत्याहार का पारस्परिक संबंध। दिन में चार बार योगाभ्यास का विधान। कुंभक प्राणायाम के दो भेद। सहित कुंभक, केवली कुंभक। सहित कुंभक के आठ भेद—सूर्यभेद, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली, भस्त्रिका, भ्रामरी, मूर्छा, प्लाविनी। | 175 |
| 31 | इकतीसवां | 3790 से 3800 | प्राण शक्ति की विश्वव्यापिकता का वर्णन। देह में प्राण नाडियों में प्राणों का वास। नाडियों की बहत्तर कोटि संख्या। देह में दश द्वार। दशम द्वार का स्थान चोटी में। दशम द्वार के खोलने की विधि। सूर्य भेद प्राणायाम का वर्णन और अभ्यास | 180 |
| 32 | बतीसवां | 3800 से 3810 | दायें स्वर में सांस लेने का गुण। उज्जायी प्राणायाम की शिक्षा। सीत्कारी प्राणायाम की शिक्षा। | 186 |
| 33 | तैंतीसवां | 3810 से 3820 | शीतली प्राणायाम की शिक्षा। शीतली और सीत्कारी में भेद। भस्त्रिका प्राणायाम की शिक्षा। | 191 |

| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| 34 | चौतीसवां | 3820 से 3830 | प्लाविनी प्राणायाम की शिक्षा। भ्रामरी प्राणायाम की शिक्षा। नाद ध्वनि 'ओं' का ज्ञान। | 196 |
| 35 | पैंतीसवां | 3830 से 3840 | कुंभक दीर्घकाल तक कैसे संभव होता है। शब्द ब्रह्म की पहचान। ध्यानावस्था का ज्ञान। मूर्छा प्राणायाम का अभ्यास, केवली कुंभक का वर्णन और गुरु मन्त्र का बोध। | 202 |
| 36 | छतीसवां | 3840 से 3850 | केवली कुंभक के साथ मन्त्र जाप। मन्त्र ईश्वर का नाम। ध्यान और नाम की प्राप्ति गुरु मुख से। दिव्य ध्यान का उल्लेख। | 207 |
| 37 | सैंतीसवां | 3850 से 3860 | काक भुषुण्डी ऋषि की त्रेता युग में भविष्यवाणी, "कलियुग में अमृतसर नगर में योगेश्वर प्रभु राम लाल का अवतार होगा।" प्रभु राम लाल के स्वरूप में ध्यान स्थित होने की शिक्षा। श्री प्रभु राम लाल की दिव्य लीलाओं का उल्लेख। | 211 |
| 38 | अठतीसवां | 3860 से 3870 | योग मुद्राओं का परिचय। उनसे योगी को लाभ। तीन बन्ध—मूल बंध, उड्डीयान बंध, जालंधर बंध। बंद मुद्रायोग के आधार। मूल बंध की शिक्षा, उड्डीयन बंध की शिक्षा। दोनों बंध एक साथ लगाने का निर्देश। बंधों में सांस न रुकने की विधि का ज्ञान। | 218 |
| 39 | उनतालीसवां | 3870 से 3880 | जालंधर बंध की शिक्षा। बिना बंधों में सिद्धि प्राप्त किये मुद्राओं में सिद्धि संभव नहीं। यौगिक मुद्राओं के दो वर्ग। प्रथम वर्ग में नौ मुद्रायें। दूसरे वर्ग में तेरह मुद्रायें। सभी मुद्राओं के नाम कथन। दोनों वर्गों को मिला कर कुल 22 मुद्रायें। तीन बंधों सहित कुल संख्या 25। मुद्राओं के दोनों वर्गों की अपनी-अपनी विशेषता का उल्लेख। प्रथम वर्ग की मुद्राओं का शरीर 'की ग्रंथियों' पर प्रभाव। द्वितीय वर्ग की मुद्राओं का प्राण नाडियों पर प्रभाव।<br><br>ग्रंथियों का महत्व बतला कर 'नभो मुद्रा' की शिक्षा और उस द्वारा 'मूर्धा ग्रंथि' (Prituitary Gland) को विशेष लाभ, 'खेचरी मुद्रा' की शिक्षा। इसके लिए जिह्वा को लंबी करने का उपाय—जिह्वा-दोहन। | 224 |

| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| 40 | चालीसवां | 3880 से 3890 | खेचरी मुद्रा का अधिक वर्णन, कपाल कुहर का उल्लेख, खेचरी से मूर्धा रस की प्राप्ति। जिह्वा को लंबी करने की दूसरी रीति 'जिह्वा छेदन'। तड़ागी मुद्रा की शिक्षा। मधुग्रंथि (Pancres) पर विशेष प्रभाव। | 230 |
| 41 | इकतालीसवां | 3890 से 3901 | माडूंकी मुद्रा की शिक्षा, जिह्वा ग्रंथियों (Slivary glands) और स्वाद ग्रंथियों (taste buds) को लाभ। आश्विनी मुद्रा की शिक्षा। वड़ी आंत (colon) को विशेष लाभ। काकी मुद्रा की शिक्षा। आमाशय को विशेष लाभ। | 236 |
| 42 | बतालीसवां | 3901 से 3910 | भुंजगिनीमुद्रा के विशेष लाभ। गलग्रंथी (thyroid gland) को लाभ। तिली (spleen) और जिगर (Liver) को लाभ। मातंगिनी मुद्रा की शिक्षा। नासिका ग्रंथियों (adenoids) को लाभ। ग्रीवाग्रंथियों (Tonsils) को लाभ। विपरीतकरीमुद्रा की शिक्षा। मूर्धा ग्रंथि (Pituitary gland) को लाभ। गुर्दों को भी लाभ। | 242 |
| 43 | त्रितालीसवां | 3910 से 3920 | महामुद्रा की शिक्षा, महाबंध की शिक्षा, महावेध की शिक्षा। कुण्डलिनी का विशेष उल्लेख, योनि मुद्रा की शिक्षा। कुण्डलिनी और सुषुम्ना नाडी का परस्पर संबंध। | 248 |
| 44 | चतालीसवां | 3920 से 3930 | योनिमुद्रा का पुनः कथन। वज्रोनिमुद्रा का अभ्यास, यह वीर्य रक्षक और महाशक्ति प्रदायिनी। इसका सुगम रीति से अभ्यास बताना। शक्ति चालिनी मुद्रा, इसका कुण्डलिनी शक्ति को जागृत करने में विशेष उल्लेख। योग में आहार—विचार-व्यवहार शुद्धि की आवश्यकता। | 254 |
| 45 | पैंतालीसवां | 3930 से 3941 | शक्ति चालिनी के अभ्यास की रीति। कुण्डलिनी द्वारा दशम द्वार का उद्घाटन। शांभवी मुद्रा का अभ्यास। शांभवी मुद्रा के अभ्यास के लिए साधक के लक्षण—श्रद्धा, स्मृति, एकाग्रता और तीव्र संवेग। पृथ्वी धारणा मुद्रा की शिक्षा, मूलाधार कमल में धारणा, मूलाधार कमल के चार पत्तों का भाव। | 259 |
| 46 | छतालीसवां | 3942 से 3951 | जल धारणा मुद्रा का अभ्यास, स्वाधिष्ठान चक्र में धारणा, स्वाधिष्ठान चक्र कमल के छः पत्तों का भाव। अग्नि धारणा मुद्रा का अभ्यास, मणिपूर चक्र में धारणा। इस कमल के दश पत्तों का भाव। वायवीधारणा मुद्रा का अभ्यास, अनाहत चक्र कमल में धारणा, इस कमल के बारह पत्तों का भाव। आकाशी | 265 |

| क्रम संख्या | दिन | दोहा संख्या | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|---|---|
| | | | धारणा मुद्रा का अभ्यास। विशुद्ध चक्र कमल में धारणा। इस कमल के सोलह दल का भाव। | |
| 47 | संतालीसवां | 3952 से 3961 | पाशिनी मुद्रा का अभ्यास, इस से प्राण शक्ति में वृद्धि। मुद्राओं में सिद्धि की कठिनाई। प्रश्न—क्या अन्य उपाय मन वश करने का है ? उत्तर—ध्यान योग की सरल रीतियां मन को वश करने के लिए हैं। ध्यान योग की तीन रीतियां—स्थूल ध्यान, ज्योति ध्यान, सूक्ष्म ध्यान। | 270 |
| 48 | अठतालीसवां | 3961 से 3972 | स्थूल ध्यान में मन को स्थिर करने की सरल रीतियां | 275 |
| 49 | उनूजवां | 3972 से 3982 | स्थूल ध्यान में मन को स्थिर करने की और रीतियां। ज्योति ध्यान के तीन रूप— भौतिक, दैविक, आत्मिक। इन तीन के ध्यान का वर्णन। | 280 |
| 50 | पचासवां | 3883 से 3992 | आत्म ज्योति के ध्यान का उल्लेख। सूक्ष्म ध्यान का वर्णन। प्रश्न—सबसे सूक्ष्म क्या ? एकाग्रचित्त और निर्मल बुद्धि से ही ध्यान संभव। | 286 |
| 51 | इकावन | 3993 से 4002 | सूक्ष्म ज्ञान के लिए 'तप' की आवश्यकता तप के तीन उपाय—सत्य, संतोष, स्वाध्याय। सूक्ष्म ध्यान—ईश्वर का ध्यान, ईश्वर के गुण कथन, उपसंहार। | 291 |

# श्री दिव्य रामायण सहगान

दिव्य रामायण की गाथा को,
जो नर सुने सुनावे ।
जीवन में रहे सुखी हमेशा,
अन्त परमपद पावे ॥
श्री प्रभु 'गंडाराम' दुलारे,
इस में उन के खेल हैं न्यारे ।
पतित पावनी कथा मनोहर,
भक्तन के मन भावे ॥
सुन्दर यह इतिहास मनोहर,
लीला कीनी जिमि योगेश्वर ।
योग साधना की पावस ऋतु,
योगामृत वरसावे ॥
उत्तम नीति इस में आई,
भक्त जनों के जो मन भाई ।
इस के सुनने से प्राणी का,
पाप नाश हो जावे ॥
श्री प्रभु राम लाल हैं नायक,
जीव चराचर के सुखदायक ।
उनके चरण कमल का भौंरा,
'सेवक' शीश झुकावे ॥

**श्री 1008 योगेश्वर प्रभु राम लाल जी महाराज**

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
जग में जब हो धर्म की हान।
लें अवतार तभी भगवान॥

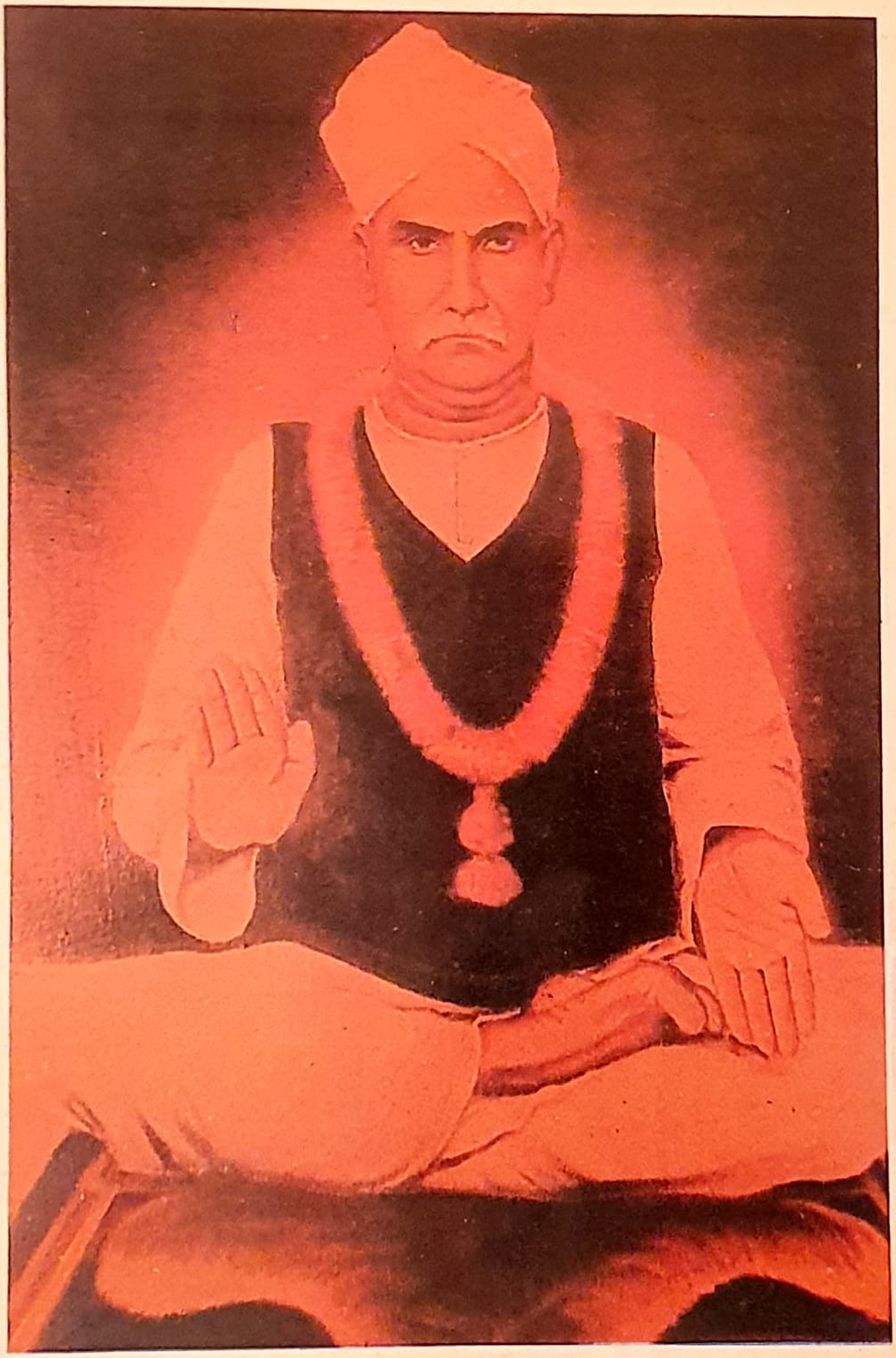

श्री 1008 योगेश्वर स्वामी मुलख राज जी महाराज

ॐ

# श्री योग महादिव्य रामायण

## (शिक्षा काण्ड)

दो०— प्रभु आज्ञा को मान कर, करूं शुरु यह काण्ड ।
गुरु मुख से मैंने सुना, योगी घट ब्रह्माण्ड ।।3481ग
स्वामी सद्गुरु मुलख जी, पूर्ण योग अवतार ।
दे शिक्षा दिव योग की, कीना जग उद्धार ।।3481घ
उन के मुख से जो सुना, उसका करूं बखान ।
निमाने 'सेवक' को प्रभु, देना प्रतिभा दान ।।3481ङ

'सेवक' सद्गुरु चरणी रहता, वचनामृत उनके सुन पाता ।
जिज्ञासु आकर उन के पास, पूछें प्रश्न जो उन मन खास ।
सद्गुरु मुलख राज महाराज, आश्रम में रहें सदा विराज ।
चल कर ज्ञान पिपासु आते, गुरु चरणी आ शीश झुकाते ।
अपने चित्त की कहते बात, ज्ञान की मूर्ति के साक्षात ।
स्वामी जी थे जब समझाते, प्रसन्न चित्त सभी हो जाते ।

साधु गृहस्थी सभी थे आते, स्वामी जी से शिक्षा पाते ।
इक दिन साधु एक चलि आया, नमस्कार करके कह पाया ।
"योगीराज मैं हूं जिज्ञासु, चातक वत इक योग पिपासु ।

## दिन पहला (1)

दो०—योग जिज्ञासु जानकर, हे योगिमहाराज ।
प्रदान करो मुझ को प्रभु, दान योग का आज ॥ 3482 क
पहला मेरा प्रश्न है, होता क्या है योग ।
नाम सुनावें योग का, इसे न जानें लोग" ॥ 3482 ख

स्वामी जी सुन कर वह बात, कहन लगे "सुन लो मम तात ।
योग साधन वह विद्या भाई, जीवन को जो सुख प्रदाई ।
करता तन को रोग से मुक्त, ईश्वर से करे मन को युक्त" ।
कहे साध "हे स्वामी मेरे, वचन अनोखे हैं ये तेरे ।
मुझे बताओ हे मम नाथ, रोग व योग का कैसा साथ ।
औषध से सब रोग हों दूर, जग में किसे न यह मंजूर" ।
कहा स्वामी "हे साध प्यारे, यह वचन हैं मान्य तुम्हारे ।
पर कहूं मैं योग की बात, योग निवारे रोग हे तात ।

दो०—बिन औषध उपचार के, रहता स्वस्थ शरीर ।
साधन जो हैं योग के, हरें देह की पीर" ॥3483

कहा साधु "हे स्वामी प्यारे, सच जानूं मैं वचन तिहारे ।
पतांजल दर्शन मैं पढ़ पाया, वहां पर ऐसा कुछ न आया ।

कौन योग तुम करत बखान, मिलता जहां इस का प्रमाण ।
कर किरपा मुझ को बतलायें, मेरे संशय सकल दुरायें ।
योग आध्यात्म विद्या नाथ, देह ज्ञान किमि उस के साथ ।
नश्वर तन किमि बने सहायी, यह बात मुझे समझ न आई" ।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, कथूं बात मैं सह प्रमाण ।
स्पष्ट बात जिस से हो पाय, और योग तव समझ में आय ।

दो०—योग वृक्ष वह जानिये, जिस की शाखा दोय ।
राजयोग इक को कहें, दूजा हठ है सोय ।।3484

देह बिना नहीं आत्म मुक्ति, मिलती यह हठ योग में युक्ति ।
देह किमि रहे स्वस्थ सुडोल, हठ योग कथे यह बात अडोल ।
राज योग नहीं बिन हठ योग, अनुभव से सभी समझें लोग ।
करना चाहे जो जन योग, प्रथम साधे वह हठ ही योग" ।
श्रवण करी जब नूतन बात, साधु बोला निज कर नत गात ।
"नाथ मुझे यह देवें ज्ञान, कहां मिले हठ योग का ज्ञान ।
कौन भये आचार्य विशेष, जिन दीना यह ज्ञान निशेष ।
ग्रंथ कौन जिनमें यह ज्ञान, जिन को जाने जग प्रमाण ।

दो०—कौन ग्रंथ हैं नाथ जी, वा आचार्य विशेष ।
दीना जिन हठयोग का, जग को ज्ञान निशेष" ।। 3485

साधु निज जिज्ञास बतलाई, स्वामी जी के मन वह भाई ।
कथन कीन तब उन यह बात, "श्रवण करो तुम हे मम तात ।

आदि नाथ जो शिव भगवान, उन दीना हठ योग का ज्ञान ।
आचार्य भये फिर कुछ महान, रचना जिन की भयी प्रमान ।
घेरण्ड आदि कई विद्वान, जिन दीना हठ योग का ज्ञान ।
उपनिषद भी हैं कुछ विशेष, उलेख जहां हठ योग निशेष" ।
कहा साध "हे योगी राज, बोध कराओ मुझ को आज ।
प्रथम मुझे हठ योग बताओ, पाछे राज योग समझाओ ।
पूर्ण भये जिमि मेरा ज्ञान, गुरु से ही जन पाता ज्ञान ।

दो०—आज भया है ज्ञान यह, शाखा योग की दोय ।
योगिराज उन को कहें, साधूँ दोनों सोय ॥3486क
एक शाखा ही साध कर, रहे अधूरा जोय ।
वह योगी किमि हो सके, योग न पूरा सोय ॥3486ख

ऐसा भया है मम विश्वास, नाथ के ही अब रह कर पास ।
शिक्षा गहूं योग की सारी, उपजी इच्छा मम यह भारी ।
हठ योग क्या होता नाथ, मुझे बता यह करो सनाथ" ।
कहा स्वामी "तुम सुन लो मीत, शिव चलाई हठ योग की रीत ।
दैवी विद्या इस को जानो, मनुष्य अधूरा इस बिन मानो ।
जन दुखी बिन योग रह पायें, यही बात शिवजी बतलायें ।
साधन सात कहे उन भाई, उन को जान लवो मन लाई ।
पुनः सीखो रह कर मम पास, योग मिले तुझे इस विधखास ।

दो०—*सातों साधन योग के, श्रवण करो मन लाय ।
बिना सीखे न कुछ बने, श्रवण काम न आय । 3487

लो प्रथम षट्कर्म पहचान, आसन मुद्रा भी लो जान ।
चौथा प्राणायाम विख्यात, प्रत्याहार पंचम है तात ।
छटा ध्यान कहलावे मीत, समाधि की है सप्तम रीत" ।
सुनकर सातों के ये नाम, कहा साधु ने सह प्रणाम ।
"गुरु देव ! मैं तुझे सुनाऊं, कहीं नाम ये भूल न जाऊं ।
पहला नाम जो है बतलाया, षट्कर्म वह कथन में आया ।
दूजा नाम आसन का नाथ, बता आपने कीन सनाथ ।
मुद्रा फिर कथनी में लायी, कृपा कर जो आप बतलायी ।
प्रणायाम का हे भगवान, चौथा नाम है लीना जान ।

दो०—चार नाम जो योग के, मैं सुनाये नाथ।
क्या शुद्ध मम ज्ञान यह, कथ के करो सनाथ" ।।3488

कहा नाथ "हे साध प्यारे, तुम सभी हैं शुद्ध उच्चारे ।
आगे के भी कथ दो मीत, यदि स्मरण वे तेरे चीत" ।
साध कहा "हे योगी राज, बुद्धि मन्द भी जागृत आज ।
मैं जानूं यह तेरी दाया, मुझे स्मरण जो है रह पाया ।
प्रत्याहार है मुझे स्मरण, कीना ध्यान आपने वरण ।

---

*हठ योग के सात साधन :

(1) षट्कर्म (2) आसन (3) मुद्रा (4) प्राणायाम (5) प्रत्याहार (6) ध्यान (7) समाधि ।

समाधि सप्तम साधन नाथ, बखान आप कर कीन सनाथ ।
प्रभो आप मुझ को बतलायें, षट्कर्म क्या होत जतायें ।
कौन कर्म है वे भगवान, हैं जिनका षट्कर्म अभिधान" ।
उस साधु ने जब इमि सुनाया, स्वामी जी के मन तब आया ।
जिज्ञासु आया है यह साध, इसको शिक्षा दूँ निर्बाध ।
प्रेम सहित तब उसे उचारा, "हे साधु तुम ठीक विचारा ।
छः साधन षट्कर्म में आये, जग में जो प्रसिद्ध हो पाये ।

दो०—*छः साधन षट्कर्म के, उन को लो तुम जान ।
नेती कहते एक को, धौति दूज अभिधान ॥ 3489 क
नौली तीजा जानिये, चौथा बस्ती मान ।
त्राटक पञ्चम कर्म है, रचे सभी भगवान ॥ 3489 ख

छटा कपालभाति कहलाये, वर्णन में इस विध सब आये ।
स्मरण भये तुझे क्या सारे, जानूँ कठिन नाम ये भारे ।
इनको तुम दोहरा लो मीत, बसें नाम ये तेरे चीत" ।
कहा साधु "हे स्वामी मेरे, स्मरण करूं जब पग मैं तेरे ।
भूली बात भी आये याद, चमत्कारी हैं तुमरे पाद ।
षट्कर्मों के नाम सुनाऊं, श्रवण किये जो मैं दुहराऊं ।

---

*षट्कर्म के छः साधन :
(1) नेति (2) धौति (3) नौलि (4) बस्ती (5) त्राटक (6) कपालभाति ।

प्रथम नाम नेती का आया, दूजा धौती मैं सुन पाया ।
तीजा नौली है भगवान, सभी किये ये आप बखान ।
चौथा बस्ती था कथ पाया, त्राटक पञ्चम आप बताया ।
अन्तिम कपालभाति भगवान, शुद्ध किये क्या दास बखान ।
दो०—त्रुटि दास की नाथ जो, दीजो सभी बताय ।
आप प्रभु मैं दास हूं, सीखूं सब मन लाय" ॥ 3490
कहा स्वामी "हे साध प्यारे, शुद्ध उचारे तुम ये सारे ।
नेती की अब सुन लो बात, इसके भेद भी हैं मम तात ।
सूत्र नेति लो उत्तम जान, इसके लाभ हैं कथे महान ।
नज़ले से जन वह बच जाये, नित्य प्रातः जो कर पाये ।
दृष्टि उसकी होय न क्षीण, सीखे इसे जो जन प्रवीण ।
सर का भारीपन हो दूर, करे जो इसको नित्य जरूर" ।
सुनकर साध यह सारी बात, कुतुहलवश वह बोला "तात ।
उस क्रिया का करो बखान, क्या होती वह लूं मैं जान" ।
स्वामी बोले "साध प्यारे, रहस मिलें अभ्यास से सारे ।
दो०—इस क्रिया को जब करें, स्पष्ट तभी हो बात ।
फिर भी लेवो जान यह, सूत्र नेति जो तात ॥3491
सूत की डोरी नेति कहाय, नाक में डाल गले में आय ।
घर्षण कर लें बाहिर निकाल, मुख अथवा हम नाक के द्वार" ।
स्वामी जी की सुन कर बात, पूछा साध "हे जन त्रात ।
नाकछिद्र से बहिर निकालें, अथवा मुख से नेति निकालें ।
क्या है इसमें भी कुछ भेद, अथवा करें हम यह बिन खेद" ।
कहा नाथ तुम ठीक उचारा, इसमें कुछ रहस्य है भारा ।

मुख से जब जन नेति निकाले, नाक में कुछ पीड कर डाले।
पीडा सहन जन न कर पाये, नाक से नेति खींच दिखाये।
दो०—नेति करे जो नित्य ही, उसे न पीडा होय।
मुख से ही वह खींच ले, लाभ अधिक वह गोय" ॥349
कहा साध "हे स्वामी प्यारे, समझ भाव न आय तुम्हारे।
मुख से जब हम नेति निकालें, अधिक लाभ हम किस विध पालें।
प्रभो यह बात भी करें स्पष्ट, भ्रांति चित्त की हो जिमि नष्ट"।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, यह तो न कोई गूढ ज्ञान।
अधिक घर्षण से अधिक सफाई, नसों की बढ़ती शक्ति भाई।
नसों की शक्ति बढ़े जो मीत, सशक्त हों सब अंग इस रीत"।
कहा साधु "हे स्वामी प्यारे, कौन अंग सशक्त हों भारे।
जिन्हें नेती से होवे लाभ, तुम्हीं बताओ हे अमिताभ"।
दो०—सुनी साध की बात जब, कथन किया गुरु देव।
"पूछा तुमने प्रश्न जो, स्पष्ट करूं वह भेव ॥3493
भृकुटी मध्य नसें जो साध !, नेती से हों सशक्त अबाध।
आंख कान व नाक से मीत, उन नसों का संग लो चीत।
इन अंगों की शक्ति बढ़ाये, पुरुष नेति को जो कर पाये।
दृष्टि जिस की मन्द हो भाई, नेती हो उस को सुख दायी।
जिस के कानों में हो दोष, नेति क्रिया करे निर्दोष।
नेती राम बाण सम भाई, नासिक रोगों में सुखदाई।
नेति क्रिया को कर के मीत, निरोग रहे जन सब ही रीत"।
सुन कर स्वामी जी के भाव, लागा कहन "हे महानुभाव।
नेती के गुण आप बखाने, सब गुण मैंने इस के जाने।

दो०—सूत नेति बहु कठिन है, कहते हैं कुछ लोग ।
और भी को उपाय है, डरें न जिस से लोग ॥3494
किरपा कर के वह बतलायें, दूर भ्रांति को कर पायें" ।
सुन जिज्ञासा उसकी सारी, स्वामी जी तब गिरा उचारी ।
"योग को सरल बनाने हेत, प्रभु की शिक्षा है अभिप्रेत ।
वन में छिपा पड़ा था योग, कहें न गृहस्थी के वह योग ।
तपस्वी ही इसको कर पाँय, आश्रम गृहस्थ में न अपनायँ ।
राम प्रभु जब जग में आये, जग के उन सब भरम दुराये ।
योग धर्म मानव का धर्म, न यह विशेष आश्रम का धर्म ।
यह शिक्षा उन सब को दीनी, खुशी खुशी वह जग ने लीनी ।
योग के साधन सरल बनाये, जन साधारण जिमि कर पाये ।
दो०—लुप्त भया जो योग था, प्रभु प्रचारा आन ।
सरल बनाया योग उन, जनता सीखा आन ॥3495
कठिन लागी जिसे सूत्र नेती, उसे बताई रबर की नेति ।
रबर नेति कुछ जन अपनाई, सूत्र नेति बहु जन कर पाई ।
इस विध भया योग प्रचार, सर्व जगत में बहु प्रकार" ।
कहा साध ने "हे महाराज, ज्ञान मिला जो खास है आज ।
इस ने मम जिज्ञास बढ़ाई, मैं चाहूँ हो योग कमाई ।
इस से आगे का उपदेश, दीजिये जो कुछ हो विशेष" ।
बोले स्वामी "साध प्यारे, योग जिज्ञासा चित्त तुम्हारे ।
इस की तृप्ति तभी हो पाये, आजीवन जब योग कमाये ।
दो०—आजीवन जब योग को, अपनाओ मम मीत ।
रहस सभी तब योग के, गे खुलें तव चीत ॥3496

सूत्तर नेति के पश्चात, करनी जल नेती हे तात" ।
साधू बोला "हे श्रीमान, जल नेती तुम कौन बखान ।
जल नेती क्या होती भाई, यह तो न मम समझ में आई" ।
कहा स्वामी "हे महानुभाव, समझ पाओ तुम सब मम भाव ।
नाक से हो जब जल का पान, जल नेति वही होय बखान ।
अथवा मुख से देयं निकार, करें नेति जल इस प्रकार ।
नाक की शुद्धि तब हो पाये, जल नेती जब जन कर पाये" ।
सुन कर स्वामी जी की बात, बोला साधु "पूज्य हे तात ।

दो०—जल नेति जब हम करें, जल कैसा हो नाथ ।
शीतल अथवा ऊष्ण हो, यह भी कह दें साथ ॥3497

कहा स्वामी "हे साध सुजान, बात तेरी में गुण महान ।
जल का रखता जो जन ध्यान, उस को मिलता लाभ महान ।
ग्रीष्म काल जल शीतल होय, शीतल काल मध्य ऊष्ण सोय ।
और देखो स्वभाव भी मीत, हानि हो जो करे विपरीत ।
जिसे बढ़ा हो रक्त का चाप, ग्रीष्म जल से होय संताप ।
नजला हो जिस जन को भाई, ऊष्ण जल ही उसे सुखदाई ।
एक बात भी और लो जान, जल को करे नमकीन सुजान" ।
साधु ने तब पूछ ली बात, "लाभ नमक का क्या है तात ।

दो०—नमक मिलायें नीर में, गुण इस का क्या होय ।
आप बतावें नाथ जी, मम प्रश्न मन सोय" ॥3498

कहा नाथ "हे साध प्यारे, नमक मिलाने के गुण भारे ।
बिना नमक जल चुभता मीत, ऊष्ण होय या हो वह शीत ।

दूजा गुण मैं यह बतलाऊं, नाशक कीट इसे कथ पाऊं ।
सूजन हो यदि नाक में लेश, सांस लेने में होय क्लेश ।
नमक है उस का भी उपचार, जल नेति करिये इस प्रकार ।
गुरु से समझ के सारी बात, योग करे जन ही मम तात ।
यह बात भी ध्यान में लाये, नेति कर जन प्राण चलाये ।
तीव्र श्वास की गति जो होय, शुद्ध करे वह नाक को सोय ।

दो०—नेती का विधान सकल, कथ दीना मैं मीत ।
पूछ लवो कुछ और भी, जो होय तव चीत" ।।3499

कहा साध "हे पूज्य स्वामी, सदा रहूं मैं तव अनुगामी ।
सीखूं सारी योग की बात, योग करूं मैं उठ नित प्रात ।
एक बात पर मन में आई, मुझे बताओ वह सुखदायी ।
सुना जनता से मैं आलाप, नाक से दूध पिलावें आप ।
यह अनोखा कर्म है देव, *पय का मुख से करें जन सेव ।
नाक द्वारा क्या गुण भारी, अथवा कुछ विशेष लाचारी ।
यही बात मुझ को समझावें, भ्रम मेरे को दूर भगावें" ।
साध की सुन कर यह जिज्ञास, लायी स्वामी मुख पर हास ।
कहन लगे "सुन मीत प्यारे, राम प्रभु थे जग अवतारे ।

दो०—कलियुग में अवतार ले, खोले रहस अनेक ।
जो योग नहीं विदित था, वह जाना हर एक ।।3500

प्रभु ने जग को आ बतलाया, नेति का सभी गुण समझाया ।
जल की नेति शुद्धि कर पावें, शक्ति दुग्ध नेती उपजावे ।

* पय = दूध

दुर्बलता जब तन में आये, दृष्टि मन्द हो, सर चकराये ।
दुग्ध नेति तब बने सहायी, नसें सशक्त होंय फिर भाई ।
सर पीड़ा हो जन की दूर, आंखों में पुनः उपजे नूर ।
दुर्बल देह सबल हो जाये, चमत्कार यह कर दिखाये" ।
कहा साध "हे स्वामी मेरे, रहस योग के परम घनेरे ।
स्पष्ट करें हे मेरे नाथ, कारण जतला करें सनाथ ।

दो०—दुग्ध नेति अभ्यास से, किमि हो देह सशक्त ।
यह जिज्ञासा है भयी, पूर्ण करो इस वकत ॥3051

कहा स्वामी "तुम समझो मीत, प्रभु की बात पर कर प्रतीत ।
मानव देह उस वृक्ष समान, जिस की जड़ ऊपर को जान ।
मस्तक मध्य जड़ों का जाल, शक्ति मिले जहां से सब काल ।
देह की जड़ को सिंचन हेत, दूध की नेति है अभिप्रेत ।
यह तो अनुभव की है बात, दूध नेति से सबल हो गात ।
मस्तक को जब मिलत आहार, नयन ज्योति का होय सुधार ।
स्मरण शक्ति भी तीव्र होय, नेती दुग्ध करता जन जोय ।
सरल रीत से चलत श्वास, रहे न दोष उसमें को खास ।

दो०—दुग्ध नेति के गुण कथे, प्रभु ने जग के हेत ।
लाभ उठाया जगत ने, ऊसर भये सुखेत" ॥3502

कहा साध ने "स्वामी प्यारे, ज्ञान भरे हैं वचन तिहारे ।
मन्द दृष्टि का कीन बखान, दुग्ध नेति आप कथी निदान ।
और भी साधन हो इस हेत, वह भी सुनूं मैं होय सचेत" ।
कहा नाथ "तुम ठीक उचारा, साधन एक और है भारा ।
उसे करे जो साध प्रवीण, दृष्टि कभी नहीं होवे क्षीण ।

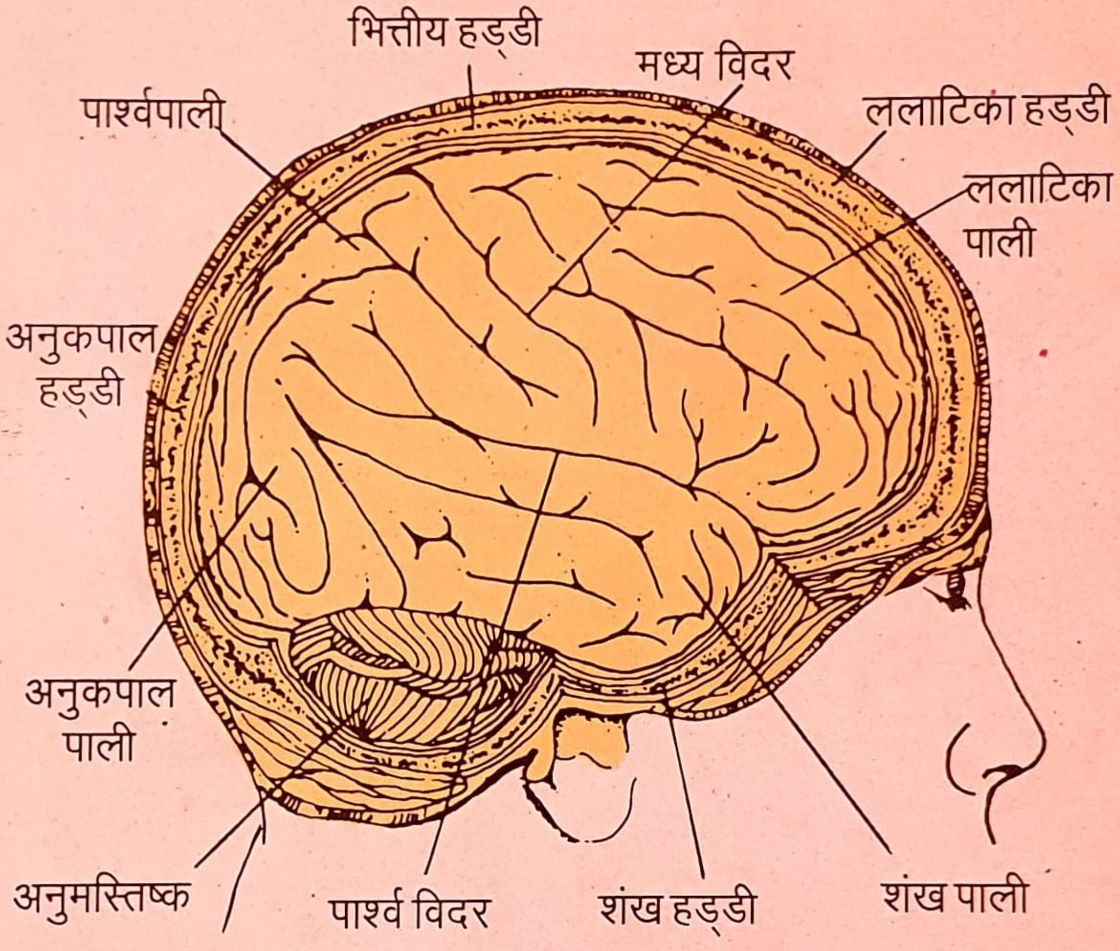


प्रमस्तिष्क का आंतरिक भाग

वह क्रिया बहु सुगम न भाई, जिस साथी प्रभु किरपा पाई ।
यह 'विपरीत करी' है जानो, 'गजकरणी' वा तुम पहचानो ।
इस की रीत लो मुझ से जान, सीखनी कभी प्रातः आन ।
दो०—गज करणी जो करत है, नित्य प्रात व सांझ ।
दोष कोई न होत है, उस की दृष्टि मांझ ॥3503
अब मैं तुम को यह समझाऊं, इसकी विधि जो है बतलाऊं ।
मुख में जन ले जल को डाल, नाक से उसको देय निकाल ।
दीर्घ काल इसका अभ्यास, जन को करता सिद्ध है खास ।
मुख का जल फिर आंख में आय, बहिर आंख से निकल के जाय ।
तभी क्रिया यह सिद्ध पहचानो, पूर्ण लाभ तब होगा जानो"।
सुन कर स्वामी जी की बात, चकित साध ने कहा "हे तात ।
सुन कर भयी मुझे हैरानी, आंख से कैसे निकले पानी ।
मुख का नाक से तो है मेल, उसका आंख से कैसा मेल ।
मुख का नीर आंख तब आये, मारग यदि कोई दिख पाये ।
स्पष्ट करो यह बात स्वामी, हूं नाथ मैं तव अनुगामी ।
भ्रम मेरे को करिये दूर, अभ्यास करूं मैं तब जरूर ।
दो०—प्रभुयोगेश्वर आप हैं, सब साधन तव पास ।
शरण पड़ा हूं आप की, सहितपूर्ण विश्वास" ॥ 3504
सुनी स्वामी जब उसकी बात, लागे कहन "सुनो मम तात ।
मुख नाक से मिला है जानो, नाक आंख का मेल न जानो ।
नाड़ी सूक्ष्म इक इन के बीच, आंख नाक का मेल समीच ।
मुख का जल जब नाक में जाय, नाक आंख में वह पहुंचाये ।
आंख का शोधन होय ऐसे, अन्य उपाय से हो न जैसे"।

साथ चित्त आश्चर्य समाया, गुप्त भेद को उसने पाया ।
कहन लगा "हे स्वामी प्यारे, योग रहस तुम जाने सारे ।
आवे चित जो पूछूं सोय, गजकरणी क्या दूध से होय ।
दो०—क्या दूध से हो सकत, यह क्रिया मम नाथ ।
यदि यह संभव है प्रभो, लाभ बतावें साथ" ॥ 3505
कहा नाथ "हे साध प्यारे, राम योगेश्वर जग अवतारे ।
उन की ही यह विद्या न्यारी, सीख रही जो जगती सारी ।
लुप्त योग उन जग में लाया, जनता ने अति सुख को पाया ।
रोग दुराये, बलिष्ठ बनाये, योग साधन के गुण बताये ।
भूली बात स्मरण करायी, योग समान न अन्य कुछ भाई ।
ग्रंथों में जो न मिल पाया, वह भी प्रभु ने सब बतलाया ।
गजकरणी में दूध प्रयोग, विलक्षण दीना प्रभु यह योग ।
आंखों से जो दूध निकाले, दिंव्य दृष्टि को जन वह पा ले ।
दो०—गज करणी में दूध का, करता जन प्रयोग ।
उसको लाभ विशेष हो, गुणकारी यह योग ।3506 क
नेति का उपदेश यह, दीना नाथ दयाल ।
कहन लगे फिर साध से, आना प्रातः काल ।3506 ख
जो साधन तुम सुन लिए, उन का कर अभ्यास ।
अगला फिर प्रसंग लें, होगा जो कुछ खास ।3506 ग
इतना कह वे उठ दिये, करने सायं कर्म ।
तभी साधु भी चल दिया, कह "योग मुख्य धर्म" ।3506 घ

## दिन दूसरा (2)

रात्री बीती जगती जागी, जनता आश्रम आने लागी ।
स्वामी चरण में साधु आया, विनय वचन उन से कह पाया ।
"नाथ मुझे अब योग सिखाओ, अपने शिष्यन संग मिलाओ"।
कहा स्वामी "मैं तुझे सिखाऊं, सूत्र नेति मैं तुझे कराऊँ ।
सूत्र नेति मैं स्वयं बनाई, करिये इस को लेकर भाई ।
जल से इसको लो तुम सींच, डाल नाक लो मुख से खींच"।
साध ने इमि जभी कर पाया, सिरा नेति का गल में आया ।
अंगुल दो उस गल में डाल, नेति को वहां लीन संभाल ।
मुख से उसने लीनी खींच, फिर लीना उस मुख को मींच ।

दो०—नाक छिद्र जो दूसरा, उससे भी उस कीन ।
स्वामी जी ने देख कर, आशिष उसको दीन ॥ 3507

आगे उसको यह समझाया, घर्षण का भी भेद बताया ।
"मुख से जब तुम नेति निकालो, घर्षण क्रिया भी कर डालो ।
ऐसे ही करो दूसर ओर, यह करो नित्य उठ कर भोर ।
अब लो लोटे में भर नीर, उस में नमक मिला लो वीर ।
लोटा नाक के साथ लगाय, घूंट भरो जल मुख में आय" ।
साध ने कीना जब अभ्यास, पिया उस जल को बिन प्रयास ।
कहा स्वामी "हे मीत सुजान, गजकरणी अब सीखो आन ।
मुख में लो तुम भर कुछ नीर, भूमि ओर झुकाओ शरीर ।
मुख का जल नाक में आये, बहिर वहां से वह बह जाये ।
आंख पर हो इसका प्रभाव, दृष्टि तीव्र होत महाभाव ।

दो०—गज की करणी जो करे, उठ कर नित्य प्रात ।
दृष्टि उस की तीव्र होय, अनुभव की यह बात ॥"*3508

साधु तभी तिस विध ही कीना, मुख में उस जल भर लीना ।
गर्दन को उस निम्न झुकाया, पर जल नाक में न कुछ आया ।
मुख का जल उस वहीं गिराया, स्वामी जी को तब कह पाया ।
"स्वामि ! मैं तो नहीं कर पाया, आप बतायें सरल उपाया ।
जिस से सिद्धि को मैं पाऊं, गजकरणि में सफल हो जाऊं"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, सरल साधन न होते सारे ।
कुछ साधन मांगे अभ्यास, मिले कालांतर सिद्धि खास ।
नित्य करो यह क्रिया भाई, क्रिया यह तब सिद्ध हो जाई ।

दो०—गजकरणी तब हो सके, नित्य करें प्रयास ।
करत करत अभ्यास से, मिलती सिद्धि खास" ॥ 3509

कह ऐसे स्वामी उठ पाये, "प्रात कृत्य तुम हो कर पाये ।
सायंकाल पुनः आ जाना, इस प्रसंग को फिर चलाना ।
नेति क्रिया का कर अभ्यास, साधु के चित्त खास उल्लास ।
नेति का गुण उस पहचाना, क्रिया के उस लाभ को जाना ।
चित्त के उसमें यह समाया, "अंधकार में जग भरमाया ।
नज़ला खांसी और जुकाम, ग्रस रहा जग को प्रात व शाम ।
औषधी के सब पीछे लाग, सरल उपाय है दीन त्याग ।

* लेखक ने 70 वर्ष की आयु में यह क्रिया करनी आरंभ की और 73 वर्ष की आयु होने पर चश्में का नंबर घटते-घटते +3 से +1 तक आ गया ।

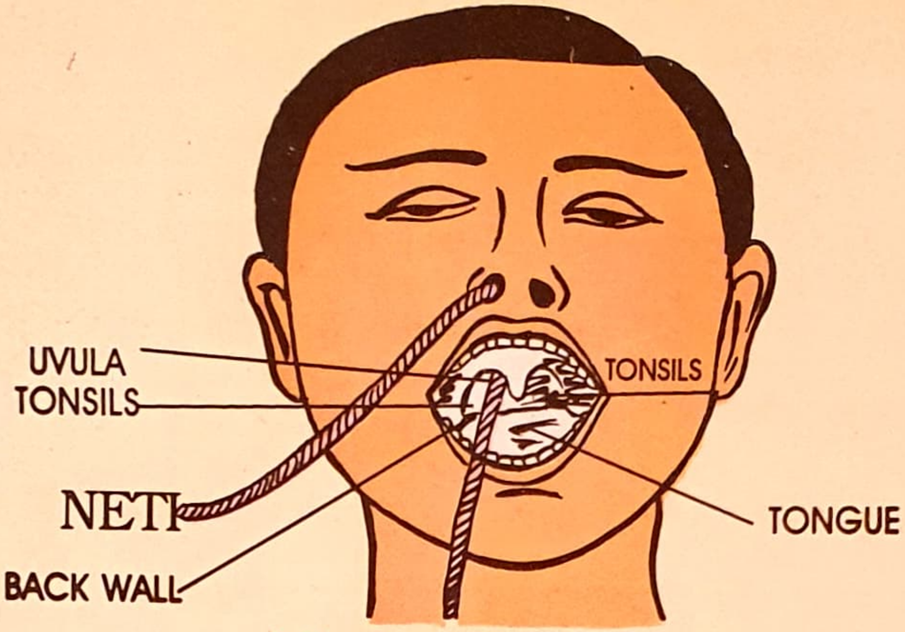


सूत्र नेति क्रिया / SUTR NETI KRIYA

धौति क्रिया / DHAUTI KRIYA

राम लाल का महा उपकार, जिसने कीना योग प्रचार ।
मैं भी अब से यह प्रचारूं, रोगी जन निरोग कर डारूँ"।
दो०—नेती के बहु लाभ को, समझ लिया इमि साध ।
इच्छा उस के मन भयी, लूं मैं योग अराध ॥3510
उसके मन थी इच्छा भारी, गहूं योग की शिक्षा सारी ।
सांय काल भया, वह आया, स्वामी जी को माथ झुकाया ।
उसे नाथ ने पास बिठाया, और उसे मुख से फरमाया ।
"नेति क्रिया का भया बखान, अगली क्रिया अब लो तुम जान ।
धौति क्रिया को जानो मीत, अन्तर शोध की उत्तम रीत ।
धौति अन्तर को है धोती, पेट की शुद्धि इस से होती" ।
कहा साधु "हे मेरे नाथ, सीख यह क्रिया बनूं सनाथ ।
पेट से उपजें प्रायः रोग, ऐसा कथन करें बहु लोग ।
इस क्रिया का करें बखान, श्रवण करूं मैं ला कर ध्यान ।
दो०—धौती क्रिया आप कही, है जो मेरे नाथ ।
वर्णन उसका मैं सुनूं, बैठ आपके साथ" ॥ 3511
कहा नाथ "हे साध प्यारे, राम लाल हैं जग अवतारे ।
उन की किरपा से जो पाया, वह कुछ ही मैं तुझे बताया ।
उन का कथन है मेरे मीत, प्रात करें धौती ला चीत ।
वस्त्र धौति जो जन कर पायें, सूत वस्त्र से उसे बनायें ।
चौडी चार अंगुल हो मीत, पांच मीटर तक लांबी चीत ।
गीली कर उसे निगलें मीत, जाय आमाशय में इस रीत ।

इक सिरा रहे मुख के बाहिर, खींचें जो धीरे से बाहिर।
धौति मल को ले कर आये, अन्तर इमि शुद्ध हो पाये।
दो०—अन्तर शुद्ध होता इमि, धौति से मम मीत ।
इसको कठिन न जानिये, मैं सिखलाऊं रीत ।।3512
प्रात काल जब चल कर आओ, वस्त्र धौति तुम मुझ से पाओ
करोगे मेरे स्वयं समक्ष, और बनोगे इसमें दक्ष"
कहा साध "हे जग के त्रात, मेरे मन इक आई बात
धौति के नहीं भेद बताये, क्या यह कथन में एक ही आये
इस के भी वा रूप अनेक, जिनमें वस्त्र है धौति एक"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, तुम ने वचन हैं ठीक उचारे
धौति एक नहीं है भाई, धौति अनेक कथन में आई
इक का करूं मैं और बखान, सीखनी दोनों प्रातः आन
दो०—एक वस्त्र की धौती है, दूसर जल की जान ।
दोनों हि इक संग करें, ऐसे कथें सुजान ।।351
इन दोनों को सीख लो, आ के प्रातः काल ।
अन्य भेद फिर हम कथें, जभी मिलेगा काल" ।।351
इतना कह कर उठ दिये, योगि सुद्गुरु दयाल ।
सायं थी तब हो चली, नित्य कर्म का काल ।।3513

दिन तीसरा (3)

दो०—रात्रि को विश्राम कर, जागे दीन दयाल ।
साधक गण आने लगे, निश्चित अपने काल ।। 3513

साधु भी तभी आ गया, बैठा था जो शाम ।
पास नाथ के आय कर, कीना उस प्रणाम ॥3513 ङ

नाथ ने उस को आशिष दीनी, "साधन करिये" अनुमति दीनी ।
प्रथम कीन उस सूत की नेति, कीनी पुनः उस जल की नेति ।
गजकरणी फिर करने लाग, सफलता उस पर हाथ न लाग ।
मुख में जल को भर था लीन, सर को नीचे को कर दीन ।
निकला नाक से न कुछ पानी, साध को मन में भयी गलानी ।
स्वामी बोले "साध प्यारे, अभी लगें कुछ और दिहारे ।*
पुनः पुनः ही कर अभ्यास, गजकरणी तब सिद्ध हो खास ।
अब लो धौति मेरे भाई, अन्तर की जो करे सफाई ।
जल से धो कर इस को लाओ, लोटा भर जल भी ले आओ ।
आओ अब तुम को सिखलायें, जिस बिध धौती को जन खायें ।

दो०—इक सिरा लो धौती का, गले बीच लो डाल ।
अंगुल से नीचे करो, जल पियो तत्काल ॥3514 क
खा लवो तुम धौती को, अन्त सिरे तक मीत ।
अन्तिम सिरा न छोड़ना, खींचो वह सप्रीत ॥3514 ख

ध्यान से साधु सब सुन पाया, धौति को उस मुख में पाया ।
जल का भी भर लिया उस घूँट, तुरन्त गया क्रम पर वह टूट ।
धाम से धौति बाहिर आई, दिखाई गले ने जिमि रुसाई ।

* दिहारे = दिन

कपड़े को वह क्यों लंघावे, गला तो मधुर पदार्थ खावे ।
साधु देखा नाथ की ओर, "यह क्रिया नहीं वश है मोर"।
ऐसा कहत कहत रुक पाया, नाथ तभी निर्देश सुनाया ।
"पुनः करो तुम मेरे भाई, करने से यह सिद्ध हो जाई"।
स्वामी जी से पा आश्वास, पुनः पुनः उस कीन प्रयास ।
कुछ कुछ सिद्धी उसने पाई, "कुछ दिन लगें तुझे हे भाई"।
कह ऐसा स्वामी महाराज, कहा "करिये वमन अब आज ।
जल के पियो तुम चार गिलास, करो उलटी हो शुद्धि खास" ।

दो०—साधु ने जल पीय कर, मुख में अंगुल डाल ।
उलट दिया जब सकल जल, कथा तभी निज हाल ।।35
"क्रिया वमन जो तुम कथी, वह सुगम है नाथ ।
स्वस्थ भया है देह मम, और चित्त भी साथ" ।।351

कहा स्वामी "हे साध प्यारे, क्या कहूं गुण वमन के सारे ।
नित करे जो वमन को साध, रोग करे नहीं उस तन बाध" ।
कहा साध "हे योगिराज, लूं कुछ प्रश्न पूछ मैं आज ।
वास धौति संबंधी देव, और वमन के भी कुछ भेव ।
जानन चाहूं आप से नाथ, समझ सकल मैं बनूं सनाथ" ।
कहा नाथ "हे मेरे प्यारे, करने प्रश्न शाम को सारे ।
अब तो वेला बहुत विहायी, नित नियम अब करेंगे भाई ।
नाथ गये निज कक्ष के मांझ, साध पधारा जब भई सांझ ।

दो०—संध्या काल पधार कर, साध कीन, प्रणाम ।
चर्चा चाली योग की, प्रभु चरणि उस शाम ।।3516
कहा साध "हे नाथ प्यारे, प्रश्न मेरे कुछ बड़े न्यारे ।
आज्ञा हो तो करूं निवेदन, तेरे कण्ठी हैं सब वेदन ।
धौति क्रिया के सब भेद, सब सीखूं तुम से बिन खेद ।
दो भेद तुम मुझे सिखलाये, वमन और जो वस्त्र कहाये ।
किस वस्त्र की धौती बनायें, कर कृपा मुझे यह समझायें ।
रेशमी सूती वा हो नालायन, करें किस का इन में से चयन" ।
सुन कर उस के प्रश्न को स्वामी, कहन लगे "सुन साध सुनामी ।
सूत वस्त्र की धौती होय, अंगुल चार ही चौडी सोय ।
दो०—अथवा गुरु आदेश से, धौति लेय सुजान ।
नित्य करे अभ्यास जब, होय सफल पुमान" ।।3517क
कहा साध "हे नाथ जी, यह समझ मैं पायी ।
एक बात अब और है, मेरे मन समाई ।।3517ख
करनी चाहिए नित यह, अथवा जब मन होय ।
धौति क्रिया का प्रभो, भेद बतावो सोय" ।।3517ग
उसकी सुन कर बात को, बोले नाथ सुजान ।
"नित्य करें जो धौति जन, पावें लाभ महान ।।3517 घ
इस क्रिया को नित कर पाना, इस का पूरा लाभ उठाना ।
शोधन का यह मुख्य उपाय, इसे न साधक कभी भुलाय ।

धौति पाछे वमन जो भाई, बहुत रोगों की करे कटाई ।
रोग अनेकों से बच पावे, क्रिया वमन जो जन अपनावे"।
कहा साध "हे गुरु सन्मानी, वमन क्रिया सुगम मैं जानी ।
एक बात मुझ को बतलावें, जल कैसा हो मुझे जनावें ।
नमक मिला जल पीवे योगी, अथवा नमक बिना उपयोगी"।
सुन कर उसकी यह जिज्ञास, कहा स्वामी "प्रश्न यह खास ।

दो०—प्रश्न आप का ठीक है, बहु जन पूछें आय।
नमक मिला जन जल पिये, नहीं व नमक मिलाय ।। 351

निज स्वभाव को जन पहचान, करे वही जिमि होय न हान ।
*नमक मिला जल दस्त लगाये, कब्जशील जन इमि कर पाये ।
जिसे न दोष कब्ज का होय, नमक बिना जल पीवे सोय ।
स्पष्ट बात है क्या हो पायी, और पूछ लो जो मन आयी" ।
कहा साध "हे सद्गुरु देव, स्पष्ट करो इक और यह भेव ।
जाननी चाहूं मैं यह बात, जल शीतल या ऊष्ण हो तात ।
कैसा नीर होय गुणकारी, होय शीतल या ऊष्ण भारी ।
सारी बात यह करें स्पष्ट, संशय जिस विध हो मम नष्ट ।

दो०—जैसा हो निर्देश तव, करूं उसी अनुसार ।
जल शीतल व ऊष्ण लूं, आज्ञा तव शिर धार" ।।3519 क
सुन कर इस जिज्ञास को, बोले नाथ दयाल ।
"प्रश्न बहुत यह काम का, सकल बताऊं हाल ।।3519 ख

* भाव यह है कि जिस को प्रायः कब्ज रहती हो उस व्यक्ति को वमन के जल में नमक मिला लेना चाहिए । ऐसा करने से पेट और आतों की शुद्धि में यह सहायक है ।

प्रथम बात तुम लोय यह जान, अति शीतल व उष्ण महान ।
ऐसा जल नहीं करो प्रयोग, जल सामान्य से सधता योग ।
कफका कोप होय यदि मीत, तब तुम लो नहीं जल जो शीत ।
ऊष्ण नीर का कर प्रयोग, लाभकारी तब होवे योग ।
अन्यथा जल सामान्य ही ठीक, मिला उत्तर तुम को क्या ठीक" ।
कहा साध "है भया संतोष, दूर भयें बहु योग से दोष ।
इसी विषय कुछ और हो ज्ञान, वह भी दें मुझ को भगवान ।
आप से सुन पाऊं जो बात, रहस खुलें बहु योग के तात ।
योग विद्या के रहस महान, पाये गुरु से ही इन्सान ।

दो०—सद्गुरु से ही मिलत है, योग धर्म का ज्ञान ।
सद्गुरु बिन जो जन रहे, किस विध हो कल्याण ।।3520क
मम विनय प्रभु आप से, बतलाओ भगवान ।
धौती के जो भेद हों, उनका करो बखान ।।3520ख

दो भेद तुम प्रभु बतलाये, वस्त्र वमन क्रिया जतलाये ।
उन का मिला मुझ को है ज्ञान, और मैं करके लीं भी जान ।
अन्य भेद भी प्रभु बतलायें, और सकल मुझ को करवायें ।
जग में अन्य कहां मैं पाऊं, योग का जिस से ज्ञान ग्राहूं ।
शरण आपकी मैं हूं आया, कर किरपा तुम ने अपनाया ।
आगे का अब दीजो ज्ञान, कितनी धौतियां हैं भगवान ।
सभी रहस्य मुझे बतलायें, और सभी प्रभु सिद्ध करायें" ।
यह मैं जान लिया भगवान, इस से शुद्ध हो घट महान ।

दो०—धौती से तन शुद्ध हो, व्यापे न तन रोग ।
गुरु योगी को पाय कर, मैं भी रहूं निरोग" ॥3521
कहा स्वामी "हे साध प्यारे, इसके कहूं भेद मैं सारे ।
जिनको सीखो के क्रम वार, कुछ हैं सुगम कुछ कठिन अपार ।
गुरु आज्ञा में रह कर साध, उनको सकल अवश्य आराध ।
*धौति के मुख्य भेद हैं चार, उन को लो चित में तुम धार ।
इन के नाम न जाना भूल, शिक्षा का यह प्रथम असूल ।
अन्तर धौति प्रथम है भाई, दूजी दन्त धौति कहलाई ।
हद् धौती है तीजा नाम, चौथी मूल शोधन अभिराम ।
मुख्य भेद ये चार लो जान, उपभेद पुनः लो पहचान ।
दो०—चार भेद मैं हैं कथे, स्मरण करो मन लाय ।
नाम बिना जो ज्ञान है, अधूरा वह कहलाय ॥3522
इन की शिक्षा देय कर, आगे फिर कथ पांय ।
अब तो भया विलंब है, प्रातः हम मिल पांय ॥3522
साधु ने तब कीन प्रस्थान, स्वामी बैठ गये निज ध्यान ।
दीर्घकाल समाधि लगायें, रामलाल के चरण ध्यायें ।

## दिन चौथा (4)

बीती रात भोर हो पाया, गुरु चरणी जन गण जुट आया ।
साधु भी गुरु चरण में आया, श्रद्धा से निज शीश झुकाया ।
कहा नाथ "तुमको बतलायें, चार धौति के भेद जो आये ।
उन के नाम तुम से सुन पायें, अगला तब प्रसंग चलायें" ।

* धौति के मुख्य चार भेद यें हैं—
1. अन्तर धौति 2. दन्त धौति 3. हृद् धौति 4. मूल शोधन ।

कहा साध "हे योगी राज, स्मरण मुझे है चारों आज ।
पहली धौती थी बतलाई, अन्तर धौती जो कथ पाई ।
दूजी दन्त धौति सुन पाया, कर कृपा जिमी था बतलाया ।
हृद् धौती तीजी का नाम, चौथी मूल शोधन सुख धाम ।
ये तो सभी हैं मुझ को याद, और कथो जो हो इस बाद ।

दो०—भेद चार ये स्मरण हैं, जो बतलाये नाथ ।
केवल इतने भेद हैं, धौति के अधिनाथ" ।।3523 क
उसकी सुन जिज्ञास को, कहन लगे तब नाथ ।
धौति बहु प्रकार की, उपभेदों के साथ ।।3523 ख

अन्तर धौति के जानो भेद, योगी करें उन को बिन खेद ।
* चार भेद इस के हैं आये, वातसार, प्रथम कहलाये ।
दूजा वारिसार कह लाया, जग में जो प्रसिद्ध हो पाया ।
तीजा वह्निसार लो जान, जिस के गुण हैं बहुत महान ।
बहिष्कृत चौथी जानो मीत, सीखो सभी तुम सहित प्रीत ।
अन्तर धौति के ये भेद, रहें स्मरण तुम्हें बिन खेद ।
क्रमशः करें इन का अभ्यास, अन्तर धौति है धौति खास ।
चारों भेद सीख जो जाये, बहुत रोगों से मुक्ति पाये ।
अनुभव की यह जानो बात, लेश न संशय इसमें तात" ।

---

* अंतर धौति के चार भेद ये हैं—

1. वातसार, 2. वारिसार, 3. वह्निसार 4. बहिष्कृत ।

दो०—सुन कर गुरु की बात को, बोला साध सुजान ।
"कौन रोग वे हैं प्रभो, हम भी लेवें जान ॥3524क
धौती कर यदि बच सकें, रोगों से भगवान ।
नित्य करें इस धौति को, साधक सिद्ध सुजान" ॥3524ख

कहा नाथ "हे साध प्यारे, समझे तुम रहस्य ये भारे ।
घट को स्वस्थ वही रख पाये, योग की धौति जो अपनाये ।
अन्तर शुद्धी यह कर पाये, मलों का संचय न हो पाये ।
मल ही सर्व रोगों का मूल, स्मरण रहे यह सदा असूल ।
धौति जो जो कथन में आई, करो नियम से सीख के भाई ।
वातसार अब तुझे बतायें, पहले वह ही हम सिखलायें ।
वायु से हो पेट का शोध, वातसार इसे कहें सुबोध ।
इसकी विधि तुम सुन लो मीत, अभ्यास करो फिर सहित प्रीत ।

दो०—काक चोंच वत होठ कर, भरो पेट में वात ।
कुछ काल वहां रोक कर, पुनः निकालो तात ॥3525क
बार बार जन इसी विध, भरे पेट में वात ।
और निकाले बहिर फिर, पेट शुद्ध हो तात ॥3525ख
आवाशय इमि शुद्ध हो, हो गले का शोध ।
भोजन नाली शुद्ध हो, योगी कथें सुबोध ॥3525ग
*इमि वायु के प्रवाह से, सक्रिय हो पक्वाश ।
पाचन क्रिया सबल हो, दुर्बलता का नाश ॥3525घ

*पक्वाश—अमाशय—Stomach.

अब तुम करके मुझे दिखाओ, कठिन लगे तो स्पष्ट बताओ" ।
कहा साध "हे नाथ प्यारे, स्पष्ट सभी हैं वचन तिहारे ।
क्रिया यह मैं सुगम ही जानूं, कठिन इसे मैं लेश न मानूं ।
होठों का आकार लो देख, और श्वास को भी लो पेख ।
दोष होय तो मुझे बताना, क्रिया और यह शुद्ध कराना ।
क्रिया सुगम और फल बहुनाथ, सीख आप से बनूं सनाथ" ।
इमी कह साधु होठ बनाये, और श्वास उस भर दिखाये ।
क्षण कुछ भीतर रोक के श्वास, निकाले मुख से ही वेश्वास ।
कई बार उस ऐसे कीना, माथ प्रभु पग फिर धर दीना ।

दो०—माथ प्रभु पग टेक कर, कहन लगा "हे नाथ ।
"इस क्रिया को सीख कर, मैं हूं भया सनाथ ॥3526क
अन्तर शुद्धि के सहित, मन भी भया सचेत ।
अद्भुत क्रिया योग की, सुख अपार जो देत" ॥3526ख

कहा नाथ "अब तुझे बतायें, अगली किरया हम सिखलायें ।
इस से भी वह अद्भुत भाई, उस की समता कहीं न पाई ।
उसका नाम है वारिसार, देह की शुद्धि करे अपार ।
सायंकाल जब तुम चलि आओ, वारिसार को जानन पाओ ।
इसके गुण हम तुझे बतायें, इसकी विधि सभी समझायें ।
अब तो वेला बहुत विहायी, नित्यकर्म करने की आयी" ।

ऐसा कह कर सद्गुरु उठ पाये, अन्य भक्त भी सभी सिधाये ।
सायं का जब काल हो आया, गुरु चरणि फिर साधु आया ।
कहन लगा वह कर प्रणाम, "वारिसार जिसका है नाम ।
कैसी क्रिया वह है भगवान, उस का दीजो मुझे अब ज्ञान ।

दो०—जिस के बारे में सुबह, कथन किया तुम नाथ ।
अद्भुत कह पुकारया, सुन अब बनूं सनाथ" ॥3527क
उस की सुन जिज्ञास को, कहन लगे तब नाथ ।
"सचमुच वारिसार को, कर जन होत सनाथ ॥3527ख

वारिसार से कण्ठ हो शुद्ध, करती अन्न नाल भी शुद्ध ।
*आमाशय को करत कलीन, रहत न आंत तो कभी मलीन ।
कहते पेट से उपजें रोग, बात सत्य ही कहते लोग ।
वारिसार क्रिया वह जानो, उदर रोगों की शत्रु मानो ।
पेट के भीतर अंग अनेक, रहत स्वस्थ इससे प्रत्येक ।
*पेट में कृमियों की भरमार, अथवा व्रण से जन लाचार ।
अमल पित्त का होवे दोष, वायु दूषित का हो या रोष ।
वारिसार सभी का उपचार, अनोखा कर्म वारि का सार ।

दो०—वारिसार जन करत जो, तीन मास पश्चात् ।
रहत रोग से मुक्त वह, अनुभव की यह बात" ॥3528

* कलीन (Clean) = शुद्ध, साफ, निर्मल ।

* व्रण—जख्म Ulcer

सुन कर स्वामी का उपदेश, उस मन जगी जिज्ञास विशेष ।
कहन लगा "हे नाथ प्यारे, गुण जाने मैं इस के भारे ।
होत यह कैसी क्रिया देव, इस का भी कुछ कथ दें भेव" ।
स्वामी बोले "हे मम तात, समझ पाओगे न मम बात ।
इस क्रिया के करने हेत, आना प्रात तुम होय सचेत ।
एक बात पर राखिये याद, खाना न मध्याह्न के बाद" ।
सुनकर स्वामी जी की बात, साधु बोला "हे जग त्रात ।
भूख लगे तो क्या कर पाऊं, क्या मैं भूखा ही रह जाऊं ।

दो०—कैसी किरया नाथ जी, वारि की यह सार ।
खाना भी त्यागन पड़े, देय भूख जन मार ॥3529 क
कैसी किरया नाथ जी, वारिसार की होय ।
खाना भी जहां न मिले, भूखा ही जन सोय ॥3529 ख

हे नाथ यदि क्षुधा सताये, पूंछूं क्या तब जन कर पाये ।
क्या वह भूखा ही रह पाय, अथवा कुछ होत और उपाय" ।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, तुम को न अभी इस का ज्ञान ।
इस क्रिया का यही विधान, अन्यथा कर के हो नुकसान ।
प्रातःकाल शीघ्र चलि आना, इस क्रिया को तब कर पाना" ।
साधु तब निज स्थान सिधाया, नाथ जी नित कर्मि मन लाया ।
साध का जानूं भाग्य महान, जिस को मिले सुद्गुरु भगवान ।
जिन के चरण स्पर्श से जीव, भव सागर की लांघे सीव ।
उन से सीख रहा वह योग, उसका भाग्य प्रशंसें लोग ।

दो०—सीखन आया साध वह, प्रभु चरणों में योग ।
उसका भाग्य सराहवें, आश्रम के सब लोग ॥3530

## दिन पांचवां (5)

प्रातः भयी तब साधु आया, प्रभु से विनय वचन कह पाया ।
"हे नाथ ! करूंगा वारिसार, निर्देश करें किस हो प्रकार"।
कहा नाथ "तुम जल भर लाओ, उसको और गरम कर पाओ ।
कटोरी भर नमक भी लाना, इक चमच भी संग ले आना ।
तत्पश्चात तुझे करवाऊं, वारिसार जिस को कथ पाऊं" ।
साध ने आज्ञा मानी सारी, वस्तु सकल ला कर रख डारी ।
संग एक गिलास भी लाया, खुद जो था उसके मन आया ।
स्वामी जी ने जल को देख, छूकर उसके ताप को पेख ।
काफी अधिक था उसका ताप, कहन लगे तब स्वामी आप ।
बोले "शीतल जल कुछ लाओ, उसको और यहीं रख पाओ" ।

दो०—शीतल जल जब लेय कर, आ गया वह पास ।
स्वामी जी ने भर लिया, जल का तभी गिलास ॥3531

शीतोषण जल कर लिया, दोनों जल मिलाय ।
आध चमच तब नमक का, उसमें दीन मिलाय ॥3531

कहा "साध तुम कर लो पान, इस विध करो गिलास दो पान ।
तत्पश्चात तुझे बतलाऊं, कटिचालन की रीत सिखाऊं"।
साध ने आज्ञा नाथ की मान, तीन गिलास जल कीना पान ।
स्वामी तब उसको समझाया, खड़े रहो आदेश सुनाया ।

दोनों पैरों को कुछ खोल, कमर हिलाओ दोनों ओर ।
पेट का जल हिलेगा भाई, शीघ्र आंत में ही वह जाई ।
दस मिनट पश्चात् हे साध, पीना एक गिलास निर्बाध ।
इस विध कमर हिलाते रहना, जल को पीते भी तुम रहना ।
*हाजत हो तो हो तुम आओ, आ कर फिर जल को पी पाओ ।
इस विध करते ही तुम रहना, पुनः पुनः शौचालय जाना ।
जल साफ जब शौच में आये, समझो तभी सफल हो पाये ।
दो०—इस विध अन्तर धोय कर, लेटो जा तुम मीत ।
वारिसार इस योग की, यह सुगम है रीत" ॥3532
स्वामी जी इस विध समझाया, सभी कुछ साधु ने कर पाया ।
गया शौच वह बार छः सात, निर्मल जल निकला साक्षात ।
सद्गुरु को आ उस बतलाया, स्वामी जी उस को कथ पाया ।
"अब साधु तुम लेट ही जाओ, बेशक निद्रा में सो पाओ ।
नींद खुले तो उठ कर आना, जो करना हो तब सुन पाना" ।
सुनकर साध गया इक ओर, जा कर लेटा वह उस ठोर ।
नींद उसे तब ऐसी आई, घंटे बाद ही जो खुल पाई ।
स्फूर्ति विलक्षण तन में देखी, गुरु चरणि आ बात उलेखी ।
दो०—सद्गुरु चरणि आय कर, कहन लगा वह साध ।
"सद्गुरो वारिसार से, मिला है सुख अगाध" ॥3533
कहा स्वामी हे साध प्यारे, वारिसार के गुण बहु भारे ।
वह जन इस से लाभ उठाये, नियमों को जो पाल दिखाये ।

* हाजत होना—पाखाना आना, शौच आना ।

नियम उलंघन जो कर पाये, दुख घने को वह जन पाये ।
सावधान हो अब सुन पाओ, सारा दिन आज कुछ न खाओ ।
खिचड़ी तेरे हेत बनाई, वह लेनी है मेरे भाई"।
खुद लाये तब खिचड़ी नाथ, भरी कटोरी दी उस हाथ ।
उसमें चमच इक घी मिलाया, शुद्ध घी जो गाय का पाया ।
साध ने लीनी खिचड़ी हाथ, और मिलाया घी उस साथ ।

लगा खान जब साध वह, प्रश्न उठा उस चित्त ।
कहन लगा "हे नाथ जी, प्रश्न एक मम चित्त ॥3534

आप से पाना चाहूं ज्ञान, खिचड़ी कैसी बने भगवान" ।
स्वामी जी ने तब बतलाया, खिचड़ी का निर्माण जताया ।
"भाग तीन चावल हों भाई, धुली मूंग की हो चौथाई ।
नमक मिला कर उसे पकाओ, स्वादिष्ट खिचड़ी इमि बनाओ ।
मैंने स्वयं है यह बनाई, सन्मुख तेरे जो रख पाई ।
इस का अब तुम भोग लगाओ, और पुनः जाकर सो पाओ ।
दो घंटे विश्राम के बाद, खिचड़ी पुनः खा लेनी साध ।
भूख लगे यदि फिर किसी काल, खा सकते हो यही तत्काल ।
एक बात न भूलना भाई, जल ताजा लो जब मन आई ।
जल अब ताजा ले कर आओ, बैठ यहां फिर खिचड़ी खाओ ।

दो०—सावधान हो बैठ कर, खाओ खिचड़ी मीत ।
जल को भी तुम पी सको, जैसी मन की प्रीत" ॥3535क

दो०—जैसी आज्ञा थी भयी, वैसा कीना साध ।
खायी खिचड़ी जल पिया, पाया तोष अगाध ॥3535 ख
"अब विश्राम करो फिर जाई", कहा नाथ जी जग सुखदाई ।
"और काम नहीं करना आज, बस विश्राम ही आज का काज ।
कल से कर सकते निज काज, होत परहेज केवल आज ।
हम चले विश्राम के हेत, तुम को भी यही अभिप्रेत" ।
बोला साध, "मम एक सवाल, आज्ञा हो तो करूं इस काल" ।
"हां तुम पूछो मेरे भाई", बोले स्वामी जग सुखदाई ।
साध ने पूछी तब यह बात, "क्रिया करूं यह कब फिर तात ।
गुण महान मैं इसका जानूं, जैसे कहें वही मैं मानूं ।
दो०—जिमि होय आदेश प्रभु, उसी करूं मैं रीत ।
क्रिया इस वारिसार के, गुण हैं भये प्रतीत" ॥3536क
उस की सुन कर बात को, कहा स्वामी दयाल ।
"हर व्यक्ति को चाहिए, करे त्रयबार साल ॥3536ख
वर्ष में त्रय बार कर पाये, बहुत रोगों से मुक्ति पाये ।
मल से उपजें ही सब रोग, निर्मल होवें इस विध लोग ।
निर्मल होवे जभी शरीर, मिले न जन को रोग से पीर ।
एक बात पर लो तुम जान, रोगी के लिए भिन्न विधान ।
जिमि वह गुरु की आज्ञा पाये, रोगी वैसे कर दिखलाये ।
यह बात भी समझ लो भाई, हृदय रोगी को न सुखदायी ।
रक्त चाप का रोगी होय, वह भी इस से नहीं सुख गोय ।
कुछ रोगों में बहुगुणकारी, हर लेत यह सभी बीमारी ।

दो०—शीघ्र हरे यह रोग को, और करत नीरोग ।
इस क्रिया को सीख कर, सुखी भयें सब लोग ॥3537
अब करो तुम जाय विश्राम, आ जाना फिर जब हो शाम ।
क्रिया और जो योग की होय, वर्णन में वह आयगी सोय ।
धौति क्रिया का यह प्रसंग, और जो धौति के बहु अंग ।
उनका वर्णन तब हो पाय, सायं की जब वेला आय"।
कह इतना स्वामी उठ पाये, निज कक्ष में वहां से आये ।
प्रभु मूरत को कर प्रणाम, बैठ गये वहां सुख के धाम ।
प्रभु किरपा को सोचन लागे, और रहे उस धुन में पागे ।
स्मरण हो जब प्रभु की दाया, उनको विसरे जग की माया ।
दो०—जग की माया विसर कर, रहे प्रभु पग लाग ।
प्रभु से उन का प्रेम था, जग से न अनुराग ॥3538
गयी प्रात दोपहर विहायी, सायं की फिर वेला आयी ।
वही साधु फिर आन पधारा, चित्त जिज्ञासु उसका भारा ।
आकर उस कहा "मम स्वामी, तुम सर्वज्ञ व अन्तर्यामी ।
आप जानें मम जो जिज्ञास, योग की लागी मुझ को आस ।
आगे का अब योग बतायें, कर किरपा सब विध समझायें"।
सुन कर उसकी बात को नाथ, कहन लगे "मैं कहूं इक गाथ ।
एक पुरुष था आश्रम आया, मन्दाग्नी ने उसे सताया ।
अल्पाहार भी न पच पाये, पेट की वायु उसे सताये ।
दो०—दुखी रहत उस रोग से, कृश भया था गात ।
कर कर बहु उपचार वह, आ गया इक प्रात ॥3539

आकर उस निज विथा सुनायी, व्याधी निज तन की बतलायी ।
बोला मैं हूं शरणी आया, करो कृपा मैं बहु दुख पाया" ।
साधु श्रवण कर इतनी गाथ, लागा कहन "हे सद्गुरु नाथ ।
साधन कौन उसे करवाया, जिस से उस का दुःख दुराया ।
वह क्रिया मुझ को बतलाओ, इस शरणागत को समझाओ" ।
कहा स्वामी "हे साध प्यारे, उस क्रिया के गुण बहु भारे ।
'बह्निसार' उस का अभिधान, जैसा नाम वैसा गुण जान ।
होय प्रदीप्त उदर में ज्वाल, जठराग्नि वहां रहे सब काल ।
यही क्रिया उसको करवाई, जठराग्नि उद्दीप्त हो पाई ।

दो०—वह्निसार प्रभाव से, पच जाता जो खात ।
कुछ दिन के अभ्यास से, भया पुष्ट था गात" ॥3540

साध सुनी आश्चार्य समाना, स्वामी जी को पुनः बखाना ।
"नाथ मुझे भी वह सिखलाओ, वह्निसार मुझको करवाओ ।
मन्दाग्नि से जिमि मिले त्राण, दुर्बल देह न हो भगवान" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, विलंभ भया अब चलें द्वारे ।
प्रातःकाल जभी तुम आओ, वह्निसार को सीखन पाओ" ।
कह इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।
साध गया यह ले कर आस, प्रात सीखूं मैं क्रिया खास ।
रात्री गयी भोर हो पायी, आयी आश्रम में जगतायी ।
सब जन साधन करने लागे, योग भक्ति के रस में पागे ।

## दिन छटा (6)

दो०—नेति धौति सब करें, मुद्रा प्राणायाम ।
स्वामी के आदेश से, आकर सद्गुरु धाम ॥ 3541

नाथ ने साधु को बिठलाया, और उसे यह नेम बताया ।
"चाहिए करना नित अभ्यास, स्वस्थ रहना जो चाहो खास ।
साधन को जो जीव भुलाये, बिन बुलाये ही व्याधि आये ।
आजीवन जो पाले नेम, मिले प्रभु से योग व क्षेम ।
जन जो योग को देय भुलाय, जीवन में वह दुःख ही पाय ।
मेरी शिक्षा यह है साध, आजीवन तू योग आराध ।
जो कुछ सीखो आश्रम मांझ, नित्य करो तुम प्रातः सांझ ।
भूल के भी न त्यागो नेम, यदि चाहो तुम अपना क्षेम ।

दो०—भूल के भी न छोड़ना, नेम योग का साध ।
प्रभु की जग को सीख यह, लो योग आराध ।।3542
रहे योग आराध जन, सुखी रहे सब रीत ।
त्यागे जब जन योग को, भये भाग्य विपरीत ।।3542
अब क्रिया वह सीख लो, जिस का कीन बखान ।
वह्निसार जिस को कहें, है सुगम लो जान ।।354

वह्निसार है उदर हिलाना, भीतर बाहिर इसे चलाना ।
ऊषणता इस विध बढ़ पाये, पाचन कर्म तीव्र हो जाये ।
अथवा आंत में हो अवरोध, उस का भी हो इस विध शोध ।
बैठ पेट तुम खींचो भीतर, फिर वह बाहर धकेलो शीघ्र ।

पुनः उसे भीतर कर पाओ, फिर उसे तुम बाहर बढ़ाओ ।
बीस बार करो इसी रीत, करो न इससे कुछ विपरीत ।
अब यह क्रिया हमें दिखाओ, जिमि बतलाया पेट हिलाओ" ।
बैठ साध ने पेट हिलाया, स्वामी जी ने तब फरमाया ।
"तुम ने क्रिया ठीक ली जान, एक रहस्य अब करूं बखान ।
इस के दो प्रकार तुम जानो, इक सांस को रोक पहचानो ।
अन्य श्वास प्रश्वास सहित, जान दोनों को साधनवित ।

दो०—दोनों विधियां जानकर, कर उनका अभ्यास ।
साधन-विद् तुम बन सको, मेरा यह विश्वास" ॥ 3543

कहा साधु "हे मेरे नाथ, प्रथम विधि कह करो सनाथ ।
श्वास रोक किस विध कर पाते, और पेट को किमि चलाते" ।
स्वामी बोले "प्यारे साध, समझ इसे फिर लो आराध ।
जहां का तहां सांस लो रोक, और हिलावो पेट बे टोक ।
कर दिलावो मेरे मीत, जानूं तुझे योग से परीत" ।
साधु बात समझ सभी पायी, और क्रिया वह कर दिखायी ।
स्वामी जी संतोष जताया, अगली किरया का समझाया ।
"अगली किरया अब बतलाऊं, उसे मैं कुछ कठिन ही पाऊं" ।

दो०—अगली किरया कठिन है, करनी मन तुम लाय ।
उसका हो अभ्यास ही, और न अन्य उपाय ॥ 3544

जभी पेट अन्दर को जाये, श्वास निकल तब बाहिर पाये ।
तुरंत सांस भीतर को आये, पेट निकल बाहर को पाये ।

इस विध लो आठ दस ही श्वास, रुक जाओ फिर सह विश्वास ।
चार बार ऐसा कर पाओ, और तभी तुम रुक ही जाओ ।
अब तुम मुझ को करते देखो, सावधान हो इस को पेखो" ।
पद्मासन में हो आसीन, श्वास को उन तब बाहर कीन ।
पेट पीठ के संग जा लाग, जैसे डरकर वह गया भाग ।
पर वहां नहीं रुक वह पाया, श्वास चढ़ा तो बाहर आया ।
कई बार स्वामी यह कीन, और साधु को फिर कह दीन ।

दो०—"करिये अब तुम साध जी, हमें दिखाओ तात ।
यह साधन अभ्यास से, ही सिद्ध हो जात" ॥ 3545

पद्मासन में हो आसीन, करन लगा वह साध प्रवीन ।
भीतर जब उस पेट दबाया, स्वतः सांस तब बाहिर आया ।
जभी उदर को बाहिर कीना, सांस तभी उस भीतर लीना ।
इमि वह वेग सहित कर पाया, स्वामी जी को था दिखलाया ।
कहा स्वामी "जिमि तुम कर पाय, यही करने का ठीक उपाय ।
करे जो इस का नित अभ्यास, सिद्धि मिले उस को तब खास ।
पेट अधिक पीछे को जाये, पूरण लाभ तभी हो पाये ।
पेट के अंग प्रत्यंग अनेक, स्वस्थ भयें इस विध हर एक ।

दो०—अंग अनेकों पेट के, स्वस्थ रहें इस रीत ।
उन अंगों की साध जी, सब को नहीं प्रतीत ॥3546 क
इस कारण करते रहो, इस का नित अभ्यास ।
मार्मिक सारे अंग वे, स्वस्थ रहेंगे खास ॥3546 ख

यदि चाहो कुछ पूछना, लो पूछ तुम शाम ।
अब तो भया विलंब है, जाकरें कुछ काम" ॥3546 ग
स्वामी जी तब उठ कर आये, नित्य कर्म में वे लग पाये ।
प्रभु की आरति करने लागे, अद्भुत मस्ती में वे पागे ।
घोष स्वर में गाते गीत, उत्कट उपजत चित में प्रीत ।
श्रवण करत जो होत विभोर, गायन सुनें जन सायं भोर ।
भक्त आ करते गुरु का संग, ग्रहण करें सतसंग का रंग ।
प्रश्न करें वे उत्तर पाते, मन के संशय सकल मिटाते ।
गुरु से पाते ज्ञान उजाला, भ्रांत मती का खुलता ताला ।
प्रातः सायं नेम निभाते, गुरु से ज्ञान निरन्तर पाते ।
दो०—गुरु से पाते ज्ञान वे, आकर सायं प्रात ।
सद्गुरु को वे मानते, ज्ञान दीप साक्षात ॥3547 क
प्रश्न भक्तों ने था किया, "हे गुरु महाराज ।
समझ आये न बात इक, आप बतायें आज ॥3547 ख
आयु भर बहु ध्यान लगाते, चित्त की स्थिरता को न पाते ।
उधेड़ बुन में जीवन जाये, मन तो वश में लेश न आये ।
किमि सकें कर चित्त निरोध, यह पायें हम आप से बोध ।"
सुन शिष्य की तार्किक बात, कहन लगे श्री सद्गुरु तात ।
"कर प्रश्न जो तुम है पाया, निशाने पर है तीर चलाया ।
जब तक सुलझे न यह सवाल, जीवन बीते हाल बेहाल ।
योग शास्त्र का यही उद्देश, चित्त किमि आये जन के पेश ।
इस पर करें फिर कभी विचार, स्मरण कराना तुम उस काल ।

दो०—अभी समय है हो गया, मध्याह्न का मीत ।

आहार व विश्राम हित, करे हमारा चीत" ।। 3548

ऐसा कह सद्गुरु उठ पाये, अपने कक्ष में चल कर आये ।
भक्त भी चले गये उस काल, अपने मन को जरा संभाल ।
सद्गुरु चरणों से बिछुडाई, सहन करे न शिष्य इक राई ।
स्वामी जी तब कीन आहार, और भी कीना निज उन कार ।
ध्यान मग्न रह कारज करते, खाते पीते फिरते चलते ।
विश्राम काल भी प्रभु का ध्यान, रहत विशेष न जग का ज्ञान ।
सायं काल जभी चलि आई, साधु वही चलि दीखा आई ।
आ कर उस ने दण्डवत कीन, स्वामी जी ने आसन दीन ।

दो०—बैठ चरण में नाथ के, कहन लगा "हे देव ।

ज्ञान योग का है मिला, रहूं आप की सेव ।।3549

आगे का जो ज्ञान हो, वह बतलावें नाथ ।

आकर आश्रम में प्रभो, योग करूं सब साथ" ।।3549

कहा नाथ "तुम को बतलाऊं, अगली किरया मैं समझाऊं ।
बहिष्कृत धौति उस का नाम, उसकी विधि मैं कथूं तमाम ।
क्रिया कठिन यह जानो भाई, मास बहु में सिद्ध हो जाई ।
इसकी विधि समझो इस काल, करनी तुम आ प्रातः काल ।
दीर्घ काल जो करे अभ्यास, उस को ही यह सिद्ध हो खास ।
वातसार धौति जो बताई, उसके सम ही है यह भाई ।
मुख से वात को कर के पान, रोके जन वह उदर में प्राण ।
मुख से ही जब उसे निकाले, किरया वातसार कर डाले ।

दो०—वातसार सम ही क्रिया, बहिष्कृत धौति जान ।
उस से दशगुण जानिये, है यह कठिन महान ॥3550क
गुण भी उस से दश गुणा, समझ लवो मम मीत ।
साध सको तो साध लो, दृढ़ कर अपना चीत ॥3550ख
प्रातकाल जब आओगे, सब समझाऊं बात ।
बहिष्कृत धौति नित्य ही, रहना करते तात ॥3550ग
इतना कह कर उठ दिये, सद्गुरु दीन दयाल ।
साधु भी तब चल दिया, निज झुका कर भाल ॥3550घ

## दिन सातवां (7)

बीती रात भोर हो पाई, लीनी जगती ने अंगड़ाई ।
हुई चहल पहल सभी ओर, जन आए तब नाथ के ठोर ।
लागे करन निज निज अभ्यास, चढ़ावें कई ध्यान में श्वास ।
स्वामी जी सब को सिखलावें, विधि योग की स्वयं बतलावें ।
और बतावें खास इक बात, रहस्य जो जग को न विज्ञात ।
पुरातन योग भया था लुप्त, वन प्रदेश में रह कर गुप्त ।
जन साधारण को नहीं ज्ञात, होता क्या है योग मम तात ।
राम लाल जब जग में आये, अपने संग योग को लाये ।
जन साधारण को समझाया, जनता को उन योग कराया ।
और बताया सब के ताहीं, बड़ा योग से कुछ भी नाहीं ।

दो०—यदि चाहे संसार सुख, साधन कर ले योग ।
त्यागा जब से योग को, व्यापा जग में रोग ।।3551
करे योग जन भये सुखारी, रहत योग से परे बिमारी ।
जनता को प्रभु जी बतलाया, धर्म सनातन उन समझाया ।
सनातन धर्म यही है मीत, योग साधन से कर लो प्रीत ।
धर्म का यही प्रथम आधार, स्वस्थ रहे देह सब प्रकार ।
चित्त एकाग्र दूज उपाय, यह तो योग से ही हो पाय ।
इष्ट की साधना उस उपरान्त, बैठ करे जन जाय एकान्त ।
पा कर गुरु से ही निर्देश, योग करे जन शुद्ध प्रदेश ।
तन के साधन मन का योग, निरोग रहें तब सारे लोग ।
ऐसे साधन प्रभु बताये, जग ने थे जो सकल भुलाये ।
स्वामी जी यह सब समझाया, साधु भी तभी चल कर आया ।
बैठ गया वह कर प्रणाम, और कहा उस "हे सुख धाम ।
बहिष्कृत क्रिया का अभ्यास, बैठ करूं मैं आपके पास ।
दो०—क्रिया कठिन जो तुम कही, मैं करूं चित्त लाय ।
गुरु चरणों में बैठ कर, कठिन सरल हो जाय" ।।35
कहा नाथ "हे साध प्यारे, साधन सुगम उसे हों सारे ।
गुरु पर जिसको हो विश्वास, और सिद्धि की राखे आस ।
करे निरन्तर, धैर्य न छोड़े, योग से कभी भी मुख न मोड़े ।
दीर्घ काल तक कर अभ्यास, अवश्य मिले तब सिद्धि खास ।
लो तुम्हें हम विधि बतलायें, बहिष्कृत धौति अभी करायें ।
बैठो पद्मासन को लाय, अथवा तुझे जो हो सुखदाय" ।

पद्मासन तब साध लगाया, समक्ष बैठ नाथ के पाया ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, मुख से करो तुम वायु पान" ।
कहा साधु "हे योगि महान, किस विध करें पवन का पान ।
विशेष विधि यदि हो कुछ नाथ, वह भी कथ दें इसके साथ" ।
कहा नाथ "तुम जिमि कथ पाय, वही बताऊं तुझे उपाय ।
काक चञ्चु वत होठ बनाओ, उन पाछे जिह्वा धर पाओ ।
मुख से वायु खींच दिखलाओ, साथ पेट को भी फैलाओ ।
दो०—मुख से वायु खींच कर, भरो उदर इक बार ।
रुकी रहे वह उदर में, शक्ति के अनुसार" ॥3553
साध ने वैसे ही कर पाया, पेट को उस ने खूब फिलाया ।
बैठ श्वास रोक कुछ काल, बताया फिर उस अपना हाल ।
"बहुत नाथ इसमें कठिनाई, सांस रुके तो मन घबराई ।
क्रिया यह मैं नहीं कर पाऊं, अपने को असमर्थ हि पाऊं" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, समझे रहस न तुमने सारे ।
सांस को रोको न तुम भाई, सांस रुके तो मन घबराई ।
पेट फूले, सांस चल पाय, समझ पाओ तुम यही उपाय ।
देखो कर के यह अभ्यास, रुकता तो नहीं तेरा श्वास ।
दो०—ज्ञान मिले अभ्यास से, अन्यथा वह न होय ।
करत करत अभ्यास से, सिद्धि योग में गोय ॥3554 क
मान नाथ की बात को, यत्न पुनः उस कीन ।
तब भी सिद्धि न भयी, भया था मन मलीन ॥3554 ख

उस की विवशता को तब देख, निज मुख से पुनः नाथ उलेख ।
"साध समझो अब मेरी बात, पूरा श्वास न चाले तात ।
उपरि श्वास ही तुम चलाओ, नीचे का तुम रोक हि पाओ ।
इस विध कर के निज अभ्यास, बात बतानी होय जो खास" ।
उसने समझ पायी जब बात, कीना वैसे बैठ साक्षात ।
सुख से बैठ पाया कुछ काल, पुनः बताया अपना हाल ।
"बैठा रहा मैं चित्त टिकाय, और राखा मैं पेट फिलाय ।
रोका था नहीं मैं ने श्वास, बाध भी नहीं उपजी खास ।
एक बात मैं जानना चाहूं, कितना काल मैं बैठ दिखाऊं ।
वेला कितना बैठ दिखावे, अधः मार्ग जब वायु जावे ।

दो०—वेला कितना बैठ कर, जन करे अभ्यास ।
बहिष्कृत धौति में उसे, मिले सिद्धि जो खास" ॥3555

कहा स्वामी "हे साध सुजान, कठिन क्रिया इस को लो जान ।
शनैः शनैः अभ्यास बढ़ाओ, दीर्घ काल में सिद्धि पाओ ।
घण्टे भर का हो अभ्यास, अवश्य मिले तब सिद्धि खास" ।
सुन कर सद्गुरु का उपदेश, धैर्य छोड़ा नहीं साधु लेश ।
*बैठ गया वह फिर इक बार, मानी नहीं उसने कुछ हार ।
बहुत समय जब बैठ दिखाया, स्वामी जी मुख से फर्माया ।

* देखो घेरण्ड संहिता—I.22
काकीमुद्रां शोधयित्वा पूरयेदुदरं महत् ।
धारयेदर्धयामं तु चालयेद् धोवर्त्मना ॥
अर्थात—कौवे की चोंच के समान ओठों को कर के उन के द्वारा वायु पान करता हुआ उदर को भर ले। उस किये हुए वायु को आधे पहर तक (डेढ़ घण्टा) पेट में रोक कर परिचालित करता हुआ अधोमार्ग से निकाल दे।

"चिरञ्जीव तुम हो अधिकारी, अवश्य मिलेगी सिद्धि भारी ।
अब तो वेला बहुत विहाया, चलें यही है मन में आया ।
निराहार करना अभ्यास, करो निरन्तर रख विश्वास" ।
इतना कह नाथ उठ पाये, सब साधक भी तभी सिधाये ।

दो०—चल कर आये नाथ जी, निज कक्ष के मांझ ।
लगे रहे निज कर्म में, जब तलक भयी सांझ ॥3556

सांझ भयी पुनः साधु आया, आकर उसने माथ झुकाया ।
कहा "प्रभु मैं धन्य हो पाया, दिव्य योग जो तुम से पाया ।
बहिष्कृत धौति को मैं मानूं, सम संजीवन औषध जानूं ।
करता रहूं इसका अभ्यास, प्राप्त करूं जिमि सिद्धि खास ।
आगे की कुछ और स्वामी, क्रिया बताओ अन्तरर्यामी ।
ऋषियों ने जो ज्ञान सिखाया, जग में अन्यत्र न दिख पाया" ।
कहा नाथ "तू ठीक पहचाना, योग समान न अन्य ज्ञाना ।
ऋषियों की यह विद्या भारी, राम लाल ने जग प्रचारी ।

दो०—राम लाल ने जगत में, आ प्रचारा योग ।
आश्रम निर्मित कर गये, लाभ उठावें लोग ॥3557 क
अगली क्रिया योग की, दन्त धौति है नाम ।
रोग रहित जिमि दांत हों, करते लोग तमाम ॥3557 ख
कीकर अथवा नीम की, दातुन मेरे मीत ।
उत्तम दातुन है कही, गुणकारी बह चीत ॥3557 ग

दांतुन को जन खूब चबाये, जिस विध उसका ब्रुश बन पाये ।
उसको फेरे दांतुन ऊपर, और मसूड़ों के भी ऊपर ।
धीरे धीरे इसे चलाये, जल से फिर कुलियां कर पाये ।
यह है दन्त धौति कहलाती, इस से बहुत शुद्धि हो पाती"।
सुन कर स्वामी जी की बात, कहन लगा तभी साधु "तात ।
यह तो प्रति दिन हम कर पावें, अपनी मति जन कई जतावें ।
*वे टुथ पेस्ट का गुण जताते, दातुन से बढ़ कर कह पाते ।
तेरा निर्णय जो हो स्वामी, मान्य वही हो अन्तर्यामी ।

दो०—सुनें आप से जो प्रभो, लें वही हम मान ।
भ्रांती सब की दूर हो, सत्य बात को जान" ॥3558

साधु से जभी यह सुन पाया, स्वामी अपना मत जतलाया ।
सब के हित की बात बताई, हर इक जन को जो सुखदाई ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, तुमने पूछा प्रश्न महान ।
इसमें संशय नहीं है भाई, नूतन वस्तु जगत अपनाई ।
नूतन पुरातन न हम देखें, गुण दोष से सब कुछ पेखें ।
गुण दोष सब ध्यान से देख, करेंगे हम निज मत उल्लेख ।
दातुन के गुण अधिक ही जानूं, कुछ विशेष मैं यहां बखानूं ।
दातुन को जभी हम चबावें, सबल मसूड़े तब हो पावें ।
नीम की दातुन हो वा कीकर, दोनों मसूड़ों को हि हितकर ।
मसूड़ों के जो रोग विशेष, करती नीम उन्हें निःशेष ।
कीकर का भी रस जो भाई, वही मसूड़ों को सुखदाई ।

* टुथ पेस्ट—TOOTH PASTE

दो०—इस कारण तुम साध जी, दातुन करो हमेश ।
इस के गुण तो बहुत हैं, कथन किये हैं लेश ।।3559

इक किरया मैं और बताऊं, धौति जिह्वामूल कह पाऊं ।
करत कण्ठ का शोधन भाई, जिह्वा भी सशक्त हो जाई ।
वाणी मधुर सबल हो पाये, तुतलाने का रोग नशाये" ।
सद्गुरु की यह सुन कर वाणी, साध कहा "हे प्रभु सन्मानी ।
इस धौति को करते कैसे, प्राप्त हों गुण कथे हैं जैसे" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, साधन समझो कर के सारे ।
बिना किये नहीं मिलता ज्ञान, पच पच चाहे मरे इन्सान ।
प्रातः काल तुझे बतलायें, और यह साधन संग करायें ।

दो०—काल प्रातः आय कर, करनी जिह्वा मूल ।
कैसे इस को करत हैं, बतलायें असूल ।।3560 क

## दिन आठवां (8) (प्रातः)

दो०—आज्ञा पाकर चल दिया, जिज्ञासु वह साध ।
भोर भयी तब आ गया, ले मन प्रेम अगाध ।।3560 ख

साधु ने आ कीन प्रणाम, और कहा सब को जय राम ।
बैठ गया प्रभु चरणि में आय, गुरु के पग निज दृष्टि जमाय ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, मैं जानूं जो भाव तिहारे ।
जिह्वामूल जो थी कथ पायी, वह धौति मैं कहूं अब भाई ।

*जिह्वा के दो नाम लो जान, 'इन्द्रीवाक' 'रसना' पहचान ।
वाणी का गुण सब जन जानें, स्वाद क्रिया भी कम न मानें ।
इसका महत्व इसी से जान, गुण कारी यह क्रिया मान ।
शोधन बहुत सरल यह भाई, करने में न लेश कठिनाई ।

दो०—त्रय अंगुल तुम कण्ठ में, डालो मेरे मीत ।
जिह्वा के तब मूल को, शुद्ध करो सप्रीत ॥3561 क
बैठो जल के पास तुम, मन को कर के शांत ।
धीरे धीरे फिर मलो, जिह्वा मूल प्रांत ॥3561 ख
नस नाड़ी जो जीभ की, होवे सक्रिय साध ।
कफ रहित हो कण्ठ भी, शोधन से निर्बाध ॥3561

साध तभी जल पास सिधाया, अपना आसन वहां लगाया ।
जल से साफ किया निज हाथ, मुख में डाला धैर्य के साथ ।
जीभ का पृष्ट भाग मल पाया, ऊपर नीचे से कर पाया ।
खींचा जिह्वा को कई बार, निर्मल होय जिमि सब प्रकार ।
फिर नाथ के पास वह आया, जिमि कीना था सब कथ पाया ।
और कहा "हे स्वामी मेरे, इस धौती के लाभ घनेरे ।
मुख निर्मल इस से हो पाये, बिगड़ा स्वाद लौट के आये ।
एक बात मैं पूछन चाहूं, क्रम किस से साधन कर पाऊं ।

---

* जिह्वा के दो नाम इसलिए हैं क्यों कि उस के दो काम हैं—
1. बोलने से वह 'वाक इन्द्री' कहलाती है ।
2. रस ग्रहण करने के कारण वह 'रसना' नाम से जानी जाती है ।
अतः जिह्वा मूल धौति का महत्व विशेष है ।

दो०—क्रम साधन का जो प्रभो, वह बतलायें आप ।
क्रम उसी से सब करूं, निर्देश जिमि दें आप" ॥3562क
सुन कर उस की बात को, कथन किया भगवान ।
बात आप की ठीक है, सुनिये लाकर ध्यान ॥3562ख
सूत नेति तो प्रथम हो, जल नेति उस बाद ।
वस्त्र धौति को फिर करो, वमन करो तब साध ॥3562ग
पाछे जिह्वामूल हो, इसका लाभ महान।
*कपाल रन्ध्र तुझे कहूं, श्रवण करो ला ध्यान ॥3562घ
*तालु पाछे रन्ध्र इक, रन्ध्र नाम कपाल ।
उसका शोधन जब करें, स्वस्थ रहें हर हाल ॥3562ङ
शुद्ध रहे यदि रन्ध्र यह, सर भी रहत स्वस्थ ।
रुका अगर यह रन्ध्र हो, रहता सर अस्वस्थ ॥3562च

कपाल रन्ध्र यदि न धुल पाये, सर का मल सर में रह जाये" ।
सुन नाथ की साध ने वाणी, कहन लगा "हे जग कल्याणी ।
नयी बात मैंने सुन पायी, सर में भी क्या मल रह पायी ।
सर को शुद्ध बुद्ध हम मानें, इसे सदा हम निर्मल जानें ।
कहां से मल वहां चलि आयें, जिस हेतु आप कहें उपाय"।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, तुझे न देह क्रिया का ज्ञान ।

---

* कपाल रन्ध्र धौति ।
* रन्ध्र—छिद्र

तन का कण कण मल को त्यागत, शुद्ध हो फिर कर्म में लागत ।
प्रवाह रुधिर का तन में होय, इसी से प्रति कण शुद्धि गोय ।
दो०—अशुद्धि देह में न रहे, नियम रचा भगवान ।
रन्ध्र देह में जो रचे, रखते खुले सुजान ॥3563
रन्ध्रों से मल बाहर आये, इस विध तन स्वस्थ रह पाये ।
देह का हित इसी में चीन, रन्ध्र रहें नहीं कभी मलीन ।
कपाल रन्ध्र न रहे मलीन, वही धौति अब लो तुम चीन ।
उसकी विधि है इस विध भाई, अंगूठे से लो कर सफाई ।
अंगूठे का कर के प्रवेश, मल मल कर करो शुद्ध विशेष ।
स्वच्छ रन्ध्र जब इमि हो पाये, चेतनता मस्तक में आये ।
अब कर लो तुम जा कर भाई, जैसे मैं अभी विधि बताई ।
फिर तुम आकर मुझे बताना, अनुभव अपना स्पष्ट सुनाना ।
दो०—धौति रन्ध्र कपाल की, गुण कारी लो जान ।
अब करो फिर नित्य करो, इस का लाभ महान ॥ 356
साधु ने तभी आज्ञा मानी, तुरत गया वह गुरु सन्मानी ।
बैठ गया जा जल के पास, डाल अंगूठा सह विश्वास ।
कपाल रन्ध्र को मलने लाग, और अंगूठा धो फिर डाल ।
तीन बार उस ऐसे कीन, गुरु के चरणि तब आ आसीन ।
कहन लगा "हे नाथ प्यारे, योग के साधन बड़े न्यारे ।
यह धौति तो सुगम ही जानूं, इसके लाभ बहुत पहचानूं ।
इस के करने से हे नाथ, प्रसन्न भया है मेरा माथ ।
मल का शोधन भया विशेष, श्वास में रही न बाधा लेश ।

दो०—ऐसा सुगम उपाय यह, जिसका लाभ महान ।
तेरी किरपा से मिला, हे मेरे भगवान ॥3565 क
शब्द नहीं वे पास मम, प्रकट करूँ आभार ।
सेवा भी क्या कर सकूं, हे मेरे करतार" ॥3565 ख

कहा नाथ "हे साध सुजान, राम प्रभु की दया महान ।
योग हेतु जिन लीन अवतार, जगत को दीना ज्ञान अपार ।
लुप्त भया था योग का ज्ञान, दीना जग को प्रभु ने आन ।
अब तो वेला बहुत विहायी, यह क्रिया तुम है कर पायी ।
जाओ अब जा करो निज काम, हम भी करेंगे अब विश्राम ।
सांय को जब आओ गे मीत, बात बतानी जो तव चीत ।
कह इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में तब सिधाये ।
नित्य कर्म में स्वामी लागे, मध्याह्न कर्म फिर करने लागे ।

## दिन आठवां 8 (सायं)

दो०—मध्याह्न कर्म से निपट कर, लगे करन विश्राम ।
तभी वह साधु आ गया, जभी भयी थी शाम ॥3566क
कीनीं आ प्रमाण उस, चरणि भया आसीन ।
गुरु की आशिष पाय कर, तभी विनय उस कीन ॥3566ख

"धौति कपाल प्रभु सिखलाई, सुगम रीति से जो कर पाई ।
बात एक मम मन में आये, अगर न जन उस को कर पाये ।
उस को हानि क्या हो पाये, दुःख कौन वा उसे सताये ।
साधन से तो लाभ घनेरा, करूँ न तो, क्या बिगड़े मेरा" ।

युक्ति सुनी जब उसकी नाथ, कहन लगे धर माथ पै हाथ
"हे साध तुम नहीं पहचानों, मल रुकने की हानि न जानो
रुका हुआ मल विपदा लाये, जीवन को दूभर कर पाये
देह का अंग कपाल विशेष, राखिये उसको शुद्ध हमेश

दो०—रुके जो मल कपाल में, भय दायक परिणाम ।
जीवन संशय में पड़े, निश्चय से लो जान ॥356

रुका मल सर पीड उपजाये, अपस्मार इस से हो जाये
रुका मल रसौली बन जाये, जीव चैन न इक पल पाये
शुद्धि कपाल नित्य कर पावो, इन संशयों से मुक्ति पावो
सुन कर स्वामी जी की बात, कहा साध "हे जगत त्रात
ध्यान में आयी अब भगवान, राम प्रभु की दया महान
पीडा दें जो जग को रोग, उनकी रोक अब सीखें लोग
सरल रीत ऐसी बतलाई, मेरी समझ में झट जो आई
एक बात मैं और लूं जान, और भी साधन कुछ भगवान
कपाल की शुद्धि हेतु नाथ, प्रभु दीने जग करन सनाथ

दो०—जो भी साधन हों प्रभु, मुझे वे दें बतला ।
वे भी आकर मैं करूं, चित्त चरणों में ला" ॥3568

सुनी जब साधु की जिज्ञास, योग में जिस का था विश्वास
स्वामी जी तब इमि कथ पाये, "तेरे मन विचार जो आये
हे साधो वे हैं उपयोगी, वही पूछे जो हो जन योगी
जानन चाहो योग की बात, प्रभु की सीख बतलाऊं तात

कपाल की शुद्धि जिसने कीन, सुरक्षित उस निज बुद्धि कीन ।
कपाल शुद्ध तभी बुद्धि ठीक, अशुद्ध कपाल, बुद्ध अलीक ।
बुद्धि अलीक भ्रम उपजावे, असत भी उसे सत दिख पावे ।
उस की बुद्धि टिके नहीं नेक, अतः जनयोग करे प्रत्येक ।

दो०—इस कारण सब ही करें, निज कपाल को शुद्ध ।
शुद्ध होवे कपाल जब, ठीक रहेगी बुद्ध ॥3569

तुम ने पूछी है जो बात, वही बतलाऊं अब मैं तात ।
जल नेति तुमने कर पाई, सूत नेतिं भी कर दिखलाई ।
करें कपाल को दोनों शुद्ध, समझें इसको जन प्रबुद्ध ।
गजकरणी भी तुम कर पाई, वह कपाल की करे सफाई ।
आसन पादहस्त जो भाई, वह भी जन को होत सहाई ।
*आगे चल कर वह सिखलावें, उस से भी तब लाभ उठावें ।
इक मुद्रा भी ऐसी भाई, ऋषियन ने जो है कथ पाई ।
कपाल हेतु उसका उपयोग, करें निरन्तर योगी लोग ।
*विपरीत करी उसका अभिधान, उसका आगे देंगे ज्ञान ।

दो०—उत्तम अंग कपाल है, उसका राखो ध्यान ।
उस की शुद्धि के बिना, सके न जन पा ज्ञान ॥3570क

---

* पाद हस्तासन का विवरण यथा स्थान आसनों की शिक्षा में होगा।
विपरीत करी मुद्रा का प्रसंग आगे आने वाली मुद्राओं संबंधी शिक्षा में होगा ।

## दिन नवां (9) प्रातः

दो०—जब आओ तुम प्रात को, कहूं क्रिया तब एक ।
साधन जान विशेष वह, करे वह जन प्रत्येक ॥3570
इतना कह स्वामी उठ पाये, कक्ष अपने में तब सिधाये।
साथ आज्ञा सद्गुरु से लीन, तभी प्रस्थान वहां से कीन।
प्रात भयी तब फिर चलि आया, सद्गुरु को आ शीश झुकाया।
और कहा "हे किरपा नाथ, देकर ज्ञान कल कीन सनाथ।
कपाल शुद्धि का गुण बताया, और उस का प्रकार जताया।
उस विषयिक जो और ज्ञान, वह भी दीजो हे भगवान।
कौन सा साधन है वह नाथ, करें विशेष रूप जो साथ"।
कहा नाथ "हम थे कथ पाय, क्रिया विशेष इक मम मन आय ।
उसका आज मैं दूंगा ज्ञान, कपाल भाति उस का अभिधान ।
दो०—जैसा उस का नाम है, गुण भी वैसा होय ।
योगी उस को नित्य करे, और लाभ को गोय ॥3571
कपाल भाति के दो हैं रूप, दोनों के मैं कहूं स्वरूप ।
फिर तुम मुझ को कर दिखलानी, निज अनुभव की बात बतानी ।
कपाल भाति थी कथी महेश, षट्कर्मन में क्रिया विशेष ।
प्रथम रूप मैं प्रथम बखानूं, मृदुल रूप मैं उस को जानूँ ।
इस की विधि इस विध है साध, ऐकाग्र मन से लो आराध ।
दाईं नास से सांस चढ़ाओ, बाईं से वह छोड़ दिखाओ ।
बाईं से पुनः खींचो सांस, निकालो वह दाईं से सांस ।
पुनः पुनः ऐसे कर पाओ, सुगम रीत से इसे चलाओ ।

दो०—रीति सुगम यह जान लो, मृदु श्वास की मीत ।
देखो मेरी ओर तुम, यह क्रिया ला चीत ।।3572 क
जिमि बतलाया नाथ ने, वैसा सन्मुख कीन ।
साधु ने तब देख कर, वैसा ही कर लीन ।।3572 ख

देख नाथ संतोष जताया, तभी साध को इमि कह पाया ।
"दूजा भेद मैं अब बतलाऊं, और फिर कर तुझे दिखलाऊं ।
तीव्र गति से सांस चलाना, यह है इसका शुद्ध विधाना ।
दोनों नासों से कर पाओ, धौंकनी वत हि सांस चलाओ" ।
पद्मासन तब नाथ लगाया, धौंकनी वत श्वास चलाया ।
पांच सात उन सांस चलाये, लेय विश्राम तब वे पाये ।
श्वास क्रिया पुनः कर लीन, और पुनः विश्राम था कीन ।
कुछ बार क्रिया दोहराई, बात साध को तब कह पाई ।
"अब तुम हम को कर दिखलाओ, और फिर यह समझ सब पाओ" ।

दो०—आसन ला तब साध ने, वही क्रिया उस कीन ।
स्वामी जी ने देख कर, कथ बात तभी दीन ।।3573

"दोनों विधियां तुमने जानी, एक ही क्रिया नित कर पानी ।
दोनों क्रिया अगर कर पाओ, श्रम अधिक हो हानि उठाओ" ।
कहा साध "मैं खुद पहचाना, कर किरपा जो आप बखाना ।
दूसरी क्रिया में श्रम भारी, सर में चढ़ी हो जिमि खुमारी ।
यदि इसका कुछ होय उपाय, करूं मैं आप की कृपा पाय" ।
कहा स्वामी "मैं यही बताऊं, श्रम निवारण उपाय जताऊं ।

पांच सात तुम चला कर सांस, रुक कर पुनः चलाओ श्वास ।
उतना इस को तुम दुहराओ, जो श्रम बिन ही तुम कर पाओ ।
दो०—श्रम बिन साधन होत जो, उस से लाभ महान ।
यौगिक यही विधान है, ऐसा लो तुम जान ।।3574
मैं बतलाऊं इक यह भी बात, ध्यान लगा कर सुन लो तात ।
श्वास तेरा जब बाहिर आये, ज़ोर तेरा तभी लग पाये ।
फिर श्वास जो भीतर जाये, बिना परिश्रम वह जा पाये ।
इस से उलट न करना भाई, क्रिया तभी यह हो सुख दायी" ।
कहा साधु "हे योगी राज, बात रहस्य की जानी आज ।
इस का कारण भी बतलायें, स्पष्ट बात तभी कर पायें" ।
उस की सुन कर यह जिज्ञास, कहन लगे तब नाथ सह हास ।
"हे साध यह बात साधारण, मैं बतलाऊं इसका कारण ।
श्वास बाहिर जोर से जाये, भीतर का मल बाहिर आये ।
इस से उलट करे जो भाई, मल तो भीतर ही रह पाई ।
दो०—मल निकासन हेतु ही, क्रिया करें यह साध ।
इसी रीति तू साध जी, यह क्रिया आराध ।।3575 क

## दिन नवां (9) सायं

दो०—कपाल भाति का ज्ञान तुम, ग्रहण किया है मीत ।
शाम को जब आओगे, बतलाऊं जो चीत ।।3575ख
कथ इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।
साध सराहे अपना भाग, मिला पूर्ण जो गुरु महाभाग ।

बिन भाग्य नहीं गुरु मिल पाते, बिना गुरु जन आयु गंवाते ।
इमि विचारत गया निज धाम, आ गया फिर हुई जब शाम ।
स्वामी को आ शीश झुकाया, और निवेदन फिर कर पाया ।
"हे नाथ तुम योग के स्वामी, बहुत शिष्य तव नामी ग्रामी ।
मुझ को भी जो है अपनाया, भाग्य उदय जिमि मम हो आया ।
मैं कपाल का शोधन जाना, इसका महत्व भी पहचाना ।

दो०—मम उपयोगी सीख जो, आगे की हो नाथ ।
'ग्रहण करूं अब आप से, देकर करें सनाथ" ॥3576

स्वामी सुन उस की जिज्ञास, योग जिज्ञासु जान जो खास ।
कहन लगे "हे साध प्यारे, योग के साधन सभी न्यारे ।
आदेश महा प्रभु का पाय, राम प्रभु थे बस्तिन आय ।
थे हिमगिरी से उत्तरे नाथ, योग से जग को कीन सनाथ ।
ऐसे वे थे साधन लाये, जग ने थे जो सकल भुलाये ।
जनता में वे उन वितराये, विद्या स्थिर जिमि यह रह पाये ।
वे साधन मैं तुझे बताऊं, गुरु की आज्ञा से कर पाऊं ।
आश्रम योग प्रभु बनवाये, साधन योग जहां हो पाये ।

दो०—योगाश्रम में आन कर, सीख रहे जन योग ।
प्रभु के इस उपकार को, कभी न भूलें लोग ॥3577

प्रभु ने जग को दिया जो ज्ञान, सकूं न कर मैं सकल बखान ।
इक क्रिया अब और बताऊं, धौती से संबंधित पाऊं ।
उस का महत्व प्रभु बताया, जिन जाना उन सुख बहु पाया ।
शोधन मूल उसका अभिधान, मैं कराऊं तुझे उस का ज्ञान ।

मल शोधन जब जन कर पायें, इस शोधन को तब अपनायें।
आंशिक शुद्धि लोग कर पाते, प्रयोग में कुछ पेपर लाते।
प्रर्याप्त शुद्धि न होवे भाई, फल इसका हो बहु दुखदाई।
गुदा रहे जब सदा मलीन, कृमि उपजें वहां सदा नवीन।
जहां हो कृमियों का अधिकार, त्वचा में उपजत तभी विकार।

दो०—व्रण त्वचा में होत हैं, कृमियों का जब राज।
रोग ग्रस्त गुदा भये, बहु दुख का यह साज" ॥3578

सुन कर स्वामी जी की बात, कहा साध "हे जगत त्रात।
यह रोग तो अति दुखदायी, पीड़ित इस से जन समुदायी।
इस का नाथ कथें उपचार, जग का होगा बहु उपकार"।
कहा स्वामी "हे साधु सुजान, मूल शोधन ही जान निदान।
उस की विधि मैं तुझे बताऊं, और कहो जो वह समझाऊं।
शौच हित जभी कोई जाये, संग में जल बहुत ले जाये।
शौच पश्चात् गुदा को शुद्ध, जल से करे जन होय प्रबुद्ध।
भीतर से सब करे वह शुद्ध, बाहिर से भी होय वह शुद्ध।

दो०—भीतर बाहिर से जभी, शुद्धि जन कर पाय।
मूल शोधन जो है कथी, वह क्रिया हो जाय" ॥3579

कहा साध "हे योगी राज, समझूं बात तुम्हीं से आज।
भीतर से गुदा शुद्ध की रीत, यह तो मुझ को नहीं प्रतीत।
करावें इस का लेश ज्ञान, करें क्रिया फिर हम यह जान"।
कहा नाथ "मैं तुझे बताऊं, उस शुद्धी की रीत जताऊं।

सरल रीत से यह हो जाये, लेश न इस में जन दुख पाये ।
शुद्धी भीतर से हो जाये, अंगुल से जब जन कर पाये ।
रुका हुआ मल होता जोय, इस विध निकल जाता है सोय ।
इस विध देह से मल निकास, की यह रीति बनी है खास ।
अगर क्रिया यह न कर पायें, भाग भाग के दुख चलि आयें ।
योग का है यह मुख्य असूल, मल है सभी रोगों का मूल ।
दो०—मल शोधन के हेत तुम, करो मूल का शोध ।
आ बतलाना प्रात फिर, आगे का दूं बोध ॥3580 क

## दिन दसवां (10) प्रातः काल

इतना कह कर उठ दिये, योगिराज दयाल ।
साधु भी तभी चल दिया, निज झुका कर भाल ॥3580 ख
होयी प्रातः फिर वह आया, आ स्वामी को माथ झुकाया ।
स्वामी उस को पास बिठाय, अनुभव उस का पूछ वे पाय ।
"मूल शोधन जो था बताया, हम जानें तुम ने कर पाया ।
जो चाहो सो पूछो बात, मन में संशय रहे न तात" ।
कहा साधु "हे नाथ प्यारे, दूर भये मम संशय भारे ।
राम प्रभु जो योग पसारा, पास आपके ज्ञान वह सारा ।
मूल शोधन जो था सिखाया, आज प्रातः मैं कर पाया ।
शुद्धि की यह अनोखी रीत, प्रसन्न होत है इस से चीत ।
बद्धकोष्टता हो जब दूर, स्फूर्ति देह में आये ज़रूर ।

दो०—इस साधन से नाथ जी, जानूं लाभ महान ।
कथें आप जो और भी, ला सुनूं मैं ध्यान ।।3581

कहा नाथ "हे साधु सुजान, तुमने लीना ठीक है जान ।
जो यह क्रिया ना कर पायें, देह का दुख बहुत वे पायें ।
*बद्धकोष्टता प्रथम है रोग, दूजा गुदावर्त का रोग ।
इन रोगों से रहें वे दूर, यह क्रिया जो करें जरूर ।
और भी रोग बहुत हैं साध, दूर रहें यह कर्म आराध ।
मल है सभी रोगों का मूल, यही प्रकृति का अटल असूल ।
रखते देह सदा ही शुद्ध, साधन से जन योगि प्रबुद्ध ।
साधन अब तक जो बतलाये, शुद्धि हेतु तुम सब सुन पाये ।

दो०—हेत शुद्धि के और भी, कह दूं साधन एक ।
नौली उस का नाम है, करे योगी प्रत्येक ।।3582

करना नौली का अभ्यास, जान के क्रिया यह इक खास ।
उदर की शुद्धि इस से होय, अंग प्रत्यंग बल को गोय ।
उदर में सीमित अंग अनेक, इस से गोंय लाभ प्रत्येक ।
नौली से जब पेट हिलायें, अंग सकल हरकत में आयें" ।
नौली की इस बात को जान, कहा साध ने होय हैरान ।
"यह तो बात नई सुन पाई, पेट हिलाने की जो आई ।
पेट तो स्थिर सदा रह पाये, इस को कैसे कोई हिलाये ।
इसे नाथ स्पष्ट कर पाओ, हो सके तो हिला दिखलाओ ।

* बद्धकोष्टता—कब्ज, गुदावर्त—बवासीर ।

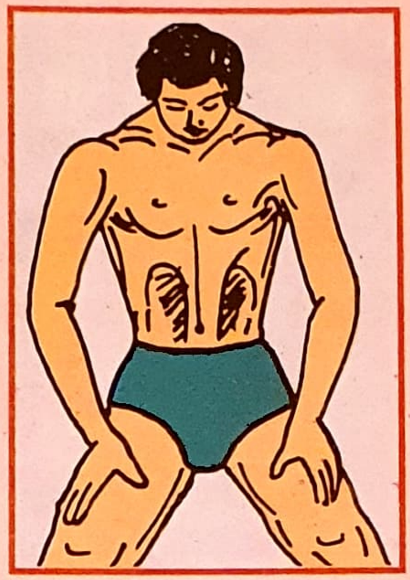

मध्यम नौलि

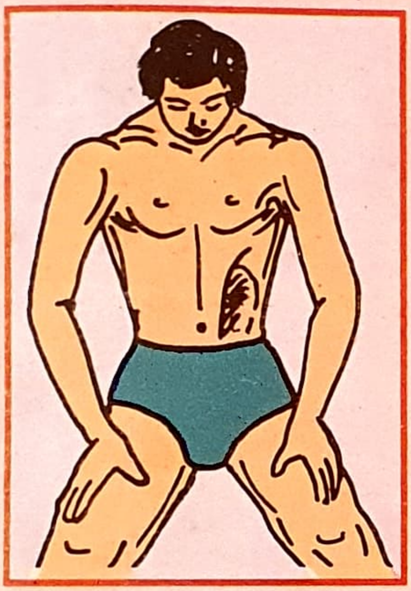

दायीं नौलि

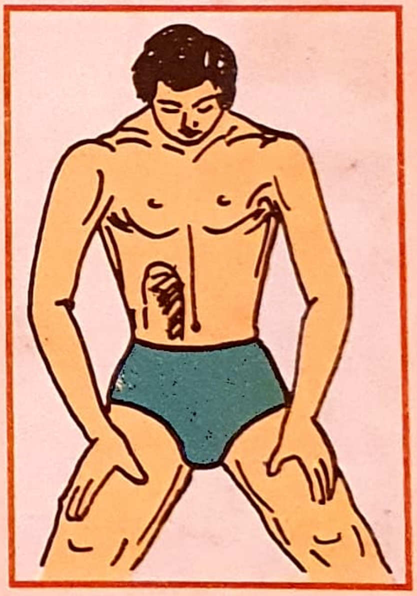

बायीं नौलि

दो०—पेट हिलाने की विधि, हो जो योगि राज ।
वह क्रिया विस्तार से, मुझे बताओ आज" ॥3583

कहा स्वामी "हे साध सुजान, गुरु से ग्रहण करें जब ज्ञान ।
असंभव संभव हि हो जाये, अनोखी बात न को लखाये ।
पेट घुमाना मैं बतलाऊं, नौलि क्रिया अभी दिखलाऊं" ।
सद्गुरु देव तभी उठ पाये, घुटनों पर उन हाथ थमाये ।
झुकाया मस्तक आगे ओर, पेट को कर्षा पीछे ओर ।
पेट पीठ से जब लग पाया, दक्षिण वाम तब उन घुमाया ।
साधु देख के भया हैरान, प्रत्यक्ष मिला उस को प्रमाण ।
हिम्मत कर वह भी उठ पाया, घुटनों पर उस हाथ थमाया ।
यत्न करे जिमि पेट घुमाये, उससे तो न घूम वह पाये ।

दो०—बैठ गया तब हार कर, और कही उस बात ।
"स्वामिन किरया कठिन है, देखी जो साक्षात" ॥3584

कहा स्वामी "हे साध सुजान, कठिन क्रिया न इस को जान ।
बार बार जो करत अभ्यास, उसी को मिलती सिद्धि खास ।
अभ्यास से जन सिद्धि पाये, बार बार जो कर दिखलाये ।
विधि मैं इस की अब समझाऊं, अपने सन्मुख यह करवाऊं ।
घुटनों पर रख दोनों हाथ, रोको सांस बाहिर उस साथ ।
पेट सिकोड़ो भीतर भाई, रखो जब तक सांस रुक पाई ।
सांस को लो स्वस्थ हो पाओ, ऐसे ही कुछ क्षण बिताओ ।
पुनः करो यही क्रिया भाई, यह तो कठिन नहीं है राई ।

दो० – प्रथम चरण यह जान लो, नौली का हे साध ।
यह उड्डियान बंध है, प्रथम इसे आराध ॥3585 क
शाम को जब आओगे, आगे का दूं ज्ञान ।
नौली को जन सीख कर, पाता सुख महान ॥3585 ख

## दिन दसवां (10) सायं काल

पा संकेत साधु चल पाया, लौट शाम को फिर वह आया ।
स्वामी जी के पास पधार, कीना चरणों में नमस्कार ।
कीनी फिर उसने अरदास, "बात नौलि की चली थी खास ।
था उड्डियान बन्ध बताया, वह नाथ ! मैं हूं कर पाया ।
आज्ञा हो तो अभी दिखाऊं, संग पीठ मैं पेट लगाऊं" ।
नाथ सुनी उस की वाणी, उस की उत्सुकता अनुमानी ।
ज्ञान ग्रहण में उत्सुक होय, गुरु से ज्ञान ग्राहवे सोय ।
उस संकेत नाथ से पाया, उड्डियान बंध कर दिखाया ।
कहा नाथ "अब पेट हिलाओ, दायें बायें इसे चलाओ" ।
दो० – मान गुरु की बात वह, करन लगा प्रयास ।
यत्न किया निज ओर से, मिली न सिद्धि खास ॥3586
स्वामी जी तब खुद उठ पाये, घुटनों ऊपर हाथ थमाये ।
खींचा पेट उदर की ओर, रहा दबा जो दोनों ठोर ।
मध्य दण्ड की तरह निकाला, तब घुमा उस दण्ड को डाला ।
दायें बायें उसे घुमाया, साधु चित्त आश्चर्य समाया ।
तब साधु बोला "हे भगवान, यह क्रिया तो कठिन महान ।

मैं जानूं मैं न कर पाऊं, कर पाऊँ तो आ दिखलाऊं ।
किरपा तेरी हो यदि नाथ, सिद्धि लागे तभी मम हाथ ।
जो देखा वह मनहिं ध्याऊं, तदनुसार हि यत्न कर पाऊं"।

दो०—सुनी नाथ यह बात जब, कहन लगे मुस्काय ।
"काम कठिन भी कर सके, हिम्मत जन कर पाय ॥8587

*योग के शत्रु छः तुम जानो, पहला व्याधी को पहचानो ।
तन से रोगी मन से सोगी, बन सके नहीं जन वह योगी ।
व्याधि ग्रस्त जिस का तन होय, और न मन में हिम्मत गोय ।
योग सिद्धि से रहत वह दूर, दूर करो यह दोष ज़रूर"।
कहा साध "है प्रश्न मम एक, व्याधि से जन ग्रस्त हर एक ।
व्याधि जन के समीप न आय, कथें आप ही कोई उपाय"।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, मिल रहा जो है तुझे ज्ञान ।
षट्कर्मों का मेरे भाई, उपाय वह ही है सुख दाई ।

दो०—षट्कर्मों को जन करे, उठ कर नित्य प्रात ।
रोगों का नहीं सिर फिरा, लागें जो उस गात ॥3588 क
लागें जो उस गात में, हैं कहां वे रोग ।
रोग लगें उस देह में, करे न नित जो योग" ॥3588 ख

कहा साधु "मैं है पहचाना, लाभ योग का मैंने जाना ।
मन की बात कथी जो नाथ, मन सोगी तुम कहा इस साथ ।
प्रभु वह बात भी करें स्पष्ट, भ्रांति होय जिमि मेरी नष्ट ।
भ्रांतमती जन चैन न पावे, गुरु उपदेश से भ्रांति जावे"।

---

*योग के छः शत्रु—व्याधि, स्त्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति ।

कहा नाथ "हे साध सुजान, मन के रोग मैं करूं बरबान ।
क्रोध काम जब बहु बढ़ पायें, मन के रोग वही कहलायें ।
कामी पुरुष न योग कमावे, क्रोधी भी वह किमि पर पावे ।
लोभी रहे योग से दूर, माया में ही रह कर चूर ।
मोह का हो जिस पर अधिकार, योग से न उसको सरोकार ।

दो०—अहंकार में लीन जो, रहे योग से दूर ।
उसका दुश्मन आप वह, उसका जो गरूर ॥358
मन की पांच व्याधियां, कीनी मैं बखान ।
मन सोगी उसका भये, वश इन के जो जान" ॥358

कहा साध "हे नाथ प्यारे, वचन आप के लागें प्यारे ।
मानसिक रोग जो करें भयभीत, कैसे सके जन उनको जीत ।
बड़े बड़े भी इन से हारे, किस गिनती में हम बेचारे ।
ऐसा कथिये कोई उपाय, जन जिमि इन को वश कर पाय" ।
कहा नाथ "तू सत कथ पाया, कहूं पर तुम को इक उपाया ।
दृढ़ मन से जो इस मग लागे, जग के सुख को मन से त्यागे ।
उस के वश में आ वे जायें, अपना सर पर पुनः उठायें ।
इन से सदा जन बच रह पाये, दीखे न कोई अन्य उपाय ।

दो०—प्रबल शत्रु ये जीव के, क्रोध काम अहंकार ।
* लोभ मोह सर कर सके, को जन्मा संसार" ॥35

*सर कर सकना=वश करना

## दिन ग्यारहवां (11) प्रातः

दो०—सद्गुरु की सुन बात को, साधु सोचन लाग ।
मन में था कुछ पूछ लूं, सद्गुरु कहने लाग ॥3590 ख
"सायं वेला भया है साध, जा करो अब ईश आराध ।
प्रातकाल जब मिल हम पायें, इससे आगे बात चलायें" ।
कथ इतना स्वामी उठ पाये, कक्ष अपने में चल वे आये ।
निज आसन पर बैठे स्वामी, ध्यान मग्न हो अन्तर्यामी ।
काल प्रातः जब चलि आया, साधु उपस्थित फिर हो पाया ।
सद्गुरु को उस कीन प्रणाम, और कहा "हे सुख के धाम ।
कल की वार्ता थी जो नाथ, उत्तम शिक्षामयी थी गाथ ।
उसी प्रसंग को प्रभु चलाओ, शिक्षा आगे की दे पाओ ।
कामादि शत्रु हैं साक्षात, किस विध वे हो पायें परास्त ।
दो०—ऐसी विधि बतलाइये, जन के रहें अधीन ।
बाधक बने न योग में, करें न चित्त मलीन" ॥3591
कहा स्वामी "तू ठीक बखाना, मुख्य काम इन को वश लाना ।
योग में सिद्धि होय न राई, शत्रु सामने जब तक भाई ।
शत्रु परास्त होंय जभी मीत, योग करे जन सहित प्रीत ।
इनको वश करने के हेत, "प्रतिपक्ष भावना अभिप्रेत" ।
सुनी साधु जब नाथ की बात, मुख से निकले वचन हठात ।
"वह भावना क्या होती देव, स्पष्ट करें मुझे उस का भेव ।
उस का मैं भी कर अभ्यास, लागूं योग में सह विश्वास ।
पूर्ण सद्गुरु मुझे अपनाया, जिस रहस्य यह गूढ़ बताया ।

दो०—रहस्यमयी इस बात को, मुझे बतावें नाथ ।
मेरा चित्त जिमि न बिके, काम आदि के हाथ ॥3591
प्रबल शत्रु हैं ये प्रभो, बचा न इन से कोय ।
केवल वह ही बच सके, योग करे जन जोय ॥3592
कहा नाथ "तू ठीक बखाना, वश कीना इन सकल जहाना ।
इन से केवल योग बचाये, गुरु की शरणी जो जन आये ।
प्रतिपक्ष भावना वह कहाय, भाव विरोधी जन चित्त लाय ।
पर तिरया को माता जाने, पर द्रव्य को माटी माने ।
काम वा लोभ इमि वश आयें, सन्मुख योग के न टिक पायें ।
आये क्रोध दया कर पाओ, नहीं किसी का चित्त दुखाओ ।
आत्मवत सभी जग को जान, पर दुख को ले निज दुख मान ।
क्रोध भये तब जन का शांत, होय न उसका चित्त भ्रांत ।
दो०—तीनों से इमि निपट ले, गुरु कृपा से साध ।
करत करत अभ्यास से, दूर भये सब बाध ॥3593
सब बाधा तब होतीं दूर, राखे चित्त जो नहीं ग़रूर *।
अपने आप को ले इमि जान, गुरु चरणों की धूल पहचान ।
*रज की तो कुछ हस्ती भाई, गुरु के शिष्य की तो न राई ।
शिष्य गुरु का वही बन पाये, अहंभाव न जिस चित्त आये ।
अहंकार का यही प्रतिकार, योगी सदा करते स्वीकार ।
अब सुनों तुम मोह की बात, उसका व्यापक रूप है तात ।

* ग़रूर अहंकार    * रज=माटी

जग का मोह, देह का मोह, आत्म जनों का प्रतिपल मोह ।
सब से बढ़ निज नाम का मोह, महा प्रबल सभी जानो मोह ।
दो०—चौरासी का मोह मूल है, मानव जाने जोय ।
मोह के प्रतिकार का, यत्न करेगा सोय" ।।3594
कहा साध "हे नाथ सुजान, मिला मुझे जो अब है ज्ञान ।
ऐसा ज्ञान न अब तक पाया, भूल भुलाई रहा भरमाया ।
मोह की सुन पाई जो बात, वह तो किंचित नहीं थी ज्ञात ।
मोह का टूटे किस विध पाश, जीव को कर रहा हताश ।
उसका अब प्रतिकार बतायें, निज शिष्यन का हित कर पायें" ।
कहा स्वामी "हे साध सुबोध, इसका भी दूं तुम को बोध ।
मोह कारण जन्म में आवें, छूटे मोह मोक्ष को पावें ।
मोक्ष की हो जिस को अभिलाश, तोड़ सके वह मोह का पाश ।
दो०—इच्छा जिस मन मोक्ष की, मुमुक्षु जानो सोय ।
मन रमे नही जगत में, मोह कहां पै होय ।।3595

## दिन ग्यारहवां (11) सांयकाल

हे साधो अब तुम चलि जाओ, प्रातःकाल लौट के आओ ।
सुनकर साधु नाथ आदेश, लाई देर न उसने लेश ।
अपने डेरे चल कर आया, ज्ञान अनूप मोक्ष का पाया ।
त्यागूं मोह मोक्ष को पाऊं, जीवन न मैं व्यर्थ गवाऊं ।
छोड़ा गेह साध बन पाया, संग मोह का छूट न पाया ।
साधु बन क्या कीन कमाई, रही बुद्धि जग में उरझाई ।
दीना सद्गुरु हम को खोल, मारग मोक्ष का मिला अडोल ।

स्मरण राखूं सद्गुरु का ज्ञान, इसी से होगा मम कल्याण ।
इसी सोच उस रात विहायी, भोर भई जागी जगताई ।

दो०—भोर भई उस देख कर, आया आश्रम मांझ ।
घूम रही थी चित में, बात सुनी जो सांझ ॥3596

स्वामी जी को कर प्रणाम, कहन लगा 'हे सुख के धाम ।
विघ्न योग के कीन बखान, व्याधी आदि का मिला ज्ञान ।
देह के रोग मन का सोग, विघ्नित भये दोनों से योग ।
और हों जो विघ्न महाराज, श्रवण करूँ मैं वे भी आज ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, मन के रोग सुने तुम सारे ।
मन की शुद्धि हेत ही साध, जन का होय यत्न निर्बाध ।
एक विघ्न मैं और बताऊं, उसको भी बहु बाधक पाऊं ।
*"स्त्यान' नाम उसका लो जान, योग में बाधक होत महान ।

दो०—स्त्यान दोष के कारणे, साधक करे न योग ।
समय गंवाय आपना, मिले न पुनः सुयोग ॥3597

सुस्त जीव निज समय गंवाय, गया वकत फिर हाथ न आय ।
सुस्ती को जब जीव दे त्याग, दृढ़ता से ले योग में लाग ।
सिद्धी के मग वह ही चाले, सुस्ती जीव को अघ में घाले ।
नियत समय पर करे सब काम, हर समय न चाहे आराम ।
तपो भूमि ले जो जग मान, योगी वही बने इन्सान" ।
स्वामी जी का सुन उपदेश, साधु बोला "हे गुरु सर्वेश ।

* स्त्यान = सुसती

मेरे में ये दोष महान, समय के मूल्य का न है ज्ञान ।
आलस में मैं काल बिताऊं, समय पर कुछ भी न कर पाऊं ।

दो०—आपके उपदेश पर, मैं चालूं अब नाथ ।
जीवन की इस डोर को, दृढ़ पकडूं निज हाथ ।।3598

बन मैं सुस्त न समय गंवाऊं, दीर्घ सूत्री नहीं कहलाऊं ।
और विघ्न जो योग में नाथ, बे भी कथ दें इसी के साथ ।
किरपा करनी हे मम नाथ, विघ्न त्यागें मेरा साथ ।
गुरु किरपा बिन संभव नाहीं, साध सके बच दोषन ताहीं" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, आये जन जो गुरु के द्वारे ।
पाये गुरु से जो निर्देश, चाले यत्न से जो हमेश ।
गुरु किरपा को वह ही पाये, कर यत्न वह सिद्ध हो जाये ।
सिद्धि का मुख्य यही असूल, गुरु की शिक्षा जायें न भूल ।

दो०—गुरु से शिक्षा पाय कर, राखें सदा स्मरण ।
यत्न करें उस पर चले, हो सिद्धि का वरण ।।3599

एक विघ्न मैं और सुनाऊं, जिसे योग में बाधक पाऊं ।
"संशय" उसका है अभिधान, इससे नष्ट भये बहु ज्ञान ।
*जो जन इसके वश में आये, "किंकर्तव्य विमूढ़" कहाये" ।
नाथ की सुन स्पष्ट यह बात, कहा साध "हे जन के त्रात ।
मुझे खोल के सब समझायें, क्या साधक मन संशय आयें ।
विघ्न जो उस के मग में देव, मुझे बतावें गुप्त वह भेव ।

* किंकर्तव्य विमूढ़—वह मनुष्य जिसकी बुद्धि यह निर्णय नहीं कर पाती कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए ।

मेरा मन तो बहु घबराये, कहीं संशय न इसमें आये ।
* गीता का यह वाक है खास, संशयवान का होत विनास ।
दो०—जानन चाहूं आपसे, रहस सकल हे नाथ ।
श्रद्धा जिमि मम मन बसे, बिकूं न संशय हाथ ॥3600

## दिन बाहरवां (12) प्रातः

कहा स्वामी "हे साध सुजान, "तेरी बात में गूढ़ ज्ञान ।
जभी प्रातः आप आ जाओ, इसी विषय को पुनः चलाओ ।
पा संकेत साधु उठ पाया, निज स्थान की ओर सिधाया ।
स्वामी जी तब कीन विश्राम, बितायी सुखमय सुख से शाम ।
भयी प्रातः विश्व हर्षाया, साधु चल तभी आश्रम आया ।
बैठ गया वह टेक के माथ, स्वामी जी के चरणों साथ ।
कहा स्वामी "हम अब बतायें, श्रद्धा का प्रसंग कथ पायें ।
"संशय" योग का शत्रु जानो, नाश श्रद्धा से हो मानो ।
श्रद्धा जिस के मन उपजाये , संशय उस के चित्त न आये ।
दो०—श्रद्धा जननी ज्ञान की, संशय दुख का मूल ।
संशय से हो रहित मन, योग का यही असूल" ॥3601
कहा साध "हे नाथ महान, चाहूं मैं यह आप से ज्ञान ।
श्रद्धा किस के प्रति हो नाथ, और न संशय हो किस साथ ।
जब तक स्पष्ट बात न देव, भ्रांत रहे मम मन अधिदेव" ।
कहा स्वामी "यह उच्चित बात, जिस प्रति होय श्रद्धा तात ।
उसका रूप यदि नहीं समक्ष, प्राप्त करे किमि जन निज लक्ष ।

* संशयात्मा विनश्यति Gita.

*श्रद्धा के आधार हैं चार, श्रद्धा प्रथम 'गुरु प्रति' अपार ।
दूसरा 'योग प्रति' हो मीत, 'आत्म विश्वास' तीसरी चीत ।
'ईश्वर' पर विश्वास अटूट, चौथी यह कभी जाय न छूट ।

दो०—जिसके मन ये चार हों, कर सके वही योग ।
वंचित इन से जो रहे, दूर उसी से योग ॥3602 क
इस कारण हे साध जी, संशय बाधक होय ।
चित्त में संशय न बसे, करे योग जन सोय ॥3602 ख
स्पष्ट बात तो है भयी, श्रद्धा की मम मीत ।
प्रश्न और तुम पूछ लो, हो तेरे जो चीत" ॥3602 ग

कहा साध "हे सद्गुरु देव, मिला आप से योग का भेव ।
साधन का अधिकारी सोय, श्रद्धा जिस के चित्त में होय ।
सके न कर संशयात्मक योग, उसके सन्मुख जग के भोग ।
गुरु समर्पित नहीं जो होय, योग हेतु वैराग्य न गोय ।
किंकर्तव्यविमूढ़ हो चित्त, ईश्वर निष्ठा भी नहीं मित्त ।
ऐसा जन ही योग से दूर, समझी आप से बात ज़रूर ।
बात मुझे इक समझ न आये, आत्म विश्वास किमि बढ़ पाये ।
कार्य अगर कुछ करना चाहूं, समझ कठिन मन में घबराऊं ।

दो०—किस विध मन में हो प्रभो, आत्म प्रति विश्वास ।
सिद्ध सकूं कर मैं प्रभो, कठिन साधन भी खास" ॥3603

---

* श्रद्धा के चार आधार—1. गुरु के प्रति श्रद्धा 2. योग के प्रति श्रद्धा 3. आत्म विश्वास, 4. ईश्वर विश्वास ।

कहा नाथ "हे साध प्रवीण, बात नहीं यह कोई नवीन ।
दुर्बल मन के कारण भाई, आती सन्मुख यह कठिनाई ।
सबल होय जब मन तव साध, मग से दूर भये तब बाध" ।
कहा साध "हे दीना नाथ, उसका उपाय भी कह दें साथ ।
जिस विध चित्त सबल हो पाय, वैसा कथिये कोई उपाय" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, निश्चित बात यह लो तुम जान ।
दुर्बल चित्त सबल हो जाये, शरण यदि जभी गुरु की आये ।
आश्रय गुरु का शक्तिदायी, आश्रय गुरु का बल प्रदायी ।

दो०—गुरु का आश्रय जब मिले, निर्बलता हो दूर ।
पर्वत सन्मुख हो खड़ा, वह भी होगा चूर" ।।3604

कहा साध "हे गुरु महाराज, आंख खुली है मेरी आज ।
पूरण सद्गुरु मैं जो पाया, मेरे मन विश्वास है आया ।
गुरु शक्ती से सब कर पाऊं, कठिन कार्य भी कर दिखलाऊं ।
एक बात अब और बताओ, मेरी भ्रांती दूर हटाओ ।
ईश्वर पर किमि होवे निष्ठा, किमि चित्त में ईश प्रतिष्ठा ।
आस्तिक पुरुष ईश को माने, नास्तिक ईश को न पहचाने ।
नास्तिक आस्तिक किमि हो पाय, इस का प्रभो है क्या उपाय ।
होवे ईश्वर पर विश्वास, क्या को ऐसी रीति है खास ।

दो०—ऐसी रीति बताइये, हो ईश विश्वास ।
बिना ईश विश्वास के, मिलत योग न खास" ।।3605
सुन कर उस की बात को, जिस में तथ्य विशेष ।
कहा नाथ "हे साध जी, कथें शाम को शेष ।।3605

सायं को जब बैठन पायें, यही प्रसंग पुनः कथ पायें" ।
इतना कह उठ पाये नाथ, उठा साध भी उन के साथ ।

## दिन बाहरवां (12) सायं

सायं भयी साधु चलि आया, स्वामी जी निज पास बिठाया ।
कहन लगे तब उसको नाथ, प्रातः की ही वह उसे गाथ ।
कहा नाथ "तू सच पहचाना, प्रभु विश्वास बिन न कल्याणा ।
किमि विश्वास ईश पै होय, यही बात अब कह दूं तोय ।
प्रथम बात तुम लो यह जान, बिन ईश्वर सब जग सुन्सान ।
जग के जीवन का आधार, किमि उसको जन सके विसार ।
गुरु से ज्ञान मिले जब साध, मन में बैठे तब निर्बाध ।
गुरु व ईश्वर एक ही जानो, गुरु को हि तुम ईश पहचानो ।

दो०—ईश दया से गुरु मिले, गुरु दया से ईश ।
दोनों इक ही रूप हैं, कहते सभी मुनीश ॥3606क
कहते सभी मुनीश हैं, समझे भेद न कोय ।
भेदभाव जिस मन बसे, पावे ईश न सोय ॥3606ख
वह जन ईश न पास के, गुरु को समझे और ।
जाने गुरु को न्यून जो, उस को मिले न ठौर" ॥ 3606ग
प्रभु के सुन उपदेश को, नतमस्तक हो साध ।
कहन लगा "हे नाथ जी, "मिला ज्ञान अगाध ॥ 3606घ

ऐसा ज्ञान न अब तक पाया, गुरु से अब जो है सुन पाया ।
गुरु को अब मैं ईश्वर जानूं, गुरु से अन्य न मैं पहचानूं ।
सर्वव्यापक रूप कहाया, सद्गुरु बन परमेश्वर आया ।
मेरा संशय भया निर्मूल, श्रद्धा अटल का मिला असूल ।
गुरु चरणी जो दृढ़ विश्वास, श्रद्धा का वह बीज है खास ।
गुरु किरपा श्रद्धा उपजाये, आत्म विश्वास वही बढ़ाये ।
गुरु चरणी हो जिसकी की निष्ठा, प्रभु भजन में होय प्रतिष्ठा ।
योग को हि वह उत्तम माने, बढ़कर इससे ज्ञान न जाने ।

दो०—श्रद्धा पूर्ण भयी मुझे, गुरु चरणों में नाथ ।
किरपा हो अब नाथ जी, चित्त रहे तव साथ" ।। 3607

इतना कह उस माथ झुकाया, गुरु चरणों में चित्त लगाया ।
कहा नाथ "हे गुरु सन्मानी, तेरी बुद्धी जग कल्याणी ।
ठीक बात तुम है कह पायी, गुरु की किरपा सब सुख दायी ।
गुरु किरपा से मन वश आवे, गुरु किरपा श्रद्धा उपजावे ।
श्रद्धा गुरु पग जिस की होय, ईश्वर भक्त बने जन सोय ।
गुरु पग जिस को न विश्वास, विमुख ईश्वर से जन वह खास ।
प्रभु प्रति जो चाहे विश्वास, और चाहे आत्म विश्वास ।
गुरु पर रख वह अटल विश्वास, अर्पे जीवन बन कर दास ।

दो०—सरल मार्ग यह साध जी, योगिन को मनज़ूर ।*
आस्तिक जन इस को गहे, नास्तिक रहता दूर ।।3608

* मनज़ूर—स्वीकार ।

अब मैं तुम को वह बतलाऊं, आगे के साधन समझाऊं ।
बस्ति क्रिया और इक भाई, योगिन को जो बहु सुख दाई ।
रोग गुदा के नहीं सतावें, बस्ती किरया जो कर पावें ।
बद्धकोष्टता रहती दूर, क्रिया बस्ती जन करे ज़रूर" ।
कहा साध, "हे गुरु महाराज, किरया वह बतलाइये आज ।
सावधान हो मैं सुन पाऊं, वा आज ही सीख के जाऊं" ।
कहा स्वामी, "हे साध सुजान, इतनी सुगम न क्रिया जान ।
समझो आज तुम इस का भेद, जल में करना जा बिन खेद ।
नदी के जल में कर प्रवेश, उत्कट बैठो नीर में लेश ।

दो०—जल में जा तुम बैठना, उत्कट रख शरीर ।
घुटनों पर हों हाथ तव, नाभि तक हो नीर ॥3609 क
जल में इस विध बैठकर, नौली करनी साध ।
जल जाये जब आंत में, रोक रखो निर्बाध ॥3609 ख

जल से बाहिर तब तुम आओ, नौली से निज पेट घुमाओ ।
शौचालय में जा फिर मीत, नीर निकाल दो वह सप्रीत ।
कहा साध "हे सद्गुरु देव, स्पष्ट करो इक और भी भेव ।
नदी का तट यदि न मिल पाये, किस विध क्रिया जनकर पाये ।
यह संशय है मम मन आया, कथिये इस का कोई उपाया" ।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, कहा स्वामी ला मुख पर हास ।
नदी का तट यदि न मिल पाये, ताल किनारे जन चलि जाये ।
इक बात पर जान लो भाई, भूलो न जल की स्वच्छताई ।
मलिन जल से होत है हान, प्रथम करो जल की पहचान ।

दो०—जन जो बस्ती को करे, रहे ध्यान में बात ।
जल दूषित तो है नहीं, जिस से हो उत्पात ॥ 3610
विधी सुरक्षित लो तुम जान, इक टब ले जल भरा पुमान ।
उसी में बैठ करे यह काम, इस विधि जा तुम करो इस शाम" ।
आज्ञा पाय साधु उठ पाया, स्थान अपने को वह सिधाया ।

## दिन तेहरवां (13) प्रातः

प्रातः अगले जब चलि आया, तभी नाथ प्रश्न कर पाया ।
"क्या तुम ने था कीन अभ्यास, क्रिया बस्ति जो कही थी खास" ।
कहा साध "हे नाथ स्वामी, तुम तो सद्गुरु अन्तर्यामी ।
तुम तो जानो सारे भेद, श्रवण करो जो कहूं बिन खेद ।
जल में बैठ कीन अभ्यास, न मिली थी सिद्धि कुछ भी खास ।
नौली तो मैं था कर पाया, जल पर आंत में न चढ़ पाया ।
इस में त्रुटि रह गई क्या नाथ, मुझे बतला कर करो सनाथ" ।
कहा स्वामी "तुझे कथ पाऊं, बात रहस की अब बतलाऊं ।
बस्ती में तभी सिद्धि पायें, यदि गुदा में नली लगायें ।
दो०—नली बिना हे साध जी, बस्ति होय न सिद्ध ।
इस क्रिया को जानिये, योगिन में प्रसिद्ध" ॥3611
कहा साध "हे सद्गुरु देव, आप बताया विलक्षण भेव ।
मैं भी इसी विधी कर पाऊं, नलकी का प्रयोग कर पाऊं ।
आकर फिर बतलाऊं गा मैं, सिद्धि को जभी पाऊं गा मैं" ।
कहा स्वामी "करना अभ्यास, तुम को दें प्रभु सिद्धि खास ।
अब मैं साधन और बताऊं, त्राटक का अभ्यास कराऊं ।

आंखों की यह क्रिया जानो, इस से उन की शुद्धी मानो ।
आंख दीप है घट का भाई, बिना दृष्टि घट में अंधयाई ।
दीपक उज्ज्वल घर उज्याला, बिन दीपक सब काला काला ।
नयनों को त्राटक चमकावे, निर्मलता वह उन में लावे ।
दृष्टि स्थिर भी इस से होवे, दुर्बल दृष्टि बल को गोवे ।

दो०—दुर्बल दृष्टि होय यदि, रहती और मलीन ।
त्राटक क्रिया शौक से, ले जन गुरु से चीन" ॥3612क
कहा साध "हे नाथ जी, यह तो उत्तम योग ।
इसे बतायें आज ही, श्रवण करें हम लोग" ॥3612ख
कहा स्वामी "हे साध जी, त्राटक करूँ बखान ।
प्राचीन यह योग महा, लो मुझ से अब जान ॥3612ग
दृष्टि स्थिर से देखना, सूक्ष्म चक्र बनाय ।
जब तक अश्रु नहीं बहें, त्राटक योग कहाय" ॥3612घ

कहा साध "हे नाथ प्यारे, श्रवण किये हम वचन तिहारे ।
उत्सुकता है मन उपजाई, कर लें त्राटक चित्त लगाई ।
आप हमें अभ्यास करायें, और रहस्य सभी समझायें ।
आप योगेश हम शरणि आये, रहस बहु हम आप से पायें" ।
कहा स्वामी "यहां तुम आओ, समक्ष दिवार आसन लाओ ।
*दो हाथ दीवार से हट कर, दृढ़ आसन में बैठो सट कर" ।

* दो हाथ—तीन फुट

बैठ गया वह आज्ञा पाय, स्वामी जी तब पैंसिल लाये।
पैंसिल से इक चक्र बनाया, सन्मुख साध के जो सुहाया।
दो०—दो अंगुल जो व्यास का, चक्र कृष्णाकार।
कहा नाथ "हे साध जी, देखो यह टकसार ॥ 3613
आंख झपको न मेरे भाई, इक टक देखो यह लिव लाई।
पानी आंख से जब बह पाय, तब तक देखो तुम लिव लाय।
धुलें आंख आंखों के पानी, त्राटक की है यही निशानी"।
साधु ने यह सभी कर पाया, कुछ मिनट जब त्राटक लाया।
आंखों में भर आया पानी, आंख झपक वह बोला वाणी।
"नाथ मुझे अब आप बताओ, जो करना हो वह समझाओ।
कहा नाथ "अब तुम उठ पाओ, आंखें पोछ पास मम आओ"।
साधु ने आदेश को मान, पास नाथ के बैठा आन।
दो०—पास नाथ के बैठ कर, पूछन लागा साध।
"लाभ क्या इस योग का, लीना जो आराध ॥3614
हे नाथ अब आप बतायें, विस्तार से मुझे समझायें।
गुण विशेष जो इस का होय, अब सुनूं मैं आप से सोय"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, इस क्रिया के लाभ महान।
सूक्ष्म तन्तु जो आंखों मांहि, उन की शक्ति इससे बढ़ पांहि।
और लाभ इस का यह भाई, दृष्टि जन की स्थिर हो जाई।
दृष्टि के जो छुट पुट रोग, त्राटक कर जन बने निरोग।
दृष्टि में इक तेज समाये, त्राटक क्रिया जो कर पाये।

दो०—त्राटक क्रिया जो करे, पावे लाभ महान ।
आंखों की शुद्धि भये, छुट पुट रोग नशान ।। 3615

इक बात पर स्पष्ट लो जान, शुद्धि हेत यह क्रिया जान ।
इस विषयिक जो और सवाल, आ पूछना तुम सायं काल ।
अब तो वेला बहुत विहायी, प्रातः कर्म करें जा भाई ।
कह इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन तेहरवां (13) सायं

बीती प्रात दोपहर विहायी, वेला सायं की जब आई ।
आया साधु स्वामी पास, पूछी बात वही फिर खास ।
कहन लगा "हे सद्गुरु देव, त्राटक के जो और हों भेव ।
उन्हें बतला करिये कृतार्थ, योग से सिद्ध होत परमार्थ ।
जिज्ञासा मेरी होवे पूर्ण, सीखन चाहूं योग सम्पूर्ण ।

दो०—योग जिज्ञासु मैं प्रभो, मुझ को सेवक जान ।
ज्ञान योग का दीजिये, दास परम अनजान ।।3616 क
पूछन चाहूं सद्गुरु, त्राटक की यह बात ।
किस काल त्राटक करूं, सायं अथवा प्रात" ।।3616ख

कहा स्वामी "हे साध सुजान, विशेष समय न इस का जान ।
तेरा मन जिस काल हो शांत, तन से भी न हो तुम श्रांत ।
उसी काल तुम यह कर पाओ, और तभी तुम लाभ उठाओ" ।
साध कहा तब सह सन्मान, "मुझे मिला है उच्चित ज्ञान ।
और बात मैं पूछन चाहूं, कितने क्षण मैं यह कर पाऊं"- ।
कहा नाथ "उतना कर पायें, जब तक आंख में आंसु आयें" ।

कहा साध "अब यह बतलायें, कितनी बार इसे कर पायें" ।
कहा स्वामी "बस इक ही बार, होत पर्याप्त यह मम विचार" ।
दो०—कहा साध, "है हम सुना, करे जो दीर्घ काल ।
त्राटक देता सिद्धियां, जीत सके वह काल ॥3617
बात क्या यह ठीक है, हमें बतायें आप ।
भ्रांति मेरे चित्त बसे, दूर करें यह आप" ॥3617
स्वामी बोले "साध सुजान, यह है षट् कर्मन का ज्ञान ।
षट्कर्म सभी हैं शुद्धि हेत, सिद्धियां इन से न अभिप्रेत ।
और प्रश्न यदि मन के मांझ, पूछ लेवो तुम इस ही सांझ" ।
कहा साध "मम भ्रम नसाया, उत्तर ठीक आप से पाया ।
आगे का यदि दें कुछ ज्ञान, ग्रहण करूं मैं लाकर ध्यान" ।
कहा नाथ "अब सुन लो भाई, एक साधन जो बहु सुख दाई ।
उसका अब अभ्यास कराऊं, नित करने के हेत बताऊं ।
'कपाल भाति' है उस का नाम, नाम सदृश ही उस का काम ।
दो०—रुका हो मल कपाल में, उसकी शुद्धि होय ।
नित्य करे अभ्यास जो, बुद्ध उजागर गोय" ॥3618
कहा साध "हे नाथ हमारे, रहस कपाल भाति के सारे ।
बता कर मुझ को करें सनाथ, मैं दास तव, आप मम नाथ" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, दास प्रभु के हैं हम सारे ।
राम प्रभु हैं जग उतराये, वही योग के साधन लाये ।
वे ही हैं इस जग के स्वामी, कृपा नाथ वे अन्तर्यामी ।
जग में देख के योग ह्रास, योग साधन वे लाये खास ।

योग साधन की संस्था थाप, योग प्रचारा प्रभु ने आप ।
राम लाल उन का शुभ नाम, उनको जाने जगत तमाम ।
दो०—योग प्रचारण हेत ही, प्रभु का यह अवतार ।
जो सेवक हैं नाथ के, वे जानें यह सार ॥ 3619
कपाल भाति प्रभु ने सिखलाई, भक्त जनों ने वह अपनाई ।
उसका मैं अब करूं बखान, करो उसे फिर ला तुम ध्यान ।
*भस्त्रिका सम श्वास चलाओ, पांच व सात बार कर पाओ ।
कुछ ही क्षण कर के विश्राम, पुनः करो फिर यह ही काम ।
अपनी इच्छा से कर पाओ, पुनः पुनः इस को दुहराओ ।
मैं तुम्हें यह कर दिखलाऊं, नित्य करूं मैं लाभ उठाऊं"।
स्वामी जी ने सब कर पाया, वाणी से था जिमि बतलाया ।
साध देख कर शिक्षा पाई, जाय करूं निज मति जतलाई ।
दो०—लागी ढलने शाम जब, उठ पाये तब नाथ ।
चला साध भी उठ कर, टेक नाथ को माथ ॥3620

## दिन चौदहवां (14) प्रातः

भयी प्रातः नाथ जी जागे, प्रभु जी के गुण गाने लागे ।
घोष ध्वनि उन की थी ऐसी, मृदग मधुर की होय जैसी ।
मस्ती में भर ऐसे गाते, सुनने वाले मस्ती पाते ।
ऐसी मस्ती उन पर छायी, जिमि हो मस्ती तन धर आयी ।

* भस्त्रिका—लोहार की धौंकनी ।

तेज नूरानी उन का देख, शांभवी मुद्रा उन की पेख ।
जीव जन्तु के शिथिलत गात, मानव की तो कहें क्या बात ।
इतने में साधु चली आया, सद्गुरु का आ दर्शन पाया ।
देखे वह हो भाव विभोर, चांद को देखत जिमि चकोर ।
संगीत ध्वनि भयी तब शांत, स्वामी बैठे जिमि हो श्रांत ।
आसन ग्रहण जभी उन कीना, साधु चरणि सर धर दीना ।
नाथ जी दीना आशीर्वाद, और कहा फिर उस के बाद ।

दो०—कहा नाथ ने साध से, "क्या कीना अभ्यास ।
कपाल भाति का साधन, कठिन जो है न खास ॥3621

अब मुझ को तुम कर दिखलाओ, आगे की फिर शिक्षा पाओ"।
साधु आज्ञा नाथ की मानी, आसन बैठा गुरु सन्मानी ।
कपाल भाति उस कर दिखायी, जैसी सीख नाथ से पायी ।
कहा नाथ "अब मैं दिखलाऊं, इसी की दूज विधि समझाऊं ।
कपाल भाति के दोनों रूप, साधन शुद्धि हेत अनूप ।
क्रिया दूज इस विध कर पाओ, एक नास से श्वास चढ़ाओ ।
दूजे से तत्काल निकालो, और उसी से तुम ले डालो ।
तीव्र गति से श्वास ले पाना, कपाल भांति का यही विधानां ।
इस को बार बार कर पाओ, इस क्रिया से लाभ उठाओ ।

दो०—करता हूं तुम देख लो, इस क्रिया को मीत ।
कर दिखलानी तब मुझे, इकाग्र करके चीत" ॥ 3622

नाथ जी क्रिया कर दिखलायी, साधु ने सब देख वह पायी ।
पुनः साधु ने इसको कीन, नाथ नें लीनी जो तब चीन ।
कपाल भाति की दोनों रीत, सींखीं साधु ला कर चीत ।
कहा साधु तब "हे भगवान, करूं कौन नित्य करें बखान" ।
कहा स्वामी "तुम पूछा ठीक, प्रभु बतलाई दोनों लीक ।
इस में है प्रयोजन भाई, सुनो जिसे अब तुम मन लाई ।
योग विद्या के रूप महान, केवल जाने योगी सुजान ।
प्रथम विधि सभी को सुखदायी, दूजी में कुछ है कठिनायी ।
द्वितीय विधि का लाभ महान, प्राप्त करे इसे वही पुमान ।
खुलीं हों जिस की दोनों नास, सरलता पूर्वक चले श्वास ।
दो०—नासा इक यदि बंद हो, श्वास न आये जाय ।
पहली किरया ही करे, न कठिनाई आय" ॥3623
सुन कर सद्गुरु जी की वाणी, जान लिया गुरु परम ज्ञानी ।
रहस्य योग के इन के पास, प्रकट करें हो शिष्य जो खास ।
दीना षट्कर्मन का ज्ञान, निज को लूं बहु धन्य मैं मान ।
और क्या अब नाथ बतायें, ये विचार मम मन में आयें ।
स्पष्ट पूछ लूं इनसे बात, बैठे तो हैं प्रभु साक्षात ।
कहा साध "हे मेरे स्वामी, घट घट के तुम अन्तर्यामी ।
मेरे चित्त का तुझ को ज्ञान, फिर भी कर दूं नाथ बखान ।
षट्कर्म सभी आप सिखाये, प्रभु कृपा से सभी कर पाये ।
दो०—और क्या अब नाथ जी, है बतलाना शेष ।
चरण पड़े इस दास पर, करिये दया हमेश" ॥3624

कहा नाथ "हे साध महान, पाया तुम जो योग का ज्ञान।
उस से आगे भी जो भाई, करो प्राप्त नित्य यहां आई।
मिले जो गुरु के मुख से ज्ञान, उसे उपनिषद् कहें सुजान।
मिल रहा वह तुम को भी ज्ञान, जानूं तुम तो भाग्य हो वान।
लिया षट्कर्मों को तुम पाय, आसन शिक्षा लो अब आय"
कहा साध "हे सद्गुरु प्यारे, संख्या में वे कितने सारे।
कुछ आसन तो मैं भी जानूं, निज को विज्ञ न मैं पर मानूं।
जो शिक्षा तव शरणी पाऊं, उसको ही मैं अब अपनाऊं।
दो०—समझूं मैं अब आप से, योगासन की बात।
कितने आसन हैं प्रभो, हो जिन का साक्षात" ॥ 362

कहा स्वामी "मैं सब बताऊं, सायं को जब बैठन पाऊं।
*अब तो काल है बहु विहाया, प्रातराश का वेला आया"।
स्वामी यह कह उठ ही पाये, निज कमरें में चल कर आये।

## दिन चौदहवां (14) सायं

सायं भयी साधु आ पाया, नाथ की चरणि शीष निवाया।
और प्रश्न वही कर दीन, संख्या आसनों की को चीन।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, आसन कोई न जाने सारे।
लाख चौरासी हैं बताये, शंकर ने जिमि थे कथ पाये।
इस का भाव यही मैं जानूं, होय न गिनती उन की मानूं।
तुम को जिन आसनों का ज्ञान, उनका बेशक करो बखान।
दो०—जो तुम चाहो पूछना, पूछ सको मम मीत।
यौगिक आसनों से प्रिय, सब जनता की प्रीत" ॥362

*प्रातराश—नाशता।

कहा साध "तब आज्ञा मानूं, मैं तो कुछ आसन ही जानूं ।
शीर्षासन को कहें महान, उस का कुछ मुझे दीजो ज्ञान ।
कितना काल उसे कर पायें, और तभी हम लाभ उठायें" ।
कहा स्वामी "यह ठीक सवाल, करें यह आसन कितना काल ।
इस का निश्चित काल न भाई, स्वभावानुसार आंका जाई ।
रक्त चाप का रोगी होय, आसन करे न जन वह सोय ।
वात प्रकृति में गुणकारी, उस जन की यह हरत बिमारी ।
उसको जितना काल सुहाये, उतना काल हि वह कर पाये ।

दो०—शीर्षासन जब जन करे, कर के देखे नयन ।
लाल यदि विशेष होंय, करे न इस का चयन ॥3627 क
गुरु के सन्मुख वह करे, गुरु जाने सब हाल ।
गुरु का मत स्वीकारे, वही बतावें काल" ॥3627 ख

प्रश्न साध इक फिर कर पाया, जो था उस के मन में आया ।
कहा साध "मुझ को बतलायें, योगासन के गुण समझायें ।
इस से लाभ जो होय विशेष, जानन चाहूं वही सर्वेश" ।
कहा नाथ "तुम लो यह जान, इन से दृढ़ हो देह महान ।
अंग सभी पुष्टी को पायें, और न दुर्बल वे रह पायें ।
विशेष इन का यही गुण जान, इसी हेतु जन करें सुजान" ।
कहा साध "यह बात स्पष्ट, दुर्बलता हो योग से नष्ट ।
योग से भिन्न जो क्रिया नाथ, तुलना चाहूं उन के साथ ।

दो०—व्यायाम हेतु जन करें, बहु विध कसरत देव ।
जानन चाहूं नाथ जी, इन दोनों में भेव" ॥3628
कहा नाथ "हे साध सुजान, तेरे प्रश्न में गुण महान ।
जगती में व्यायाम अनेक, भिन्न सभी हैं एक से एक ।
*भेद लखूं मैं उन में ऐसा, सात्विक राजस तामस जैसा ।
योग के आसन सात्विक होंय, चेतनता नस नाडी गोंय ।
दुर्बल अंग सबल हो जायें, निर्मल संग सभी हो पायें ।
हृदय की गति सम रह पाये, लेश श्वास न उखड़न पाये ।
मन पर भी हो इन का प्रभाव, उपजें चित्त में सुन्दर भाव ।
करें योग योगी कहलायें, योगियों के सदृश लख पायें ।
दो०—करते जन जो योग को, उपजें उन मन भाव ।
योगिजनों के सदृश ही, हमरा बने स्वभाव ॥ 3629
योगेतर व्यायाम जो, उनमें न यह बात ।
बहिरमुखी ही मन रहे, हो व परस्पर घात" ॥ 3629
कहा साध "हे नाथ महान, मिला मुझे है अद्भुत ज्ञान ।
योगासन का दिव्य स्वरूप, मुझे बताया आप अनूप ।
यह भी सुना है मैंने नाथ, आप रहे हैं प्रभु के साथ ।
आसन जो प्रभु जी सिखलाये, आपने व जो थे कर पाये ।

---

* भाव यह है कि व्यायाम भी सात्विक, राजस, तामस भेदों में विभक्त हो सकते हैं।

(1) सात्विक—योग के आसन जिनका शरीर और मन पर शांत प्रभाव होता है ।

(2) राजस—जिन से शरीर में थकावट और मन में उत्तेजना आए ।

(3) तामस—जिन से मन में क्रोध की उत्पत्ति और शरीर को क्षति पहुंचे ।

हों अवश्य वे बहु गुणकारी, उन का ज्ञान मिले असुरारी ।
कर किरपा मुझ को सिखलायें, कृतार्थ मुझ को भी कर पायें" ।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, कहा नाथ ला मुख पर हास ।
"हे साध मैं तुम्हें बताऊं, राम प्रभु की दया जताऊं ।
देख जगती को दुख में लीन, व्याधि ग्रस्त तन मन मलीन ।
योग जो जीवन का आधार, नर नारिन ने दीन विसार ।
दो०—इसी दशा को देख कर, प्रभु उतरे संसार ।
सर्वजगत के हेत उन, कीन योग प्रचार ॥ 3630
वे सनातन योग को लाये, साधन वही दास अपनाये ।
उन साधन का करूं बखान, जिनका नहीं था जग को ज्ञान ।
वे साधन मैं तुझे सिखाऊं, कल प्रातः काल बतलाऊं ।
स्वामी ऐसा कह उठ पाये, साध भी अपने मग सिधाये ।

## दिन पंदरहवां (15) प्रातः

भयी प्रातः साधु चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, प्रभु के रहस्य को जाने सारे ।
व्यायाम दिव प्रभु जी लाये, 'जीवन तत्व' नाम रख पाये ।
वह शिक्षा तुम को दे पाऊं, पाछे दैवी गुण बतलाऊं ।
साधन सात उसमें लो जान, क्रम से करूं भी गुण बखान ।
दो०—साधन जो हैं प्रभु कहे, दिव लो उन को जान ।
* सातों के जो नाम हैं, लो उन्हें पहचान ॥3631

---

* जीवन तत्व के सात साधन—
1. सर्वोत्तान 2. स्कंधचालन, 3. पग चालन, 4. नाभिचालन, 5. जानु प्रसार, 6. नाडी चालन, 7. बालमचलन ।

'सर्वोत्तान' एक है भाई, दूजा 'स्कंधचालन' कहाई ।
तीजा 'पगचालन' लो जान, 'नाभिचालन' चतुर्थ पहचान ।
पंचम 'जानुप्रसार' कहाय, 'नाडी चालन' षष्ट सुहाय ।
'बालमचलन' को लेवो जान, सप्तम साधन यही पहचान ।
सर्वोत्तान देख लो भाई, और करो मम संग हि आई ।
भूमि पर प्रथम जन लेटे, कंघी सम दश अंगुल समेटे ।
दोनों बाजू सीधी ताने, सर की ओर ले जा अकड़ाने ।
तीन बार कर इसे दुहरावे, देह की सुस्ती सकल नशावे" ।
साधु वैसे सभी कर पाया, देख नाथ संतोष जताया ।
दो०—देख स्वामी तब कहा, "कर के कुछ विश्राम ।
चालन स्कंध का करो, और न भूलो राम ॥3632
हृदय रोग न उस पै आवे, स्कंधचालन जो नित कर पावे ।
श्वास रोग से रहता दूर, स्कंध चालन जो करे जरूर ।
क्षय का रोग निकट न आवे, स्कंध का चालन जो कर पावे ।
बैठ के आसन पर मम साथ, राखो घुटनों पर तुम हाथ ।
कंधे गोलाकार घुमावो, देख मुझे वैसे कर पावो ।
फूले सांस तभी रुक जावो, रुक कर वही पुनः कर पावो ।
"शुष्क नौली" भी इस का नाम, खाया भोजन पचे तमाम" ।
साधु ने भी वही कर पाया, प्रसन्न वदन तभी कह पाया ।
दो०—"अदभुत क्रिया नाथ जी, सीखी मैंने आज ।
अल्प परिश्रम फल बड़ा, है सत्य महाराज ॥3633

तीसरी क्रिया मुझे सिखायें, यदि मुझे अधिकारी पायें ।
कहा नाथ, "तुम हो अधिकारी, सीख रहे जो विद्या सारी ।
जिसे नहीं अधिकारी पायें, उसे नहीं हम योग सिखायें ।
"पगचालन" है तीजा साधन, स्वस्थ रहे जो करे आराधन ।
आन्तर शुद्धि इस से होवे, धातु रस देह पुष्टी गोवे ।
लेटो तुम पग पगहिं धरावो, ऐडी पर तब टांग हिलावो ।
मेरे संग तुम कर दिखाओ, और नित्य कर लाभ उठाओ" ।
पग चालन जब वह कर पाया, अगला साधन नाथ सिखाया ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, अगला साधन भी लो जान ।
अगला जानो 'नाभि चालन, सबसे उत्तम यह है साधन ।

दो०—नाभि चालन अभ्यास से, जो खाये पच जाये ।
कच्चा सेरों अन्न खाय, लेता पुरुष पचाय ॥3634 क
भूमि पर नर लेट कर, इस विध कमर हिलाय ।
दाहीं बाहीं ओर को, पलसेटे वह खाय ॥3634 ख

बीस बार पलसेटे खाये, खाया भोजन सब पच जाये ।
दुगुना उस से जो कर पाये, उसकी भूख खूब बढ़ जाये ।
युवा बाल वृद्ध व दुर्बल, साधन कर वह पाये बहु बल ।
*वृक सम होवें अग्नि समृद्ध, वृकोदर हुआ जिससे प्रसिद्ध ।
हे साध मम संग कर पाओ, नित्य करो फिर लाभ उठाओ" ।
साधु ने उन संग कर पाया, देख नाथ संतोष जताया ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, पंचम क्रिया सीखो आन ।

* वृक = भेडिया । *वृकोदर = भीम

पंचम साधन 'जानु प्रसार', आंतरिक शुद्धि का आधार।
यह आंतों की शक्ति बढ़ाये, 'आन्तर चालन' भी कहलाये।
आंतें करे पूरा जब काम, देह की शक्ति बढ़े तमाम।
बद्धकोष्टता और अजीरण, यह साधन कर हो निस्तीरण।

दो०—भूमि पर चित्त लेट कर, दायां पांव उठाय।
बायें घुटने पर धरे, दायीं टांग हिलाय ॥3635
भूमि संग स्पर्श करि, फिर ऊपर ले जाय।
उतनी बार वह करे, जिमि गुरु आज्ञा पाय ॥3635
पुनः टांग को बदल कर, बायां पांव उठाय।
दायें घुटने पर धरि, उसी विध वह चलाय ॥3635

साध करो यह मेरे पास, और जाओ फिर सह विश्वास।
सायं काल पुनः जब आओ, अगली क्रिया सीख वह पाओ"।

## दिन पंदरहवां (15) सांय

सायं भयी साधु पुनः आया, स्वामी वही प्रसंग चलाया।
कहा साध से "हे मम भाई, अगली किरया बहु सुखदाई।
साधन छटवां 'नाड़ी चालन,' जीवन तत का यह शिरोमन।
नाडी चालन करे नर नार, बढ़ावे तन की शक्ति अपार।
उदर वृद्धि को यह ले थाम, खाया भोजन पचे तमाम।
टांगों की है नस जो सारी, बाजू और कमर भी भारी।
सीना गर्दन सकल शरीर, पुष्ट करे वा बने नर धीर।

दो०—उत्तम क्रिया जान लो, नाड़ी चालन मीत ।
इस को कभी न भूलना, ले यह सुस्ती जीत ॥3636
ऐसे साधन दूजे नाहीं, स्फूर्ति देह में इतनी लाहीं ।
करें अब इस की विधि बखान, श्रवण करो तुम लाकर ध्यान ।
बैठों टांगें आगे तान, अन्तर बहुत लो उन में आन ।
भुजा फैलाय कमर घुमाओ, दायां हस्त बायें पग लाओ ।
बायां बाजू पीछे घूमे, आये फिर दायां पग चूमे ।
आओ हम दोनों कर पायें, इस क्रिया से लाभ उठायें"।
स्वामी जी व साध मिल कीना, शीघ्र आया उन्हें पसीना ।
कहा साध "हे स्वामी प्यारे, अंग खुले हैं इस से सारे ।
कितना काल इसे कर पायें, यही बात अब मुझे बतायें"।
दो०—"पांच मिनट पर्याप्त हैं", स्वामी कह दी बात ।
"कम बेश भी कर सकें, होय न हानि तात ॥3637 क
इस विध कमर घुमाय कर, टांगें भुजा फिलाय ।
पांच मिनट जो जन करे, दैहिक रोग गंवाय ॥3637 ख
अंतिम क्रिया अब बतलाऊं, इसमें भी श्रम होता पाऊं ।
'बाल मचलन' इसे कह पाते, बच्चे सम हम अंग हिलाते ।
बाल मचलन करो अब आन, करो संग बच्चे का भी ध्यान ।
कितना भी नर बूढ़ा होवे, अपने शैशव को वह गोवे ।
समझे अभी तो मैं हूं जाया, माता ने मुझे अभी खिलाया ।
मैं माता की गोद पड़ा हूं, उछल उछल परेशान करे हूं ।

माता है मुझे चुप कराती, दे लोरी है मुझे सुलाती ।
मैं पर मचल मचल के जाऊं, माता के न वश में आऊं ।
दो०—निज को बच्चा मान कर, पीठ सहारे लेट ।
हाथ पांव फटकारे, चिन्ता सकल समेट ॥3638 क
चिन्ता सकल समेट कर, करे बाल का ध्यान ।
बच्चे के जिमि रूप में, खेल रहे भगवान ॥3638 ख
शैशव का जो ध्यान दृढ़ावे, कभी वह नर न वृद्ध हो पावे ।
यह ज्ञान जो प्रभु जी दीना, उत्तम दर्शन समझ नवीना ।
सनक सनन्दन हुए पुरातन, राखा सद उन बालक का तन ।
यह विद्या थी उन अपनाई, लुप्त भयी फिर प्रभु समझाई ।
युग युग में लेकर अवतार, लुप्त विद्या का करें उद्धार ।
जीवन तत्व प्रभु जी लाये, जिस से जगती जीवन पाये ।
कच्चा आहार सात्विक भारी, शक्ति उस में होती सारी ।
प्रभु ने उस की विधि बताई, ऋषियों की परिपाट चलाई ।
उस प्रभु के किमि गुण गायें, शेष शारद भी कथ न पायें ।
दो०—प्रभु जी के उपदेश से, करते कच्चाहार ।
जन आश्रम में आय कर, पाते शक्ति अपार ॥3639 क
पाते शक्ति अपार जन, सात्विक कर आहार ।
सात्विक हो आहार जब, हो जीवन उद्धार ॥3639 ख
सात्विक अन्न बल को उपजाय, सात्विक अन्न से रोग न आय ।
सात्विक अन्न से मन रहे शांत, बुद्धि होय नहीं कभी भ्रांत ।

सात्विक अन्न बहु दोष दुराय, सात्विक अन्न न पाप कराय ।
सात्विक अन्न देवों का भोग, सात्विक अन्न ऋषियों के योग ।
सात्विक अन्न दृढ़ शक्ति दायी, दीर्घ जीवन मोद प्रदायी ।
सात्विक अन्न से आत्मिक लाभ, सात्विक अन्न खा हो अमिताभ ।
सात्विक अन्न दे सद विचार, सात्विक अन्न दे सद आचार ।
सात्विक अन्न से संत मिलाप, सात्विक अन्न हरता संताप ।
गहे जो सात्विक अन्न जरूर, पाप ताप संताप हों दूर ।

दो०—सात्विकाहारी हो जन, जन्म सुधारे सोय ।

तनमन से रह शुद्ध वह, सात्विक बुद्धि गोय ॥ 3640

हे साध अब समय हो पाया, बातों में बहु काल विहाया ।
कल प्रातः जब तुम चलि आओ, फिर तब यही प्रसंग चलाओ ।
इतना कह वे थे उठ पाये, अपने कक्ष में तब सिधाये ।

## दिन सोलहवां (16) प्रातः

भयी प्रातः साध था आया, प्रणाम कर उस याद दिलाया ।
"हे नाथ आहार की बात, आती याद रही सब रात ।
सात्विक आहार ऋषियों का भोग, जीवन तत्व कर खाते लोग ।
शास्त्र इसी का करें बखान, आज बिगड़ा क्यों खान व पान ।
मांसाहारी भयी समाज, मदिरापायी भी है आज ।

दो०—किमि परिवर्तन यह भया, वा यह कब से नाथ ।

यह गाथा बतलाय कर, करिये मुझे सनाथ" ॥ 3641

कहा नाथ "हे साध सुजान, किमि करूं सब गाथ बखान ।
प्रिय भ्रात यह दीर्घ कहानी, कर याद मुझे होत ग्लानी ।

ऋषियों का यह देश पुरातन, पनप रहा था धर्म सनातन ।
परतन्त्रता की आय लपेट, आर्ष संस्कृति को पड़ी चपेट ।
दिया संतुलन जब उस त्याग, लड़खड़ाय कर गिरने लाग ।
संभल सका न हे मम मीत, गया गिरता वह सब ही रीत"।
कहा साध "हे मम प्रिय नाथ, ऐसा भया था किस के हाथ ।
और बताओ मेरे स्वामी, किस काल यह आई गुलामी ।
तृप्त होय प्रभु मम जिज्ञास, श्रवण करूं मैं रोक के श्वास ।

दो०—हे नाथ ! बतलाइये, वही पुरानी बात ।
जिस विध था तब हो गया, इस संस्कृति का पात" ॥3642

बोले नाथ, "जिज्ञासु भाई, कथा पुरानी है दुख दाई ।
सहस्त्र वर्ष पुरातन बात, दुखद भया था यह उत्पात ।
मांसाहारी आसुर आये, उत्थल पुथल बहुत कर पाये ।
सीमा देश की कर के पार, आ थे करते नर संहार" ।
कहा साध "हे नाथ सुजान, बसें भारत में वीर महान ।
घुस कर किमि असुर यहां आये, यह बात किमि समझ में आये" ।
कहा नाथ "तू ठीक बखाना, संभव न यहां अरि का आना ।
वीरों का यह देश बखाना, लोहा जिन का जग है माना ।
अपना ही पर है यह दोष, एक दूजे पर करके रोष ।
हमने शत्रु स्वयं बुलाये, आय यहां जिन पैर जमाये ।

दो०—असुरों ने यहां आकर, लीने पैर जमाय ।
मूंह रह गये ताकते, वीर सभी निसहाय ॥ 3643

घर की फूट परम दुखदाई, घर की फूट असुर ले आई ।
घर की फूट संहारे भ्रात, घर की फूट कीना उत्पात ।
घर की फूट असुर जभी आय, और यहां जब पैर जमाय ।
मांसाहारी हो गये लोग, मांस बना जन गण का भोग ।
काल बहु रहा असुर का राज, तमो गुणी भया सकल समाज ।
'आसुर काल' उस को बखानें, युग काला भारत का मानें ।
तामस भाव तामस आचार, तामस ही सब का व्यवहार ।
असुरों ने वह चक्र चलाया, तामस काल देश में आया ।

दो०—तामस काल हि जानिये, असुरों का प्रभाव ।
मांसाहारी जन भये, शुद्ध रहे न भाव ॥3644

हत्या जीवों की कर पाते, गोवध से भी ना शरमाते ।
धर्मी जनों का करते घात, अधर्म फैलाते दिन व रात ।
उन का मत उन का व्यवहार, उन का तामसिक सब आचार ।
उसे न मानें जो नर नार, उन का जीना था दुश्वार ।
अधर्मी जन अनेक बनाये, बहुतों के उन शीश कटाये ।
मान जो उन का मत न पाये, यातना दे सभी मरवाये ।
वह था एक भयंकर काल, जब जनता का बिगड़ा हाल ।
रीति रिवाज उन निज त्यागे, मांसाहारी होने लागे ।
हे साध मैं तुझे बतलाया, मांसाहार किमि यहां आया ।

दो०—मांसाहारी जन भये, त्यागी निज मर्याद ।
आगे की अब मैं कहूं, जो हुआ इस बाद ॥3645

सायं को अब तुम आ जाना, आगे की घटना सुन पाना ।

# दिन सोलहवां (16) सायं

कह ऐसे स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।
सायं भयी साधु चलि आया, सद्गुरु को आ शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साधु सुजान, स्मरण क्या जो कीन बखान" ।
कहा साध "हे सद्गुरु नाथ, बैठ प्रातः चरण के साथ ।
जो भी श्रवण किये उपदेश, स्मरण हैं मुझ को हे देवेश ।
शाकाहारी जो था देश, मांसाहारी भया विशेष ।
उस से आगे की कुछ बात, सुनने बैठा हूँ साक्षात ।
दो०—उस से आगे जो भया, वही बतावें नाथ ।
खान पान की यह कथा, एक अनोखी गाथ" ॥ 3646
कहा नाथ "हे साध ज्ञानी, कहने में यह होत ग्लानी ।
पवित्र भारत देश महान, हैं जहां ऋषियों की संतान ।
असुर वहां पहले थे आये, मांसाहार संग जो लाये ।
वहां दानव फिर आन धमाके, संग मांस के मदिरा लाके ।
मदिरा मांस पिशाचन जोडी, भारत की इस कमर ही तोड़ी ।
जिन वीरों में युद्ध का जोश, भये मदिरा में वे मदहोश ।
*गुलामी सदियों की जो मीत, भयी पुख्ता वह इस ही रीत ।
मदिरा ने शरीर बीगाड़े, मदिरा ने दिमाग बीगाड़े ।
मदिरा ने मन कीन मलीन, मदिरा ने जन कीने दीन ।
मदिरा से फिर कलह क्लेष, मदिरा से दुख आये विशेष ।

* पुख्ता—पक्की ।

दो०—सब दोषों की खान यह, मदिरा को लो जान ।
दानव की यह देन है, भारत को पहचान ॥3647क
प्रभु जी ने निज देश को, देखा जब इस हाल ।
करता भक्षण मांस का, मदिरा में बेहाल ॥3647ख
तभी प्रचारा योग उन, और कहा ललकार ।
"हे ऋषियों के वंशज, कीना कभी विचार ॥3647ग
क्या थे, क्या अब हो गये, धर्म कर्म को भूल ।
आओ सीखो योग को, जो धर्मों का मूल" ॥3647घ
प्रभु जी ने तब योग सिखाया, सात्विकाहार साथ बताया ।
"कच्चाहार करो तुम लोग, वन में ऋषियों का जो भोग ।
इस से देह रहे नीरोग, बलिष्ट बनें सब इस से लोग ।
जीवनतत करो संग भाई, अन्न पचे बिन देर लगाई" ।
इस विध जनता को समझाया, सन्मार्ग पर उन्हें लगाया ।
समझी भक्तों ने सब बात, तामसिक अन्न करत उत्पात ।
सात्विकाहार उन अपनाया, मांस आहार उन ठुकराया ।
हे साध क्या समझी बात, जीवन तत्व की करामात ।
दो०—जीवनतत्व सिखाय कर, दी शिक्षा सप्रीत ।
मदिरा मांस त्याग कर, स्वस्थ रहो सब रीत" ॥ 3648
साधु को यह सभी बतलाय, स्वामी जी फिर उसे कह पाय ।
"हे साध क्या उत्तर पाया, जो विचार तव मन था आया" ।

कहा साध "हे नाथ महान, आपसे पाया जो है ज्ञान
विलक्षण है यह इक कहानी, राम प्रभु की महिमा जानी
जो हैं साधन और बताये, प्रभु से सीख आप जो पाये
कर किरपा वे भी बतलायें, सीख आप से हम ले पायें"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, प्रभु बताय जो आसन सारे
वे सभी मैं कथ नहीं पाऊं, कुछ उन में से तुझे सिखाऊं

दो०—अथाह समुद्र योग का, प्रभु का था स्वरूप ।
जिस की सीमा जगत से, रही सदा ही गूप ॥364॥
उसी सागर के छोर को, छू पाया यह दास ।
अपनाया तब नाथ ने, जब देखा दास उदास ॥364॥

प्रभु के पास बहु आते लोग, और बतलाते अपने रोग।
प्रभु कराते सभी को योग, जिस से दूर भयें बहु रोग।
रोगी निज थे रोग सुनाते, प्रभु उन्हें उपचार बताते।
सेवक शिक्षा इस से पाता, यौगिक साधन वह अपनाता।
युवक कई आश्रम में आते, आसन उन्हें प्रभु करवाते।
कहें नाथ युवकन के ताहीं, लचक व शक्ति रहे तन माहीं।
कार्य कुशल देह इस विध होय, सीखों आसन नित्य आ सोय"।
बोला साध "नाथ समझाओ, कौन से आसन अब बतलाओ"।
नाथ कहा "वेला हो पाया, चल विश्राम करें मन आया।
प्रातः जब आओगे भाई, सीखो आसन तुम मन लाई।

दो०—देख काल है हो गया, सायं का हे साध ।
संध्या वन्दन जा करो, प्रभु को लो आराध ॥3650

## दिन सतरहवां (17) प्रातः

स्वामी उठे, साध उठ पाया, निज निज कर्म में मन लगाया ।
भयी प्रातः साधु चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, आज कहूं वे आसन सारे ।
*युवकों को जो प्रभु करवाते, प्रसन्न वदन सभी कर पाते ।
वे आसन कुछ हैं इस रीत, नाम सुनों उन के सप्रीत ।
'सर्वांग' वा 'पश्चिमोत्तान', 'सर्पासन', वा 'सिद्धमहान' ।
'धनुरासन' के कौन समान, 'हलासन' को भी लेवो जान ।
'ऊष्ट्रासन' और 'वज्र' भाई, 'बद्धपद्म' की करो कमाई ।
'चक्रासन' नहीं जाना भूल, 'मयूर, स्वास्थ्य का है असूल ।
'शीर्षासन' 'वृक्षासन' मीत, 'वृश्चिक करिये संग यह रीत ।

दो०—चतुदर्श आसन ये गिने, नवयुवकों के हेत ।
करते प्रभु के साथ थे, युवा स्वास्थ्य के हेत ॥3651 क
अब हम आसन ये करें, मिल कर मेरे मीत ।
सीख सको सब इस तरह, सारी इन की रीत ॥3651 ख

देख मुझे तुम करते जाना, कठिन लगें तो तब बतलाना ।
आसन सर्वांग कर लो मीत, जाओ लेट भूमि पर चीत ।

---

* नव युवकों के लिए विशेष आसन, सर्वांग, पश्चिमोत्तान, सर्प, सिद्ध, धनुर ।
हल, ऊष्ट्र, वज्र, बद्धपद्म, चक्र, मयूर, शीर्ष, वृक्ष, वृश्चिक ।

कटि को टांगों सहित उठाओ, दे सहारा भुजा का पाओ।
इस विध ठहरो जितना चाहो, इस आसन से लाभ उठाओ"।
साध सर्वांग आसन कीना, और प्रश्न नाथ से कीना।
"हे नाथ मुझ को समझाओ, इस आसन का लाभ बताओ।
इस आसन का नाम महान, सभी अंगों का कीन बखान।
बात स्पष्ट तभी हो पावे, गुण खास जो कथन में आवे।

दो०—गुण विशेष सर्वांग के, कथन करें हे नाथ।
सब आसन सिखलाय कर, करिये मुझे सनाथ" ॥ 3651
सुन कर उस की बात को, कहन लगे तब नाथ।
"साध प्रश्न जो कीना, सुनो ध्यान के साथ ॥ 3652

इस आसन के गुण बहुतेरे, कह दूं कुछ मैं सन्मुख तेरे।
पहला गुण तो लो यह जान, वायु नाशक इसे पहचान।
पेट में वायु होवे भाई, आसन करें निकल वह जाई।
वात से होवे जो भी रोग, आसन सर्वांग करत निरोग।
हिरदय को यह सबल बनाये, मस्तक को भी बल दे पाये।
सूजन पाओं की हो दूर, टली नाफ़ हो ठीक जरूर।
गुण और भी कई हैं भारी, हर लेता यह बहुत बिमारी।
नित्य करो यह आसन भाई, अंगों सब को यह सुखदाई।

दो०—सुखपूर्वक इस को करो, सुख दायक यह जान।
आसन यह सर्वांग है, बहुत सुखों की खान ॥ 3653

आसन दूजा पश्चिमोत्तान, इस के भी हैं लाभ महान।
मेरे संग तुम कर लो साध, तुम्हें न होगी इस में बाध।

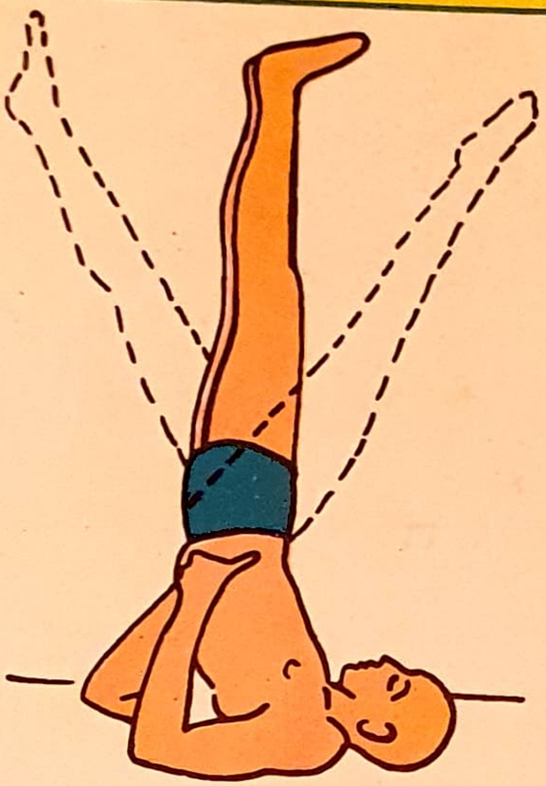

सर्वांग आसन / SARVANG ASANA

पश्चिमोत्तान आसन / PASHCHIMOTTAN ASANA

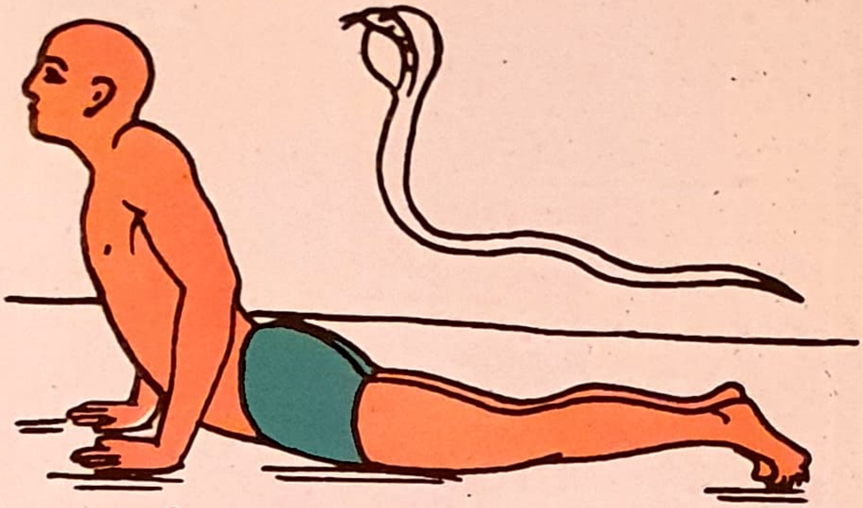

सर्प आसन / SARP ASANA

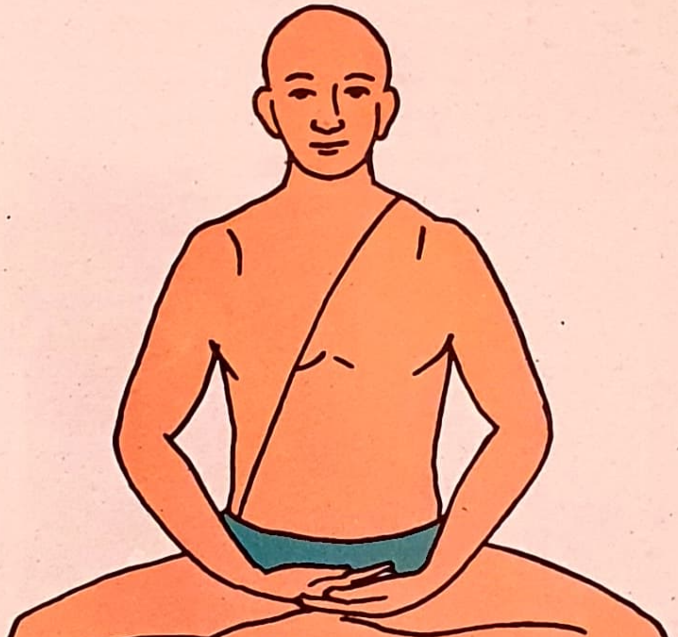

सिद्ध आसन / SIDDH ASANA

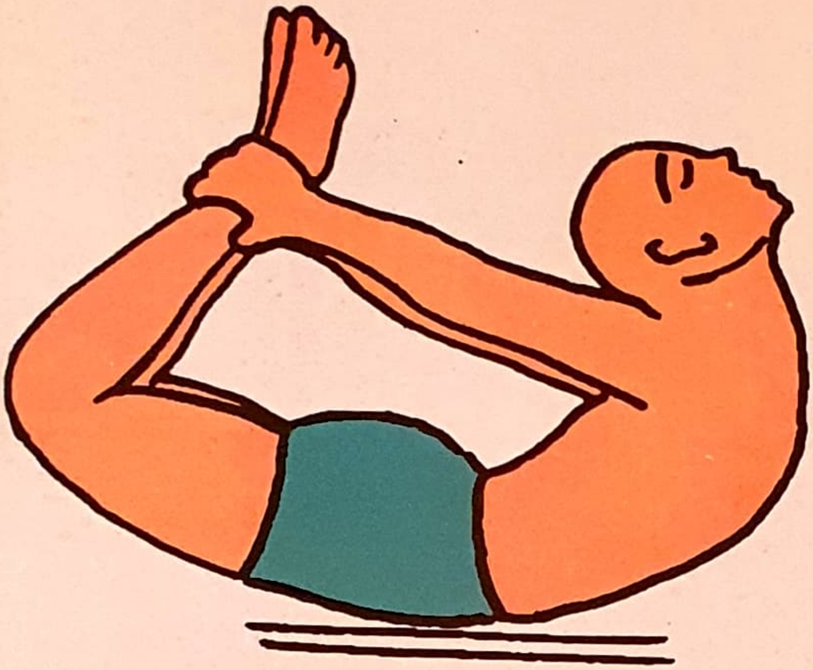

धनुर आसन / DHANUR ASANA

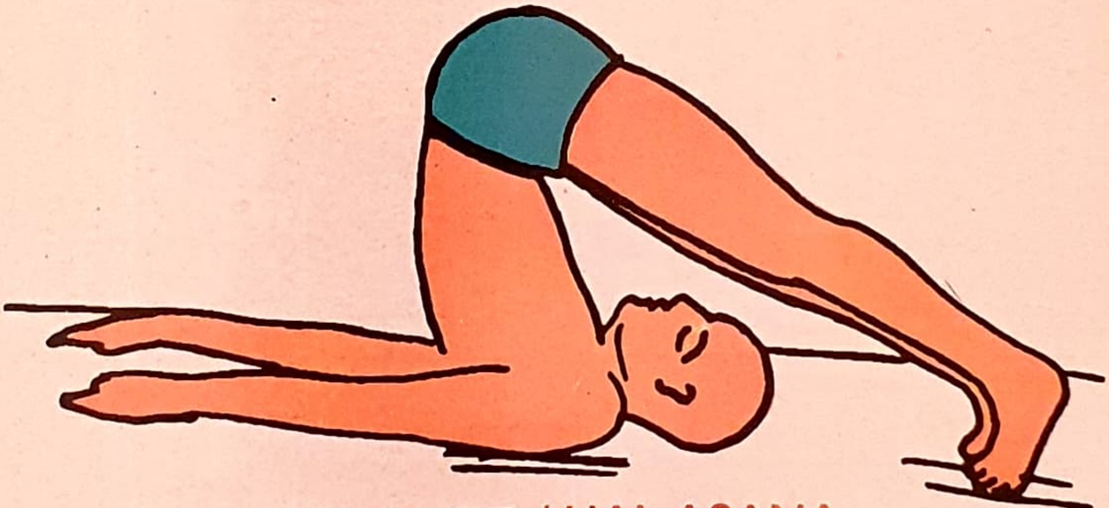

हल आसन / HAL ASANA

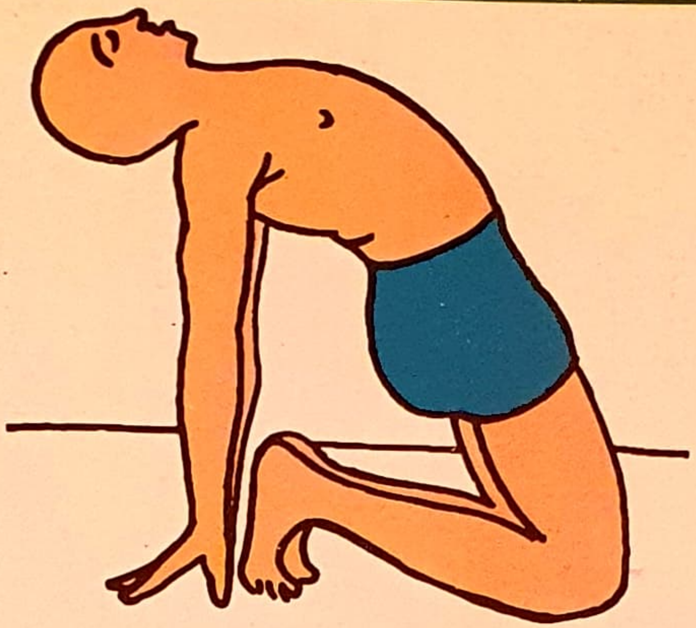

ऊष्ट्र आसन / USHTRA ASANA

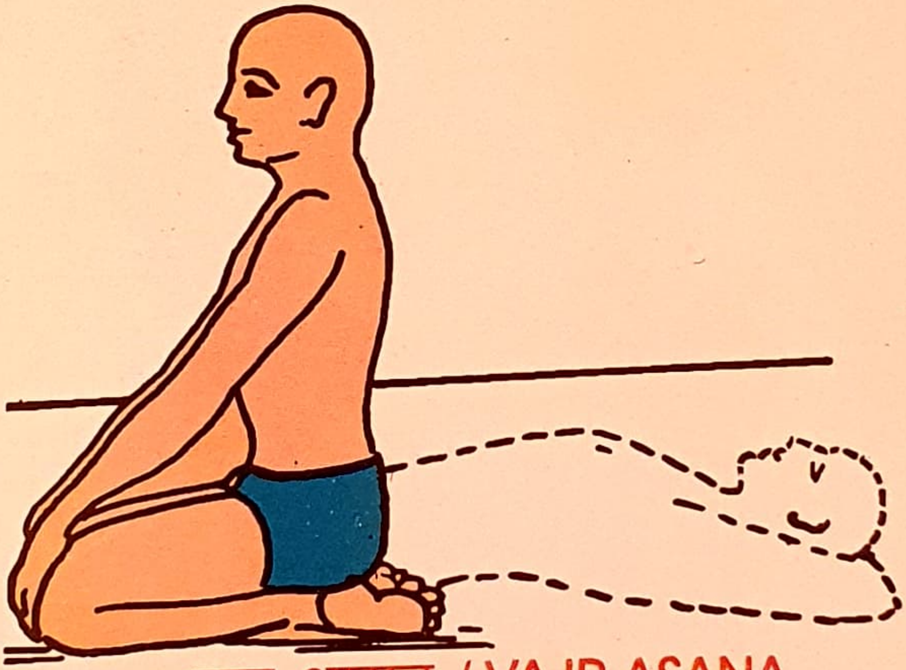

वज्र आसन / VAJR ASANA

बद्ध पद्‌म आसन / BADDHA PADM ASANA

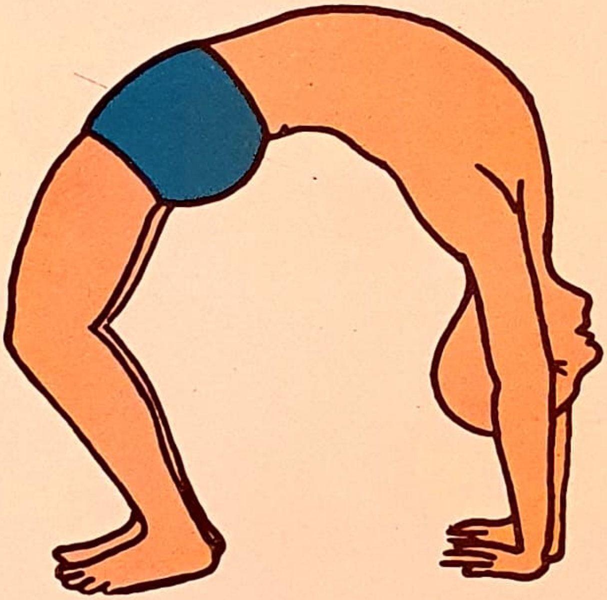

चक्र आसन / CHAKR ASANA

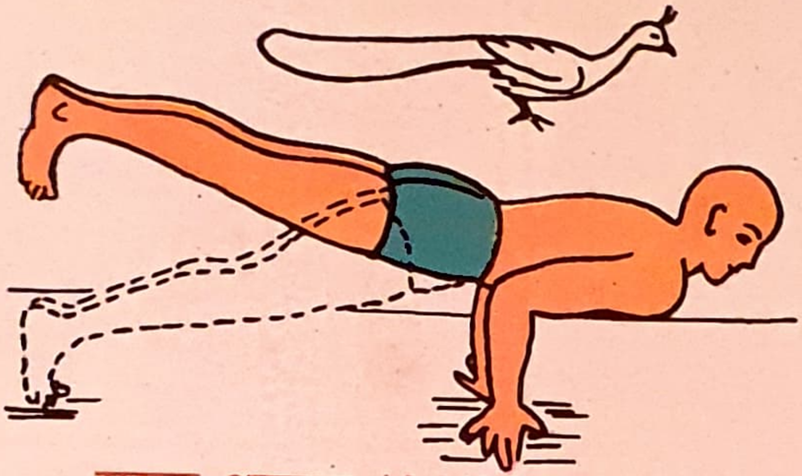

मयूर आसन / MAYUR ASANA

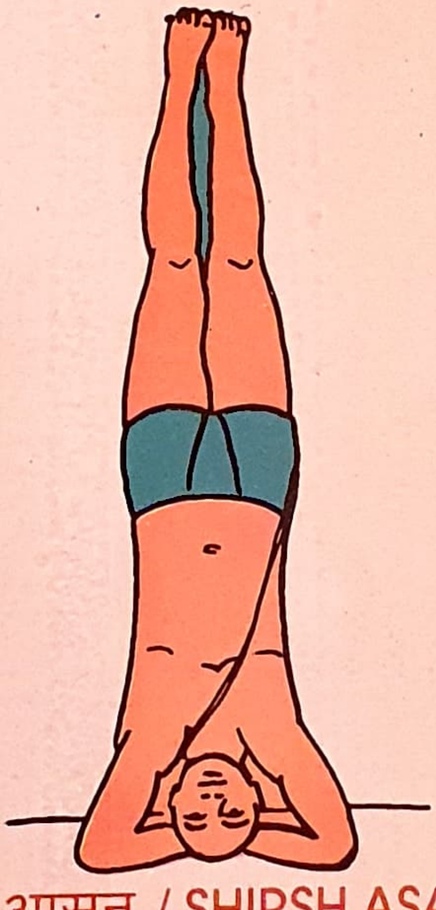

शीर्ष आसन / SHIRSH ASANA

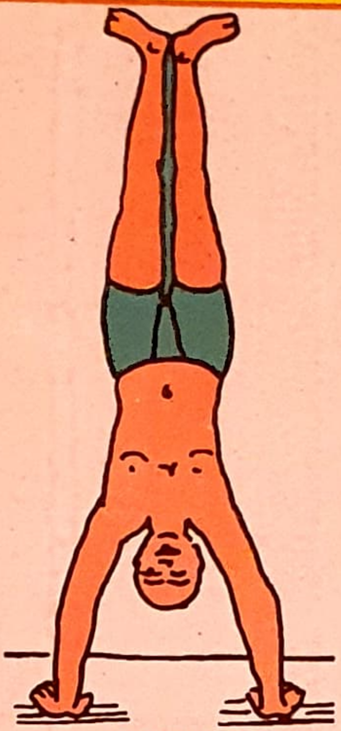

वृक्ष आसन / VRIKSH ASANA

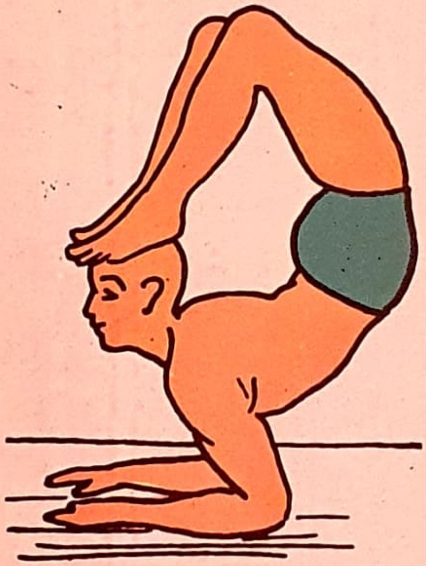

वृश्चिक आसन / VRISCHIK ASANA

दो टांगें फैला कर भाई, पकड़ो पैर बाजु फैलाई ।
घुटनों ऊपर सर ले जाओ, रुको वहां जितना रुक पाओ ।
मेरी टांगों को लो देख, पूरी सीधी हैं लो पेख ।
तेरी टांगें सीधी नाहीं, नित करने से हो वे जाहीं ।
घुटनों तलक भी सर न आये, नित अभ्यास से हि हो पाये"।
कहा साध "हे मेरे नाथ, इस के लाभ भी कह दो साथ ।

दो०—इस आसन के लाभ जो, मुझे बताओ खास ।
आसन जानूं कठिन यह, नित्य करूं अभ्यास" ॥3654

कहा नाथ "हे साधु सुजान, आसन यह इक उत्तम जान ।
प्रथम लाभ इस का यह जानो, कटि में शक्ति आए पहचानो ।
दूसर लाभ जान यह भाई, उज्ज्वलता मस्तक में आई ।
*प्राण की शक्ति बढ़े महान, नित्य करो इस के गुण जान ।
सर जब घुटनों पर लग जाए, स्फूर्ति तन में बहु बढ़ जाए ।
कुण्डली पर भी हो प्रभाव, सिद्ध पुरुष यह समझें भाव ।
दीर्घ काल जो कर ले भाई, कुण्डलि जागृत भी हो जाई ।
कुण्डलि में जो ध्यान धराये, दीर्घ काल तक भी कर पाये ।
लाभ उसी को ऐसा होवे, यत्न करे और सिद्धि गोवे।

दो०—इस आसन के लाभ जो, कथन किये हैं मीत ।
दीर्घ काल अभ्यास कर, प्राप्त करो ला चीत ॥ 3655 क
अब आना तुम शाम को, कथन करेंगे और ।
ज्ञान योग का ही मिले, राम लाल के ठौर ॥3655 ख

** प्राण—प्राणनाडियां—NERVOUS SYSTEM

## दिन सतरहवां (17) सायं

सायं भयी साधु चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया।
देखा साधु को जभी आया, स्वामी जी मुख से फरमाया।
"आसन तुझे कहूं मैं भाई, आसन जो है सर्प कहाई।
इसे करो तुम मेरे साथ, उलट लेटो कर नीचे माथ।
ऊपर सीना इमि उठ पाये, निज फन को जिमि सर्प उठाये।
दायें बायें शीश घुमाओ, इस से लाभ विशेष उठाओ"।
साधु ने यह सभी कर पाया, प्रश्न नाथ से फिर कर पाया।
"इस का लाभ बताईये नाथ, जानना चाहूं यह भी साथ।
कितना काल इसे कर पायें, जिस से पूरा लाभ उठायें।

दो०—इस प्रश्न का नाथ जी, उत्तर देंय जरूर ।
भ्रांती मेरे चित्त की, हो शीघ्र जिमि दूर" ॥3656

कहा नाथ "हे साध प्यारे, हैं ठीक ये प्रश्न तुम्हारे ।
सर्पासन हैं शक्ति का दाता, आंतों को लाभ पहुंचाता ।
हो यदि छाती में कुछ रोग, सर्पासन उसे करत निरोग ।
सीना सिकुड़ा हो यदि भाई, सर्पासन से खुल वह जाई ।
शक्ति अनुसार करे जन जोय, हानि इससे न कुछ भी होय ।
अगला आसन कह दूं भाई, सिद्धासन जो सदा कहाई ।
उस आसन की विधि लो जान, मेरे संग करो तुम आन ।
वाम पांव गुद मूल टिकाओ, दक्षिण उस ऊपर रख पाओ ।
काया सीधी होवे तेरी, देखो जैसी है अब मेरी ।

दो०—काया, गर्दन, शीर्ष को, रख कर सीधा मीत ।
एक घड़ी नित बैठना, प्रभु पग रख कर चीत ॥ 3657 क
कुण्डलि जागृत हो सके, देखो कर अभ्यास ।
लाभ सफलता हो उसे, जिस के मन विश्वास" ॥3657 ख
साधु ने जभी सुन यह पाया, उसके मन उत्साह समाया ।
मैं तो नित्य करूं अभ्यास, गुरु शिक्षा में रख विश्वास ।
सद्गुरु से तब कह वह पाया, "आप मुझे जो कुछ बतलाया ।
मैं करूंगा वही अभ्यास, शिक्षा और अब दीजो खास ।
शिक्षा यह जो पायी स्वामी, धन्य जन्म मम अन्तर्यामी ।
और आसन जो है मम नाथ, वह बतला कर करें सनाथ"।
कहा नाथ "अब यह समझाऊं, धनुरासन मैं कर दिखलाऊं ।
औंदा लेट भूमि पर जाओ, दोनों पैर पकड़ दिखलाओ ।
दो०—दोनों पांओं पकड़ कर, तन को देवो तान ।
खींचो इतने जोर से, तन की बने कमान" ॥ 3658
साधु तभी ऐसा कर पाया, उसका तन न धनुष बन पाया ।
घुटने उठे न धरा से ऊपर, सटे रहे वे भूमि ही पर ।
कहा नाथ "अब ज़ोर लगाओ, करो यत्न तुम जांघ उठाओ"।
जोर तभी उस बहुत लगाया, धनुषाकार न तन बन पाया ।
कहा नाथ "तुम मत घबराओ, सिद्धि नित्य करो तब पाओ" ।
कहा साध "मैं आज्ञा मानूं, अभ्यास बिना न सिद्धि जानूं "।
मैं समझी है सारी रीत, यत्न करूंगा सहित प्रीत ।
सफल होय मैं आ दिखलाऊं, आशीर्वाद नाथ से पाऊं ।

दो०—इसे सिद्ध कर नाथ जी, दिखलाऊंगा आन ।
तभी दिखाऊं आन कर, तन जब बने कमान ॥ 3559

हे नाथ मुझे अब बतलायें, इस आसन के गुण कह पायें ।
आसन कठिन पर लाभ महान, समझ पाया हूं मैं भगवान" ।
स्वामी जी उसको बतलाया, धनुरासन का लाभ जताया ।
और कहा "हे साध सुजान, धनुरासन के लाभ महान ।
वायु का हो देह पै प्रकोप, हो जाता शीघ्र उस का लोप ।
बढ़ा पेट शीघ्र घट जाता, मल न देह में रुकने पाता ।
रक्त स्राव हो तन में ठीक, रहे श्वास की गति भी ठीक ।
धनुष करत जिमि शत्रु संहार, धनुरासन से रोग संहार ।

दो०—धनुरासन जो नित करे, रोग न आयें पास ।
* उससे रहें दूर यह, रोग श्वास व कास ॥ 3660

हे साध अब तुम चलि जाओ, प्रातः काल लौट के आओ" ।
गुरु का सुन आदेश वह साध, चला गया निज घर बिन बाध ।

## दिन अठारहवां (18) प्रातः

प्रातः भयी पुनः वह आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, हलासन का मैं अब दूं ज्ञान ।
हल करता जिमि क्षेत्र शोध, हलासन से हो तन का शोध ।
इसकी विधि को लो गे जान, करो जभी तुम मम संग आन ।
जाओ भूमि पर सीधे लेट, शिथिलित कर के धड़ और पेट ।

* श्वास रोग—दमा,
* कास रोग—खांसी ।

दोनों टांग उठा कर मीत, ले जा सर की ओर सप्रीत ।
हल समान है तन हो पाया, हलासन है तभी कहलाया ।
दो० — हलासन में स्थिर रहो, यथेच्छा तुम मीत ।
दृढ़ता आये पीठ में, एकाग्र होय चीत ॥ 3661 क
मेरु दण्ड जो पीठ में, देह का वही स्तंभ ।
हलासन को नित्य तुम, कल से कर आरंभ ॥ 3661 ख
हलासन से बहु शक्ति आवे, इससे तन बहु दृढ़ हो पावे ।
नाडिन के जो चक्र कहावें, षट् चक्रन जो नाम धरावें ।
मेरु दण्ड में जिनका स्थान, हलासन से हो लाभ महान ।
हलासन को जो करत हमेश, स्फूर्ति देह में रहे विशेष ।
सीधा बैठे, सीधा चाले, पीठ की पीड़ उसे न साले ।
आयु भर नहीं कूबड़ आवे, युवक समान सदा रह पावे ।
भागे दौड़े, न थके विशेष, हलासन के हैं गुण ये लेश ।
गुरु से सीख कर हि कर पावे, गलत करे तो हानि उठावे ।
दो० — रहे सदैव स्मरण यह, सीखें गुरु से योग ।
देखा देखी जो करें, हानि उठावें लोग" ॥3662
कहा साध "हे नाथ प्यारे, वचन आप के सुन कर सारे ।
भया मन मेरे दृढ़ विश्वास, योग धर्म जग में हैं खास ।
जिसका कीन प्रभु उद्धार, कर रहे आप जिस का प्रचार ।
जो कुछ मैंने है सुन पाया, मेरे हिरदय बीच समाया ।
मैं मानूं गा तव उपदेश, प्रभु का जान कर यह आदेश ।
और जो आगे है बताना, श्रद्धा से सब मैं सुन पाना ।

वह कथिये अब मेरे नाथ, श्रवण करूं और बनूं सनाथ" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, प्रभु सिखलाये आसन सारे ।

दो०—प्रभु ने जग में आन कर, जगती दीनी तार ।
ऐसा योग बतलाया, जो जीवन आधार ।।3663 क
आगे का जो आसन, वह बतलाऊं मीत ।
ऊष्ट्र आसन नाम सुन, रहे सदा तव चीत ।।3663 ख
ऊष्ट्र आसन ऊष्ट्र सम, शक्ति दायक जान ।
नित्य करे जो सीख यह, बने वह शक्तिमान ।।3663 ग

ऊष्ट्र आसन तुझे बताउं, अपने संग मैं अब कराऊं ।
पैरों को लो पीछे डार, घुटनों पर हो देह का भार ।
ऐडियों पर रख दोनों हाथ, कमर उठाओ उस के साथ ।
*सर को पीछे तुम लटकाना, सीना हो जिमि ऊंट कुहाना" ।
ऊष्ट्र आसन साधु कर पाया, स्वामी जी संतोष जताया ।
साधु ने तब कहा "हे नाथ, इसके गुण भी कह दो साथ" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, इसके गुण तो बहु हैं सारे ।
यथा शक्ति इस को कर पाओ, शिथिल पुनः तन कर दिखलाओ ।
नस नाडी चेतन हो जाये, देह में खूब स्फूर्ति आये ।

दो०—ऊष्ट्रासन के कारणे, तन सबल हो जाये ।
सहन शील साधक बने, ऊष्ट्र जिमि दिख पाये ।3664

---

* कुहाना—ऊंट की पीठ का उभरा हुआ भाग ।
* ऊष्ट्र आसन में जब पेट और छाती ऊपर तानते हैं तो छाती ऊपर उठी हुई ऊँट के कुहान जैसी लगती है ।

जो जन इसको नित कर पाये, उसकी कमर न दुखने आये ।
ऐडी से चोटि तलक शरीर, स्वस्थ रहे हो चित्त भी धीर ।
अब सुनो मैं और बतलाऊं, अगला आसन भी करवाऊं ।
वज्र आसन है उस का नाम, जानो शक्ती का महा धाम ।
पैरों को पीछे ले जाओ, घुटनों ऊपर हाथ धराओ ।
कमर को राखो सीधी मीत, बैठो जब चाहो इस रीत ।
अब तुम सर पीछे ले जाओ, भूमि ऊपर लेट ही पाओ ।
सुप्त वज्र है इसका नाम, इसे शांति का जानों धाम ।
दो०—चाहो जितना लेट लो, इस आसन में मीत ।
स्मरण करो प्रभु नाम को, बढ़े चित्त में प्रीत" ॥3665

## दिन अठारहवां (18) सायं

इतना कह उठ पाये नाथ, कहा साध को इसके साथ ।
"तुम आओ जब सांय काल, अगला आसन कहें उस काल ।"
साधु तब ही गया वह चाल, आ गया पुनः सायं काल ।
कहा नाथ "अब मैं बतलाऊं, आसन बद्ध पद्म सिखलाऊं ।
इस आसन के गुण हैं जोय, बतलाऊं गा तुझे वे सोय ।
देख मुझे तुम भी कर पाओ, इस विध सीख शीघ्र ही जाओ ।
दाहिनां पांव जांघ धराओ, बायां दूज जांघ रख पाओ ।
आसन बद्ध गया यह ऐसे, जल पर खिला कमल हो जैसे ।
जैसे आसन प्रभु लगाया, आसन वैसे ही बन पाया ।
दो०—आसन मेरे नाथ का, जो देखे मन लाय ।
आसन तब उस साध का, शीघ्र सिद्ध हो जाय ॥ 3666

यह सामान्य पद्म है भाई, बद्धपद्म यह ही हो जाई ।
पीछे से तुम हाथ घुमाओ, पैर अंगूठे छू दिखाओ ।
बद्धपद्म यह आसन मीत, इस के गुण तुम लो चित्त चीत ।
श्वास रोग से पीड़ित जोय, इसी आसन से लाभ विगोय ।
सिकुड़ी छाती जिस की होय, इस से वह विशालता गोय ।
झुकी कमर सीधी हो जाय, टांगों का भी दोष नशाय ।
इस में बैठ समाधि लगावें, ध्यान मग्न योगी हो जावें ।
समान्य पद्म है तुम लगाया, बद्धपद्म नहीं कर दिखाया ।

दो०—बद्ध पद्म भी देखलें, सको लगा क्या मीत ।
क्रिया कठिन हम जानते, यत्न करो ला चीत ॥3667

स्वामी जी की इच्छा जान, यत्न किया उस साधु सुजान ।
पांव तलक न पहुंचे हाथ, कहन लगा "हे मेरे नाथ ।
यत्न करूंगा मैं भी देव, और दिखाऊं आ तव सेव ।
अगला आसन मुझे बतायें, अपने संग हि उसे करायें ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, अगला आसन चक्र लो जान ।
इस आसन के करने बारे, चुस्त रहें वे दिन भर सारे ।
मैं तुम्हें यह कर दिखलाऊं, अपने संग हि तुझे कराऊं ।
लेट भूमि जन सीधा जाय, घुटनों को ले उच्च्व उठाय ।
कंधों पास वह हाथ थमाय, धड़ पूरा तब उच्च्व उठाय ।

दो०—धड़ ऊपर उठाय करे, निज तन चक्राकार ।
चक्रासन इस को कहें, इसके लाभ अपार ॥3668

कहा साध "गुरु हे महाराज, आसन सीखे बहु मैं आज ।
हल, ऊष्ट्र और वज्र आसन, बद्धपद्म भी कीना आसन ।
चक्रासन जो अब बतलाया, सब से कठिन मुझे लग पाया ।
चक्र सम क्या तन मम होय, भूमि से भी न सके उठ सोय ।
इस का भी कुछ कहें उपाय, जिस से आसन सिद्ध हो जाय" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, चक्रासन तुम लीना जान ।
अभ्यास से ही सिद्ध यह होय, अभ्यास बिना कुछ नर न गोय ।
कर अभ्यास पुनः चलि आना, और मुझे फिर कर दिखलाना ।

दो०—अगला आसन सीख लो, उस का नाम मयूर ।
यह भी आसन कठिन है, करना यत्न ज़रूर ।। 3669

मयूर आसन के गुण महान, अभ्यासी समझे हि गुणवान ।
साधन कठिन महा गुणकारी, आंतों की यह हरत बिमारी ।
दुर्बल आंतें शक्ति ग्राहें, पाचन अन्न सुगम कर पायें ।
भुजाओं में हो बल संचार, तोल करें जो देह का भार ।
मेरी ओर तुम देखो साध, और यत्न से लो आराध ।
तलियों को तुम भूमि टिकाओ, कुहनियां नाभि पर धर पाओ ।
तन को सीधा रख कर तोलो, हाथों पर हि भार को ले लो" ।
साध ने यत्न बहु कर पाया, देह को ज़रा उठा न पाया ।

दो०—विवश उसी को देख कर, कहा नाथ समझाय ।
"करत निरन्तर यत्न जो, वही सफलता पाय ।।3670 क

अब सायं है हो गई, नित कर्म कर पायें ।
कल प्रातः होय जभी, फिर यहीं मिल पायें ।।3670ख

## दिन उन्नीसवां (19) प्रातः

भयी प्रातः साध चलि आया, आय नाथ को शीश झुकाया ।
आशीर्वाद नाथ से पाया, और विनय उन से कर पाया ।
"कौन आसन मुझे सिखलावें, सन्मुख अपने मुझे करावें ।
नित्य करूं मैं आसन सीख, बेशक लो तुम मेरी परीख" ।
कहा नाथ "मैं तुझे सिखाऊं, आसन शीर्ष अब मैं कराऊं ।
आसनों में शिरोमन माना, इसका गुण है बहुत बखाना ।
हाथों की कंघी बनवाओ, उस में अपना सिर धर पाओ ।
टांगों को ऊपर ले जाओ, उलट खड़े इस विध हो पाओ ।

दो०—सर पर खड़ इस विध रहो, थोड़ा ही तुम काल ।
टांगें नीचे लाय कर, चित्त पड़ो तत्काल ॥3671

भूमि पर तब लेट जो पायें, शव आसन उस को कथ पायें ।
तन को करें हम शिथिल महान, मन को भी करें उसी समान ।
भूमि संग तन हो तब ऐसे, समा रहा हो उस में जैसे ।
शवासन के हैं लाभ महान, बोझ उतरें तन मन के जान ।
लाभ शीर्षासन के लो जान, करे यह जन को बुद्धिमान ।
गुरु की शरणी जो कर पावे, वह ही पूरा लाभ उठावे ।
रुधिर का सर में हो संचार, लाभ दायक जो हर प्रकार ।
कितना काल इसे कर पावे, अथवा नहीं इसे कर पावे ।
इसका रहस्य गुरु ही जाने, गुरु भक्त यह सत्य कर माने ।

दो०—गुरु का है आदेश यह, करो न गुरु बिन योग ।
गुह्य विद्या इसे कहें, पारंगत जो लोग ॥ 3672

कहा साध "हे योगीराज, यह भी मुझे बतलावें आज ।
आशंका किस हानि की होय, सतर्क किया जो है तू मोय ।
शीर्षासन में रह सावधान, करूं वैसे जिमि देवें ज्ञान" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, शीर्षासन हो किसी सहारे ।
सर पर जन जब खड़ हो पावे, गिरने का तब भय चलि आवे ।
संग दिवार इसे कर पावे, अथवा को जन पकड़ दिखावे ।
तब तक ऐसे ही कर पावे, जब तक नहीं सफलता आवे ।
एक बात जन और ले जान, नरम आसन पर करे सुजान ।

दो०—कठोर तल पर जन करे, या कहीं गिर पाये ।
हानी की आशंक हो, यह न भूलन पाये ॥ 3673

बात याद इक यह रह पाये, दबाव अधिक न सर पर आये ।
हाथों पर ही रहे बहु भार, इस का राखो सदा विचार ।
शक्ति अनुसार करके आसन, लेट जाए करने शवासन ।
शवासन कर पुनः वह देखे, आंखें निज दर्पन में पेखे ।
अगर लाल उन को बहु पावे, शीर्षासन तब नहीं लगावे" ।
स्वामी की सुन ऐसी वाणी, साध कहा "सद्गुरु विज्ञानी ।
सदा ही क्या वह न कर पावे, जिस की आंख लाल हो जावे ।
या इस का कुछ है उपचार, यह बतलावें किरपा धार ।

दो०—यदि इस का उपचार हों, वह बतलावें नाथ ।
शीर्षासन के लाभ से, वञ्चित हो न नाथ" ॥3674

सुनी साध की बात स्वामी, कहन लगे वे अन्तर्यामी ।
हे साध तव संशय ठीक, आसन करे जन हो निर्भीक ।

जाने जन जो योग का सार, 'दुग्ध नेति' कहें है उपचार ।
दुग्ध नेति कुछ दिन कर पायें, आंख लाल होनी रुक जायें ।
यह भी कथनी में है आया, अति स्थूल हो जिस की काया ।
शीर्षासन को करे न सोय, जब तक दोष यह दूर न होय" ।
कहा साध "हे स्वामी प्यारे, क्या साधन यह दोष निवारे ।
आप को सकल विदित उपाय, यह भी नाथ कथन में आय ।

दो०—वह उपाय हे नाथ जी, अब कथनी में आय ।

स्थूलता हो दूर जिमि, शीर्षासन कर पाय ॥ 3675

## दिन उन्नीसवां (19) सायं

कहा नाथ "हे साध सुजान, समय गया है बहुत विहान ।
सायं काल जभी चलि आओ, प्रसंग यही फिर तुम उठाओ ।
उत्तर देंगे उस ही काल, सुन्दर तेरा है यह सवाल" ।
सायंकाल साधु चलि आया, कर प्रणाम बैठ वह पाया ।
कहा साध "हे सद्गुरु दयाल, पूछूं मैं फिर वही सवाल ।
अति स्थूल अब तन हो जाये, उसमें तनुता किस विध आये ।
शीर्षासन के नहीं वह योग, किस योग के होत वह योग ।
किरपा कर के मुझे बताओ, मेरा संशय आप दुराओ ।

दो०—यह संशय मम नाथ जी, कीना था जो प्रात ।

आप निवारण कर सकें, योगि सिद्ध साक्षात" ॥ 3676

कहा नाथ "हे साध सुजान, प्रथम मिला था जो तुझे ज्ञान ।
वही बात मैं फिर कह पाऊं, प्रभु बतलाया वह बतलाऊं ।
जीवन तत्व जो प्रभु सिखाया, जग ज्ञान जो नूतन पाया ।
जीवन तत्व करे जो साध, श्रद्धा से ले और आराध ।
स्थूल देह स्वस्थ हो जाई, लेश भ्रांति न इसमें भाई ।
जीवन तत्व के साधन सात, उन्हें करे जन नित्य प्रात ।
सायं को भी यदि कर पावे, लाभ अधिक वह इस से पावे ।
यह साधन तुम उत्तम जानो, उपाय और गौन कर मानो ।
दो०—उत्तम साधन योग का, जीवन तत पहचान ।
स्थूल शरीर सूक्ष्म करे, दीना प्रभु ने ज्ञान" ॥3677
कहा साध "हे नाथ प्यारे, भ्रम दूर अब हो गये सारे।
अगला आसन आप बतायें, और मुझे निज संग करायें"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, वृक्षासन जो कथा महान ।
वह आसन मैं तुझे सिखाऊं, सरल रीत से इसे बताऊं ।
दिवार सहारे हि कर पाओ, देखो मुझे फिर तुम लगाओ ।
भूमि पै टेको दोनों हाथ, रहें समीप दिवार के साथ ।
पैर उछाल शरीर उठाओ, वह दिवार के साथ लगाओ ।
बाजू सीधे कर के राखो, सर को भी उठाय के राखो ।
दो०—वृक्षासन यह है भया, दिवार सहारे अब ।
तेरी बाहें जब थकें, उतरो नीचे तब ॥3678 क
स्वामी जी जिमि था किया, तैसे कीना साध ।
स्वामी जी प्रसन्न भये, लीना उस आराध ॥3678 ख

कहा नाथ "हे साध प्यारे, यह कीन तुम दिवार सहारे।
पूर्ण भया तभी इसे जानो, बिन दिवार जब कीना मानो।
यह साधो पर कठिन अभ्यास, करते रहना सह विश्वास"।
कहा साध "हे स्वामी प्यारे, किमि कथूं उपकार तुम्हारे।
सरल रीत तुम योग सिखाया, कठिन योग भी सरल बनाया"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, जागे कलि में भाग्य हमारे।
राम प्रभु ने लीन अवतार, लुप्त योग का कीन उद्धार।
कठिन योग को सरल बनाया, सर्व जगत को वह सिखलाया।
वन से योग बस्तिन में लाया, नर नारिन को स्वयं सिखाया।

दो०—तन मन के जो कष्ट थे, दूर किये प्रभु आन।
आते न प्रभु जगत में, होता किमि कल्याण ॥3679
दीन निमानन जनन को, लीना उन अपनाय।
'दीनबन्धु' सार्थक किया, निज नाम यहां आय ॥3679
हे साधो तुम धन्य हो, आये प्रभु की शरण।
योग शिक्षा तुझे मिली, और प्रभु के चरण" ॥3679
नतमस्तक तब साध ने, कही नाथ से बात।
"निज मन की कैसे कहूं, आप प्रभु साक्षात ॥3679
धन्य जन्म मम हो गया, गुरु योगी को पाय।
निज चरणों की ओट दे, साधन जिन सिखलाय ॥3679

अगला आसन नाथ बतायें, सरल रीत से वह सिखलायें।
मेरे मन उमंग जो भारी, पूर्ण होगी आप से सारी"।

कहा स्वामी "हे साध सुजान, जिस आसन का दूं अब ज्ञान ।
वृश्चिक आसन उस को जान, कठिन आसन है लो पहचान ।
मेरे संग करो तुम आन, फिर होगा इस का कुछ ज्ञान ।
भुजा धरातल पर टिकाओ, पृथवी से धड़ उच्च उठाओ ।
सर की ओर पैर ले जाओ, सर ऊपर तब पैर टिकाओ" ।
स्वामी जी यह सब दिखलाया, साधु तो वह कर नहीं पाया ।
उस की देख निराशा नाथ, कहन लगे धर उस सर हाथ ।
"चिरञ्जीव तुम मत घबराओ, यत्न निरन्तर करते जाओ ।

दो०—करो निरन्तर यत्न जब, सिद्ध भये गा योग ।
बिन यत्न नहीं कुछ मिले, कहते योगी लोग ॥3680

प्रातः काल पुनः चलि आना, इसी विषय बहु कुछ है कहना" ।

## दिन बीसवां (20) प्रातः

प्रातः भयी साधु चलि आया, आ स्वामी को माथ झुकाया ।
कहा स्वामी "साधु सुन पाओ, वृक्षासन के गुण सुन पाओ ।
वृश्चिक के भी संग सुनाऊं, दोनों के इक साथ बताऊं ।
दोनों आसन शक्ति बढ़ावें, भुजाओं को बलिष्ट बनावें ।
वायु दोष को करते दुर, चेहरे पर भी आवे नूर ।
स्थिरता जन में ऐसी आवे, हाथों पर सब तन टिक पावे ।
अनेकों रोगों का उपचार, होत ये आसन दोनों धार ।
आसन कठिन पर बहु गुण दाय, करो निरन्तर तुम यहां आय ।

दो०—आसन लागे कठिन जो, उस का कर अभ्यास ।
लाभ उठाओ साध तुम, प्रभु की शिक्षा खास" ॥ 3681

बोला साध "हे दीना नाथ, मुझे बतला कर करें सनाथ।
कई आसन मैं कर न पाया, क्या कारण समझ नहीं आया।
इसमें हो जो रहस्य महान, चाहूं स्पष्ट कथें भगवान"।
कहा नाथ "हे मेरे भाई, रहस्य सरल है शक न राई।
आसन बाल पने कर पावें, तभी ठीक वे कर दिखलावें।
कोमल अंग बालक के होंय, मोड़ तोड़ में दुख नहीं गोंय।
बालपने में कर के आसन, मोड़ सकें जिमि चाहें निज तन।
रीत सदा से यह चलि आई, कसरत बालपने सुखदाई।
आसन तुझे न लगें आसान, इसमें कारण यही लो जान।

दो०—शास्त्रों में जो हैं कथे, पग जीवन के चार।
पग प्रथम में देह का, मुख्य कथा विचार" ॥3682

कहा साध स्वामी प्यारे, मम मन लागे वचन तिहारे।
नयी बात जो है कथ पायी, जीवन के पग की सुखदायी।
कथन करें वह सह विस्तार, कौन जीवन के पग हैं चार"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, जीवन के पग चार वे जान।
ऋषियों ने जो हैं कथ पाये, आश्रम चार जो उन बताये।
पहला ब्रह्मचर्य लो जान, गृहस्थाश्रम दूजा पहचान।
तीजा वनप्रस्थ है भाई, चौथा है सन्यास कहाई।
जीवन के यही आश्रम चार, जीवन के यही पग हैं चार।

दो०—चारों आश्रम जो कथे, पग चार ये जान।
चार पगों में पूर्ण हो, जीवन का अभियान" ॥3683

कहा साध "मम मन अति भाया, ज्ञान अनूपम जो कथ पाया ।
साधना तन की जो बताई, प्रथम आश्रम में जो जताई ।
उसका पुनः करें विस्तार, ज्ञान बड़ा यह है करतार" ।
कहा नाथ "मैं लो समझाऊं, ज्ञान पुरातन याद कराऊं ।
भूल गया जब से यह ज्ञान, छाया जीवन में अज्ञान ।
बालपने में देह बनाना, हृष्ट पुष्ट तन को कर पाना ।
हठ योग के साधन न्यारे, लागें बालपने में प्यारे ।
चुस्त, निरोग, पुष्ट देह होय, उज्ज्वल भविष्यत भी जन गोय ।
दो०—उज्ज्वल होय भविष्य तब, योग करें मन लाय ।
बालपने का योग ही, आगे होय सहाय ॥3684
लंबा जीवन का मग भाई, इस में परिश्रम व कठिनाई ।
अंत छोर तक वह सुख पावे, बालपने जो योग कमावे" ।
सुन कर साध अनोखी वाणी, हो चकित बोला "महादानी ।
अंतछोर की बात चलाई, यह तो मेरी समझ न आई ।
शास्त्र सभी तो यही बखानें, अन्तिम छोर मृत्यु को मानें ।
और कोई हो अन्तिम छोर, वह बतलावें प्रभो इस भोर" ।
कहा नाथ "तुम जो कथ पाया, भ्रम उसी में जगत है आया ।
*वेदाज्ञा सब जगत भुलाई, लागे अधोमार्ग सुखदायी ।
दो०—वेदाज्ञा को भूल कर, मनमानी कर लोग ।
अधोमार्ग को ग्रहण कर, त्यागें साधन योग" ॥3685

* अधोमार्ग—नीचे गिराने वाला रास्ता ।

कहा साध "हे योगी नाथ, मम बुद्धि नहीं दे तव साथ।
बात प्रथम तो न सुलझाई, दूसर में मम मति उरझाई।
अन्तिम छोर तो कथ न पाया, वेदाज्ञा को कह बतलाया।
सरल रीत से मुझे बतायें, स्पष्ट बात दोनों हो जायें"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, बात कथूं मैं जिस में ज्ञान।
वेद के अनुसार हे भाई, आयु अबधि शतवर्ष कहाई।
ऐसा तो तब ही हो पावे, साधन योग जब जन कमावे।
शतवर्ष की लेंय आयु भोग, बालपने जिन कीना योग।
दो०—पग जीवन का प्रथम जो, कर ले उस में योग।
बनता दृढ़ आधार तब, ले आयु पूर्ण भोग ॥ 3686

## दिन बीसवां (20) सायं

सायंकाल जभी चलि आओ, प्रसंग पुनः तुम यह चलाओ।
आगे का मैं दूंगा ज्ञान, सुन्दर यह प्रसंग लो जान।
सायंकाल साध जब आया, और नाथ को शीश झुकाया।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, सुन उपदेश प्रभु के सारे।
ऋषियों ने जो शिक्षा दीनी, और वेद में जो है चीनी।
प्रभु उपदेश में वही ज्ञान, श्रवण करो प्रभु शरणी आन।
वेद कहें जीओ शतवर्ष, देखें आंख तेरी शत वर्ष।
कान सुनें तेरे शत वर्ष, चलती रहे वाणी शत वर्ष।
करें सब अंग कार्य शत वर्ष, रह अदीन जीओ शत वर्ष।
दो०—इसी वेद उपदेश को, कीना प्रभु साकार।
योग साधन सिखलाया, मिले ईश साकार ॥3687

सुन संक्षेप से मेरी बात, प्रभु शिक्षा को हे मम तात ।
प्रथम आश्रम शरीर बनाओ, यम नियमों पर उसे चलाओ ।
आश्रम फिर गृहस्थ जो भाई, मनस् साधना उसमें आई ।
तीजा वनप्रस्थ जो भाई, उस में ज्ञान की हो कमाई ।
चौथा जो सन्यास का काल, आत्म साक्षात उसी हो काल ।
चार पग जीवन के ये साध, श्रद्धा से जो लेत आराध ।
वह पहुंचे गा अन्तिम छोर, प्रभु संकेत किया इस ओर ।
अन्तिम छोर मुक्ति का धाम, जो पहुंचे सो पूर्ण काम ।
दो०—आश्रम चारों के धर्म, जो पाले ला ध्यान ।
मुक्ति उस को सुलभ हो, निश्चय से लो जान" ॥3688
सुनी साध जब गुरु की वाणी, कहन लगा "हे सद्गुरु दानी ।
चमत्कारी ज्ञान तुम्हारा, भ्रम मिटाया जिस मम सारा ।
पूछूं एक बात मैं नाथ, उत्तर देकर करें सनाथ ।
गृहस्थ का जो धर्म बताया, मनस् साधना का कथ पाया ।
उसे करें जी नाथ स्पष्ट, भ्रम जाये जिमि मम हो नष्ट ।
द्रूह बात है तुम कथ पाई, समझ मेरी में जो न आई ।
ज्ञान आप जो प्रभु दे पायें, उस से जग के भ्रम मिट जायें ।
शब्द आप के ज्ञान प्रदीप, अन्धकार में उज्ज्वल दीप ।
दो०—शब्द निकला जो इक भी, प्रभु के मुख से होय ।
भरम मिटावे जगत का, ज्ञान रश्मि है सोय" ॥3689
कहा नाथ "तू ठीक बताया, अज्ञान जगत का प्रभु दुराया ।
आश्रम चारों के जो धर्म, अपने अपने उन के कर्म ।

प्रभु ने खोल के सब बताये, जिमि न भ्रम जग को रह पाये।
पूछी तू ने गृहस्थ की बात, मनस् साधन की जो है तात।
गृहस्थी निज का स्वार्थ त्याग, पर उपकार में जाये लाग।
अपना सुख सन्तान पै वार, संतति का भी मोह संहार।
जग के हित से कर ले प्यार, गृहस्थ ही तो जगत आधार।
चित्त को करे समुद्र रूप, जिसमें सुख दुख रहें सब गूप।

दो०—मन को करे समुद्रवत, जिसमें सभी समाय।
रह मर्यादा में सदा, सब का हित कर पाय ॥3690 क

मन की यह तो साधना, बड़ी कठिन है मीत।
प्रभु शिक्षा पर वह चले, जिसे धर्म से प्रीत ॥3690 ख

कहा साध "हे जग कल्याणी, सुनी सकल मैं तेरी वाणी।
तुम धन्य जिन प्रभु को पाया, जगतनियन्ता गुरु अपनाया।
गुरु की शिक्षा को अपनाया, जग हित सारा जीवन लाया।
मैं भी धन्य भया हूं नाथ, अपनाया तुम ने यह अनाथ।
अब सुनूं मैं आप से नाथ, वनप्रस्थी जिमि भये सनाथ"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, जग हित सब हैं प्रश्न तिहारे।
इन से ज्ञान जगत ले पाये, मन की स्थिरता भी अपनाये।
मन की स्थिरता मुख्य लो जान, वन प्रस्थी की यह पहचान।
गृहस्थ के सब कर्म निपटाय, वनप्रस्थी जन तब हो पाय।
ब्रह्मचर्य में तन को साध, गृहस्थाश्रम में मन को साध।
बुद्धी को तभी ले जन साध, गुरु के संग वह रह निर्बाध।

दो०—जग की संगति छोड़ कर, करे गुरु का संग ।
ज्ञान गुरु से उसे मिले, चढ़े धर्म का रंग ॥ 3691
हे साध अब चलि तुम जाओ, लौट प्रातः फिर तुम आओ ।
तभी चलेगी आगे बात, शांति से सभी बीते रात ।

दिन इक्कीसवां (21) प्रातः

काल प्रातः जब चलि आया, साधु भी तभी चल कर आया ।
स्वामी जी को कीन प्रणाम, और कहा "हे जग अभिराम ।
वन प्रस्थ का धर्म बताया, ज्ञानार्जन का लक्ष्य जताया ।
गुरु का संग उत्तम सुझाया, उस से उत्तम नहीं उपाया ।
यदि कुछ और भी करना होय, कर किरपा बतलावें मोय" ।
सुन स्वामी उसकी जिज्ञास, कहन लगे ला मुख पै हास ।
"ज्ञानार्जन ही होवे लक्ष्य, गुरु से ज्ञान मिलत प्रत्यक्ष ।
दो०—गहे गुरु से ज्ञान जन, अथवा शास्त्र योग ।
पढ़ सुन वा मनन कर, करे साधना योग ॥3692क
यही धर्म उस का भये, इस से भिन्न न कोय ।
गुरु संग शास्त्र मनन वा, ध्यान समाधि होय ॥3692ख
आठों पहर निसंग रह, भजे ईश ही ईश ।
जीवन के इस काल में, उस के संगी ईश ॥3692 ग
सुगम नहीं यह साधना, राखे इस का ध्यान ।
नहीं जाने किस काल में, पकड़े माया आन" ॥3692घ

कहा साध "ये प्रश्न है, मेरे प्रभो दयाल ।
बचने का इलाज क्या, माया से सब काल" ॥3692 ङ
सुन कर उस के प्रश्न को, दिये नाथ मुस्काय ।
बात पते की पूछ ली, दूं इसे समझाय ॥3692 च
कहा नाथ "हे साध सुजान, इस का उत्तर यह ही जान ।
माया किसी के वश न भाई, शिष्य के केवल गुरु सहायी ।
गुरु को स्मरण करे जो कोई, माया से निश्चिन्त सो होई ।
इससे बढ़ कर नहीं उपचार, साधकों के अनुभव का सार" ।
कहा साध "हे नाथ प्यारे, वचन आपके सुन्दर सारे ।
वनप्रस्थ का धर्म बताया, माया से बचना समझाया ।
आगे का उपदेश जो होय, कर कृपा प्रभो कहें अब सोय ।
माने जो उपदेश तिहारे, सुखी भयेंगे नर वे सारे ।
दो०—जीवन के पग चार जो, आप कहे थे नाथ ।
त्रय का वर्णन है भया, क्या चौथा है नाथ ॥3693
कहा नाथ "हे साध सुजान, चौथे का अब दूं मैं ज्ञान ।
चौथा आश्रम मोक्ष द्वार, आत्मा का हो साक्षात्कार ।
इस आश्रम की यही कमाई, आत्मा तन में प्रकट लखाई ।
जग की सुधि रहे नहीं लेश, छोड़ें पीछा सकल क्लेश ।
देहाध्यासन बाधक होय, मन आत्म चिन्तम में ही खोय ।
अहंता ममता का हो अन्त, हो निर्लिप्त सन्यासी सन्त ।
ऐसा जो सन्यासी भाई, जीवन मुक्त वही कहलाई ।
जीवन मुक्त जो जन हो पाये, जीवन बाद मुक्त हो जाय ।

दो०—हे साध तुम जान लो, मुक्ति का तन द्वार ।
मुक्ति पाने के लिए, पग रचे करतार ॥3694 क
चार पगों में धर्म का, करता जो आचरण ।
वह साधक ही मुक्ति का, कर सकता है वरण ॥3694 ख
जो योगी इस जन्म में, ले मोक्ष को पाय ।
परम वीर योगी वहीं, भूश्रृंगार सुहाय" ॥3694 ग

सुन कर साध नाथ की वाणी, योग जीवन की सब कहानी ।
गद गद उसका मन हो पाया, निर्मल यही ज्ञान कहलाया ।
इसमें मिश्रण है कुछ नाहीं, बिन सत्य कुछ और हैं नाहीं ।
ऐसे गुरु न कहीं जग माहीं, पूरण सत्य मिले जिन ताहीं ।
उस का चित्त शांत हो पाया, अपना आपा उस विसराया ।
स्वामी जी फिर कहने लागे, "चर्चा योग चलावें आगे ।
आसनों का तुम पाया ज्ञान, प्राणायाम अब सीखो आन ।
प्राणायाम योग के प्राण, इस बिन योग का न अधिमान ।

दो०—सीखो प्राणायाम को, कर के मन को शांत ।
प्राणायामी का प्रिय, होय न मन भ्रांत ॥ 3695

देह की शक्ति प्राण हि जान, प्राण बिना देह हो निष्प्राण ।
सकल देह में प्राण व्यापे, प्राण विहीन न को थल जापे ।
देह के सकल कर्म लो जान, प्राण विभक्त हो करते आन" ।
कहा साध "प्रभु करें बखान, प्राणों के क्या विभक्त स्थान" ।
जिन के नाम लो मुझ से जान, 'प्राण' 'अपान' 'समान' 'उदान' ।

'व्यान' को लेवो पंचम जान, व्यापक इस का देह में स्थान।
प्रथम चार के स्थान बताऊं, सब के कार्य मैं तब जताऊं।
हृदय स्थान प्राण का साथ, रहे गुदा में अपान अबाध।
स्थान समान का नाभि मीत, उदान कण्ठ में लेवो चीत।

दो०—पांचों के ये स्थान हैं, अपना करते काम।
उनके सभी अधीन हैं, देह के अंग तमाम ॥3696

हे साध काल सायं आना, इसी विषय पर बहु कथ पाना।

## दिन इक्कीसवां (21) सायं

सायं काल जब साधु आया, स्वामी वही प्रसंग चलाया।
पूछी उन तब साध से बात, नाम तुझे क्या याद हैं तात।
पांच प्राण व उनके स्थान, मुझे सुनाओ साध सुजान।
नाम अधीन ही रहता ज्ञान, सब कार्यों में नाम प्रधान"।
कहा साध मैं अभी सुनाऊं, प्राणों के मैं नाम बताऊं।
प्राण अपान समान हे नाथ, व्यान उदान भी उन के साथ।
हृदय गुदा व नाभि भगवान, त्वचा, कण्ठ क्रम से हैं स्थान"।

दो०—स्वामी जी ने श्रवण कर, दीना आशिर्वाद।
हो प्रसन्न कहने लगे, सभी तुझे है याद" ॥3697 क
स्वामी जी ने फिर कहा, "हे सुनो तुम साध।
प्राणायाम की विद्या, जानो बहुत अगाध ॥3697 ख

पांच प्राण तुझे बतलाये, उपप्राण भी पांच हैं आये।
मुझ से लोगे वे भी जान, उनके कर्म भी अति महान"।

कहा साध "हे योग के नाथ, प्रश्न मेरा है इसी के साथ ।
प्राण जभी सब कुछ कर पायें, उपप्राण क्या कर दिखायें" ।
कहा नाथ "तू सच कह पाया, सारे तन में प्राण समाया ।
देह कर्म कुछ ऐसे भाई, उपप्राण जहां हों सहाई ।
देह कर्म कुछ ऐसे तात, उप प्राण बिन बने न बात ।

दो०—हे साध इसी कारणे, प्राण पांच मिल पाय ।
देह चले इक पांच से, दूजा होत सहाय ॥3698 क
उपप्राण जो पांच हैं, उन का करूं बखान ।
'नाग' 'कूर्म' जो 'कृकल' हैं, 'देवदत्त' भी जान ॥3698 ख
उपप्राण जो पांचवां, है 'धनञ्जय' नाम ।
जिन कर्म में होंय सहाय, वही बताऊं काम ॥3698 ग

'नाग' का कारज है उद्‌गार, 'कूर्म' पलकों का करत पसार ।
'कृकल' लगावे भूख प्यास, 'देवदत्त' से होत उबास ।
*'धनञ्जय' से हो हिचकी भाई, मात्रा अन्दर वह सुखदाई ।
ऐसे देह के कर्म हमारे, प्राणों से ही होते सारे ।
प्राण सकल जीवन आधार, योगी प्राण का जाने सार ।
प्राण का जिस रहस पहचाना, प्राणायाम को उस ने जाना" ।

---

* पांच उपप्राणों के नाम और उन के कर्म—
1. 'नाग' से उद्‌गार (डकार आना)
2. 'कूर्म' से पलक झपकना ।
3. 'कृकल' से भूख प्यास लगना ।
4. 'देवदत्त' से उबासी आना ।
5. 'धनञ्जय' से हिचकी आना ।

साधु बोला तब "महाराज, मेरा प्रभो प्रश्न है आज ।
ज्ञान आप से पा कर नाथ, भया हूं मैं तो अब सनाथ ।
प्राणों का रहस्य बतलायें, शक्ति क्या है वह समझायें ।

दो०—शक्ति कहें जो प्राण की, कैसा उस का रूप ।
वायु से संबंध क्या, कहें रहस यह गूप" ॥3699

कहा नाथ "हे साध सुजान, जानन चाहो जो तुम ज्ञान ।
अब तक पूछा न किसी भाई, कहूं धन्य तेरी चतुराई ।
प्राण की शक्ति जो कथ पाई, वह इक चुम्बकी शक्ति भाई ।
नाडियों में उसका संचार, बहत्तर कोटि जिन का आकार ।
देह में फैला उन का जाल, जो अनु अनु में जान दे डाल ।
प्राण आकर्षण से ही साध, देह में रक्त बहत निर्बाध ।
वायु आकृष्ट होय तत्काल, देह में चाले जो सब काल ।
ज्ञानेन्द्री जो पांचों भाई, शक्ति यहीं से उन में आई ।

दो०—प्राण शक्ति के कारणे, तन में चालें प्राण ।
प्राण शक्ति के कारणे, बुद्धि ग्राहे ज्ञान" ॥ 3700

साध ने पूछी तब यह बात, "हे नाथ तुम प्रभु साक्षात ।
भ्रम मेरा तुम सकल दुराया, ज्ञान स्पष्ट मैं तुम से पाया ।
एक बात अब मुझे बतायें, शक्ति प्राण की किमि बढ़ायें ।
सुना है प्राण शक्ति बढ़ पाय, उस का हे नाथ क्या उपाय ।
प्राण शक्ति क्या सीमित होय, अथवा बढ़ती घटती सोय ।
यह जिज्ञासा मम मन नाथ, इसे निवारें करें सनाथ" ।

कहा नाथ "हे साध सुजान, मिला प्राण का तुझ को ज्ञान ।
घटती बढ़ती है यह भाई, इसमें संशय होय न राई ।
दो०—स्थिर जगती में कुछ नहीं, घटे बढ़े सब काल ।
प्राण शक्ति किमि बढ़ सके, उत्तम यह सवाल ॥3701
प्रातः काल पुनः चलि आना, इस का उत्तर हमसे पाना ।

दिन बाइसवां (22) प्रातः

भयी प्रातः साधु चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, मन में थे जो भाव तिहारे ।
उनको प्रकट करो अब भाई, ज्ञान मिले तुम को सुखदाई ।
कहा साध "हे नाथ प्यारे, मेरे भ्रम तुम सकल निवारे ।
मेरे मन को संशय नाहीं, फिर भी पूंछूं मैं गोसाईं ।
प्राणिक शक्ति किमि बढ़ पाये, यही बात मेरे मन में आये ।
आप मुझे यह ही समझायें, वैसे साधन भी करवायें ।
शरण आपकी में रह नाथ, साधन वही करूं तव साथ ।
दो०—प्राण की शक्ति जिमि बढ़े, वही बतावें नाथ ।
निज चरणों की शरण में, रख कर करें सनाथ" ॥3702
कहा नाथ "हे साध सुजान, देह में बसते सब के प्राण ।
योग से उन में शक्ति आवे, भोग से दुर्बलता समावे ।
जिसने रहस यह लीना जान, कीने सशक्त उसी ने प्राण ।
प्राण की शक्ति चित्त अधीन, शक्ति बढ़े जिन चित्त वश कीन ।
गुरु बतावे गुर यह भाई, जिस से मन वश में हो जाई ।
जन शिक्षा जो गुरु से ग्राहे, और उसी पर चल वह पाये ।

प्राण व मन को करके एक, लाभान्वित तभी हो प्रत्येक ।
अब बतलाऊं प्राण का रूप, देह में व्याप रहा जो गूप ।
देह में व्याप रहा जो प्राण, केन्द्र उसके को भी लो जान ।

दो०—मेरु दण्ड को जान लो, प्राण का केन्द्र मीत ।
उसमें भी उपकेन्द्र हैं, जिन की कर प्रतीत ॥3703

यह बात प्रभु खुद बतलाई, प्राण के केन्द्र की समझाई ।
कर किरपा वह दीना ज्ञान, किये साक्षात जिमि मैं प्राण"।
कहा साध "हे गुरु महाराज, कौन जगत में आप सा आज ।
मिले आप को गुरु भगवान, साक्षात किये आप ने प्राण।
मुझ पर भी बहु कीनी दाया, ज्ञान योग का तुम से पाया ।
प्राण का केन्द्र आप बताया, मेरु दण्ड जो तुम कथ पाया ।
उपकेन्द्र भी वहीं बतलाये, प्राण जहां से तन को जाये ।
उपकेन्द्रों का करें बखान, उन के नाथ क्या अभिधान ।

दो०—उपकेन्द्रों का ज्ञान जो, मुझे करावें देव ।
वा उन के अभिधान भी, साथ कथें अधिदेव" ॥3704

कहा नाथ "तुम को बतलाऊं, उपकेन्द्रों के नाम सुनाऊं ।
जिन से प्राण का होत स्राव, करता अंग अंग प्रभाव ।
गुदा से ले भृकुटी प्रयन्त, मेरु दण्ड का वहां पर अन्त ।
उसी मध्य सभी चक्र जानो, उपकेन्द्र प्राणों के मानो ।
जिन के नाम मैं करूं बखान, 'मूलाधार' प्रथम पहचान ।
गुदा समीप इस का है स्थान, "स्वाधिष्ठान उस ऊपर जान ।

लिंग समीप है जिसका स्थान, उस ऊपर 'मणिपूर' लो जान।
नाभि समीप जो चक्र भाई, ऊपर तभी 'अनाहत' आई।
दो०—हृदय पास अनाहत है, चक्र जान महान।
'विशुद्धचक्र' उस ऊपर, कण्ठ पास पहचान ॥3705 क
सब से ऊपर चक्र जो, 'आज्ञा' उसका नाम।
*भृकुटी पीछे जान लो, ईश्वर का वह धाम ॥3705 ख
जो उपकेन्द्र प्राण के, चक्र उन का नाम।
मैं शक्ति प्रत्येक की, तुझे बताऊं शाम ॥3705 ग
हे साध अब मुझे बताओ, सब चक्रों के नाम सुनओ।
आगे का फिर दूं मैं ज्ञान, केन्द्रों की जो शक्ति सुजान"।
कहा साध "हे नाथ प्यारे, गये याद हो मुझ को सारे।
मूलाधार व स्वाधिष्ठान, मणिपूर वा अनाहत महान।
विशुद्ध व आज्ञा चक्र नाथ, आप बता कर कीन सनाथ।
आप बताओ अब मम नाथ, है शक्ति जो सब चक्रन साथ।
प्राण शक्ति इन चक्रन माहिं, कर किरपा बतलाओ साईं"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, शक्तिवान वे चक्र न्यारे।

* मेरु दण्ड में प्राण शक्ति के छः चक्रों के नाम और उन के स्थान :
1. मूलाधार का स्थान गुदा
2. स्वाधिष्ठान का स्थान लिंग
3. मणिपूर का स्थान नाभि
4. अनाहत का स्थान हृदय
5. विशुद्ध का स्थान कण्ठ
6. आज्ञा का स्थान भृकुटी

दो०—चक्र प्रति से शक्ति जो, होत स्त्रावित साध ।
उसका वर्णन अब करूं, जानो विषय अगाध ॥3706 क
सुनना आकर शाम को, मुझ से सारी बात ।
है विलंब तो अब भया, बीत गई है प्रात" ॥3706 ख

## दिन बाईसवां (22) सायं

सायं भयी साध चलि आया, आय नाथ को शीश झुकाया ।
और कहा "हे स्वामी मेरे, किमि कथूं उपकार मैं तेरे ।
दिवस प्रति जो शिक्षा ग्राहूं, नूतनतम ज्ञान मैं पाऊं ।
बैठा चरणि दास है तेरे, प्राण करो अब जागृत मेरे" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, प्राणी हर प्राण को धारे ।
योग से उसका होय विकास, करत संयमित योग विश्वास ।
वह क्रिया मैं फिर बतलाऊं, चक्रों की अब शक्ति जताऊं ।
षट्चक्र जो तुझे कथ पाये, महा शक्ति के केन्द्र कहाये ।
दो०—उन से शक्ति स्त्राव जो, होता है मम मीत ।
श्रवण करो ला ध्यान तुम, कर एकाग्र चीत ॥3707
धारा शक्तिन की बह पायें, चक्रों से जो केन्द्र कहायें ।
मूलाधार से धारा चार, कर रहीं शक्तिन का संचार ।
स्वाधिष्ठान की छः लो जान, मणिपूर की वह दस पहचान ।
अनाहत की लो बारह जान, विशुद्ध की लो सोलह मान ।

*आज्ञा चक्र निकासे दोय, गिन लो धार कुल कितनी होय"।
कहा साध, "प्रभु की है माया, मैं पचास धारा गिन पाया"।
कहा नाथ "यह ठीक है बात, गिनती इसकी इतनी तात ।
आगे चल कर मेरे भ्रात, इक इक की कोटि होती जात ।

दो०—बहत्तर कोटि इसी विध, हो नाडिन का रूप ।
जाल बिछा है देह में, जो जगत से गूप ॥3708

चक्र में जब ध्यान लगावे, शक्ति नाड़ियों की बढ़ पावे ।
देह तेजस्वी होवे मीत, होवे जग को भी प्रतीत ।
प्राण का आयाम यह भाई, प्राणायाम कथन में आई ।
इससे भी कुछ बढ़ कर और, अभी बताऊं मैं इस ठौर ।
परन्तु यह प्रथम कह पाऊं, विद्युतवत हैं प्राण बताऊं ।
विद्युत से न रहे सावधान, जान गंवाये वह इन्सान ।
प्राण की शक्ति नहीं पहचान, इस से करे खिलवाड़ पुमान ।
होती उस से हानी भारी, भयंकर लागे वा बिमारी ।

दो०—बिना गुरु के नहीं करे, प्राणों का अभ्यास ।
सिद्ध किये हों प्राण जिस, गुरु वही है खास ॥3709

| *नाम चक्र (प्राण के उपकेन्द्र) | धारायें |
|---|---|
| 1. मूलाधार | 4 |
| 2. स्वाधिष्ठान | 6 |
| 3. मणिपूर | 10 |
| 4. अनाहत | 12 |
| 5. विशुद्ध | 16 |
| 6. आज्ञा | 2 |
| कुल | 50 |

सुनो साध अब मेरी बात, ज्ञान कहूं वह तुझ को तात।
जिस साधन का कर अभ्यास, योगियों को मिले सिद्धि खास।
प्राणों के महाकेन्द्र साध !, तन के भीतर गुप्त निर्बाध।
प्राण के महा कोष वे जान, उन की विरला करे पहचान।
गुरु किरपा जिस पर हो जाये, योगी वहां पहुंच तब पाये।
बिना गुरु कृपा करे प्रयास, लेवे मोल खतरा वह खास"।
पूछा साध "नाथ हे प्यारे, रहस्य खोल बतायें सारे।
ऐसी शक्ति कौन सी नाथ, खतरा जिस के जुड़ा है साथ।

दो०—भय भयंकर रोग जुड़ा, जिस शक्ति के साथ।
कौन शक्ति वह है प्रभो, मुझे बतावें नाथ" ॥3710

कहा नाथ "हे साध प्यारे, जानूं जो मन भाव तिहारे।
शक्ति उस का ज्ञान तुम चाहो, संग में अभ्यास भी चाहो।
उसका 'कुण्डलि' नाम प्यारे, जानें योगी उस को सारे।
मेरु दण्ड के नीचे मीत, उस शक्ति का धाम लो चीत।
मेरु का आधार वह मानो, सुमेरु का जिमि कच्छप जानो।
समुद्र मन्थन में अवतार, कच्छप रूप भये करतार।
कुण्डलि दिव्य शक्ति है भाई, योग से ही वह जागे भाई।
योग करे जन उसे जगावे, अनूपम सिद्धि को तब पावे।

दो०—योग द्वारा जागती, कुण्डलि मेरे मीत।
योगी ऐसा चाहिए, जिस की गुरु से प्रीत ॥3711क

गुरु से जिस की प्रीत हो, ऐसा योगी होय।
यम नियम को पाल कर, विमुख जगत से जोय ॥3711ख

यह प्रसंग हम फिर चलायें, प्रातकाल जब हम मिल पायें।

## दिन तइसवां (23) प्रातः

प्रातः काल साधु चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, कुण्डलि के हैं भेद न्यारे ।
शक्ति की इक पुञ्ज लो जान, रहती गुप्त जग से लो मान ।
सुप्त रहे वह सब ही काल, चेतन होती न किसी काल ।
कुण्डली जिस की चेतन होय, भेदन चक्रों का करे सोय ।
सभी चक्रों का करके भेद, जाये मूर्धा में बिन खेद"।
कहा साध "हे जग के त्रात, यह ज्ञान तो गूढ़ बहु तात।
दो०–चक्रों का जो भेद है, स्पष्ट करें मम नाथ ।
उस का क्या प्रभाव हो, यह बतलावें साथ" ॥3712
कहा नाथ "जो पूछी बात, उस का उत्तर दूं मैं तात ।
चक्रों का जो भेदन होय, प्राण की शक्ति बढ़ावे सोय ।
योग सिद्धि इस विध जन पावे, कर्म अलौकिक कर दिखलावे ।
सिद्धियां हो पर दुख का मूल, त्यागे जन यदि योग असूल" ।
कहा साध "हे नाथ महान, स्पष्ट नहीं मुझ को यह ज्ञान ।
सिद्धि दुख का मूल किमि होय, दुख से बचे किमि योगी सोय ।
किस असूल को जन अपनावे, दुख का मूल जो रह न पावे ।
सुख हेतु सभी करते योग, इससे दुख क्यों पावें लोग ।
दो०–सुख का कारण योग है, यह जानें सब लोग ।
जो दुख का कारण बने, वह होत न योग" ।3713
कहा नाथ "तव ठीक विचार, सिद्धि पाये जो बिन अधिकार ।
उसको योग होत दुखदायी, इसमें शक तो लेश न राई" ।

पूछा साध "हे दीना नाथ, यही बता कह करें सनाथ।
वे गुण कौन जो हम ग्राहें, जन अधिकारी हम बन पायें"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, हैं सुन्दर ये भाव तिहारे।
योग अधिकारी तब बन पाय, यम नियम जभी पाल दिखाय।
यम नियमों के बिन हे साध, योगी को मिले दुख अगाध।
इस कारण मैं यह कह पाऊं, और सबन को यही सुनाऊं।
यदि कहे को "कुण्डलि जगा लो", यम नियमों को पहले पालो।

दो०—यम नियमों को पालकर, जन अधिकारी होय।
जो सिद्धि जन तभी गहे, दुख दायी न सोय" ॥3714

स्पष्ट सुनी जब गुरु की वाणी, बात पते की उस जन जानी।
कही साध तब नाथ से बात, "मुझे बतायें पूज्य हे तात।
यम नियमों का महत्त्व नाथ, योगी के जीवन के साथ।
सुन कर तुम से मम मन माने, निश्चय से इनका गुण जाने"।
उसकी सुन कर बात स्वामी, कहा नाथ तब अन्तर्यामी।
"हे साध तुम लो यही जान, आधार यही योग का मान।
योगी की यह पूंजी भाई, उस की यह दृढ़ शक्ति कहाई।
यम नियमों की प्रतिष्ठा साध, योगियों में गुण लाय अगाध।

दो०—यम नियमों की साधना, गुणकारी बहु जान।
प्रतिष्ठा इन में जब हो, शक्ति पाये पुमान" ॥3715

कहा साध "हे नाथ प्यारे, कौन शक्ति जन इन से धारे।
यम नियम भी हों शक्तिदायी, अजब बात मैंने सुन पायी।

किस विध शक्ति सभी दे पावें, स्पष्ट रूप हम को समझावें"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, रहस कथेंगे तुम को सारे।
सायं काल जभी चलि आओ, हम से यही तभी सुन पाओ।

## दिन तेइसवां (23) सायं

सायं काल जब साधु आया, नाथ वचन तब उसे सुनाया।
कहा नाथ "तुम बात चलाई, यम नियमों की कह दूं भाई।
प्रथम अहिंसा को ले लेवो, दुःख कभी न किसी को देवो।
दूसरों को जो दुख दे पाये, योगिपुरुष वह नहीं कहाये।
इस का लाभ मुझ से लो जान, जहां बसे अहिंसक इन्सान।
शांति का वहां वास ही वास, वैर विरोध का बीज विनास।
सभी जगत हो उस का मीत, जीव जन्तु से उस की प्रीत।
*उस समीप जो भी रह पायें, वैर विरोध निज़ तज दिखायें।

दो०—हिंसा को तज देत हैं, रह अहिंसक पास।
उस आश्रम में विचर कर, चरें शेर भी घास ॥3716

अहिंसा में प्रतिष्ठा भाई, कई जन्म की जान कमाई।
यह गुण सहज में न चलि आवे, दीर्घ काल जन योग कमावे।
अब कहूं मैं सत्य की बात, सत्य समान न गुण को तात।
मन वचन से सत्य आराधे, तद्रूप ही कर्म को साधे।
ऐसा पुरुष जो होय भाई, उसी योग की कीन कमाई।
सत्य परमेश्वर का है रूप, जिसके चित्त बसे वह गूप।

* योग दर्शन—II. 35. अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः।

निर्मल उस का मन हो जाये, मुख पै सत्य हि वचन सुहाये ।
कर्म करे वह उसी अनुरूप, ऐसा योगी ईश स्वरूप ।

दो०—*ऐसा योगी जो भये, उसमें सिद्धि अनेक ।
मुख से निकले जो वचन, हो न अन्यथा नेक ॥ 3717

सत्य अहिंसा की कह पाई, अब सुनो अस्तेय की भाई।
चोरी करना पाप महान, जाने इस को सकल जहान।
पर धन पर जो आंख लगाये, ऐसा जन ही चोर कहाये।
मन से भी जो ऐसा चाहे, वह भी दोष से न बच पाये।
अन्य का अधिकार जो होय, उस पै आंख न राखे कोय ।
छुप छुप कर भी करें न काम, धोखे में जिमि रहें तमाम ।
अन्य का भाग लेय जो खाय, वह भी तो ही चोर कहाय ।
जो कर्त्तव्य निज कर न पाये, वह जन भी तो चोर कहाये ।

दो०—स्तेन वृत्ति से जो बचे, योगी वही कहाय ।
उस योगी के लाभ को, समझ कोई न पाय" ॥3718

सुनी साध ने जब यह बात, कहन लगा "हे जग के त्रात ।
कौन लाभ वह योगी पाता, यह बात मैं सुनना चाहता ।
चोरी कर जन धन पा जाता, बिन चोरी क्या लाभ उठाता ।
कहा नाथ "यह रहस की बात, समझो मुझ से तुम हे तात ।
*अस्तेय प्रतिष्ठा जिस की होय, सर्व रत्नों का स्वामी सोय ।
उस पर जनता का विश्वास, निज धन राखें उस के पास ।
बिन संकोच उसे दे देवें, जब चाहें वे ले भी लेवें ।

---

* योग दर्शन II. 36—सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम् ।
* योग दर्शन II. 37 अस्तेय प्रतिष्ठायां सर्वरत्लोपस्थानम् ।

जिस से मांगे वह दे देवे, वापस मांगे ले भी लेवे ।
धन की उसे नहीं आवे तोट, अस्तेन गुण की ले कर ओट ।
दो०—हो जिस में अस्तेय गुण, धनी न उस सम कोय ।
धन चाहे जिस काल वह, कर सके प्राप्त सोय" ।।3719
कहा साध "यह ठीक है नाथ, लागे चोर के न कुछ हाथ ।
चोरी छोड़ सभी कुछ पाये, धन का स्वामी जन हो जाये ।
एक बात है और भी नाथ, मानसिक शांति लागे हाथ ।
योग साधना तभी हो पाय, चित्त जब शांति को अपनाय" ।
कहा नाथ "यह ठीक है भाई, हे साध तुम हो गुण ग्राही ।
आगे अब बात चलाऊं, ब्रह्मचर्य का गुण कथ पाऊं ।
ब्रह्मचर्य बिन योग न होय, यह गुण पाले योगी सोय ।
यह गुण समझो मुझ से भाई, और चलो इस पर मन लाई ।
दो०—* ब्रह्मचर्य की साधना, जिस ने कीनी मीत ।
वीर्य लाभ उस को भया, ब्रह्मवृत्ति ली जीत ।।3720
हे साध अब तुम चलि जाओ, प्रातः काल लौट के आओ ।
इसी विषय पर करें विचार, पालें यह गुण किस प्रकार" ।

## दिन चौबीसवां (24) प्रातः

भयी प्रातः साध चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
और कहा "हे नाथ प्यारे, वचन आप के सुन कर सारे ।
भया है मुझ को यह विश्वास, योग में शक्ति है कुछ खास ।
इसके नेम जो पाले नाथ, पा कर सिद्धियां भये सनाथ ।

---

* योगदर्शन II. 38—ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्य लाभः ।

आगे का जो नेम भगवान, उस का भी मुझे दीजो ज्ञान"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, ब्रह्मचर्य का करूं बखान।
ब्रह्मचारी जन वह ही होय, वीर्य रक्षाहित संयम गोय।
इस हेतु कई नेम कठोर, पाल सके जिसे गुरु पग ठोर।

दो०—गुरु चरणों की ठोर में, पाले नेम कठोर।
गुरु की आज्ञा में रहे, जाय न ठौर कुठोर ॥ 3721

रहे सदा परनार से दूर, साधन रत रहे सदा जरूर।
गुरू की मूर्ति रहे मन माहिं, व्यापक देखे ब्रह्म हर थाहीं।
ब्रह्माकार वृत्ति जब होय, जानो ब्रह्मचारी जन सोय।
ब्रह्मचर्य से देह बलवान, मानसिक शक्ति इस से जान।
ब्रह्मचर्य से बुद्ध उजागर, चित्त गंभीर हो जिमि सागर।
ब्रह्मचर्य जो पाल दिखाय, शक्तिवान वह जन हो जाय।
योग का ब्रह्मचर्य आधार, ब्रह्मचर्य बिन योग निस्सार।
इस संयम को जिस अपनाया, हो ओजस्वी उस की काया।

दो०—ब्रह्मचर्य को पाल कर, जन ओजस्वी होय।
ब्रह्मचर्य बिन जान लो, योग सकत न होय" ॥3722

कहा साध तब "हे मम नाथ, सुन उपदेश मैं भया सनाथ।
अगला संयम हे भगवान, उस का भी मुझे दीजो ज्ञान।
ये संयम जो जन अपनावे, वह ही योग सिद्धि को पावे"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, लीना तुम है ठीक पहचान।
योग में सिद्धि वह ही पावे, यम नियम जो पुरुष अपनावे।
अब कहूं वह संयम भाई, अपरिग्रह जो नाम धराई।

* प्रतिष्ठा उस में जन पा जाय, पूर्व जन्म निज जान वह पाय ।
भूला जन्मों का जो ज्ञान, इस संयम से पाये सुजान ।
दो०—पूर्व जन्म जो जीव का, भूला वश अज्ञान ।
अपरिग्रह को पाल कर, देखे वह इन्सान ॥3723 क
योग मार्ग को छोड़ कर, कुपथ पड़ा इन्सान ।
रहे चुरासी भटकता, जिमि नेत्र बिन पुमान ॥3723 ख
गुरु योगी को पायकर, अपरिग्रह को पाल ।
दिव्य दृष्टि उसको मिले, देखे पाछल हाल ॥3723 ग
परिग्रह जो देवे छोड़, व्यर्थ न माया को ले जोड़ ।
माया मन पै बोझ ले जान, बुद्धि पर भी भार ले मान ।
तन के लिए भी बन्धन सोय, जन नहीं वह परिग्रही होय ।
जितना धन केवल दरकार, राखें उतने से सरोकार ।
योगी उससे अधिक न चाहे, तभी परिग्रह से बच पाये ।
आवश्यक वस्तु को हि लेवे, वस्तु अन्य त्याग ही देवे ।
चिन्ता मुक्त रहे इस रीत, साधन से हो तब ही प्रीत ।
मन पै माया का हो भार, योग युक्त किमि हो नर नार ।
दो०—इस कारण जो हो सके, माया से विरक्त ।
अपरिग्रह को साध कर, होय योग में मुक्त ।" 3724
स्वामी की सुन सारी वाणी, कहा साध "हे गुरु सन्मानी ।
माया बिना न जीवन चाले, किमि त्याग फिर जन वह डाले ।
समाधान मैं इस का चाहूं, जिमि सुनूं फिर वही कर पाऊँ ।

* योग दर्शन II. 39—अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्ता संबोधः ।

कहा नाथ "हे साध प्यारे, बिल्कुल ठीक विचार तिहारे ।
माया बिना न जीवन चाले, साध नेम को फिर भी पाले ।
माया भली तभी लग पाये, सीमा पार न यदि वह जाये ।
जो जन योगी बनना चाहे, माया पर वह बांध लगाये ।
उतनी माया हो उस पास, जिमि चाले निर्वाह सुपास ।
दो०—नीर भरे यदि नाव में, डूब मरें सब लोग ।
माया की यदि बाढ़ हो, लुप्त भये तब योग" ॥ 3725
कहा साध "हे स्वामी प्यारे, रहसमयी सब वचन तिहारे ।
मुझे बताओ बात यह नाथ, कह दी थी तुम जो इस साथ ।
पूर्व जन्म को ले जन जान, अपरिग्रही जो हो इन्सान ।
इस रहस्य को खोल बतायें, मूढ़मती मैं हूं समझायें" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, सायं कथें रहस ये सारे ।
अब चलिये करिये विश्राम, आना पुनः जब होवे शाम" ।

## दिन चौबीसवां (24) सांय

सायं भयी साध चलि आया, वही प्रश्न फिर उस दुहराया ।
"हे स्वामी मुझ को बतलावें, पूर्व जन्म किमि जानन पावें ।
दो०—प्रतिष्ठा अपरिग्रह की, कैसी होवे नाथ ।
पूर्व जन्म की गाथ भी, समझ सकें जिस साथ" ॥ 3726
कहा नाथ "हे साध सुजान, इस का भी मैं दूंगा ज्ञान ।
प्रथम बात यह लो तुम जान, अपरिग्रह व्रत कठिन महान ।
परिग्रह वह भण्डार विशेष, बढ़ता जा रहा जो हमेश ।
जन्म जन्म की वासना जोय, राखी जीव सभी संजोय ।

*वासना का अटूट भण्डार, बढ़ता जा रहा बिन तकरार ।
इस भण्डार को जो ले तोड़, और न ले इसमें कुछ जोड़ ।
अपरिग्रह प्रतिष्ठित सोय, पूर्व जन्म के ज्ञान को गोय ।
अपरिग्रह वैराग्य से होय, बिन वैराग्य न संभव सोय ।
दो०—अपरिग्रह की साधना, बिन वैराग्य न होय ।
समझा जिस वैराग्य को, तजे परिग्रह सोय" ॥ 3727
कहा साध "हे नाथ प्यारे, दूर भये मम संशय सारे ।
अब बतलायें मुझे भगवान, किसको कहें वैराग्य सुजान ।
और बतलायें यह भगवान, इससे हो किमि जन्म का ज्ञान" ।
कहा नाथ "ये प्रश्न तिहारे, भाव गूढ़ हैं इसमें भारे ।
अन्य जन्म की बात लो जान, फंसो न इस जन्म यदि आन ।
उलझें जब इस भव में भाई, पहले जन्म की सुधि भुलाई ।
वर्तमान भव लागे प्यारा, विसरे जन्म पुरातन सारा ।
पूर्व संबंधी जाते भूल, आवृत करे विस्मृति की धूल ।
दो०—इसी जन्म के देह में, ऐसा फंसे जीव ।
भूले उसे पूर्व जन्म, कैसी बात अजीव" ॥ 3728
कहा साध "हे नाथ प्यारे, दैव के कर्तब सभी न्यारे ।
सचमुच है यह बात अजीब, अपना आपा भूले जीव ।
पर बतलायें हे मम नाथ, स्मृति जीव की रहे किमि साथ ।
जिससे पाछल का इतिहास, स्मरण सके रह जीव को खास ।

* बिन तकरार—बिना किसी आपत्ति के

आप तो गुरु सर्वज्ञ सुजान, चाहूं मै यह आप से ज्ञान ।
ज्ञान सरोवर तुम हो नाथ, दे ज्ञान मुझे करें सनाथ" ।
सुनकर उसकी नाथ ने बात, कहा "सुनो ला ध्यान तुम तात ।
पूर्व जन्म की बात जो गुप्त, इस जन्म में सभी से लुप्त ।
उसके ज्ञान का एक उपाय, पर वैराग्य जो नाम धराय ।

दो०—पर वैराग्य जिस को कहें, अपरिग्रह की सीम ।
उसको जो जन साध ले, उसका ज्ञान असीम ।।3729 क
अपरिग्रह वैराग्य में, कुछ भी भेद न होय ।
वैरागी जो जन भये, अपरिग्राही सोय" ।।3729 ख

कहा साध "हे गुरु महाराज, बतायें मुझ को यह भी आज ।
वैराग्य किसे कहें भगवान, पर वैराग्य का भी दें ज्ञान" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, तेरा भाव मैं लीना जान ।
मैं यह बात खोल जताऊं, अपने मन की तुझे बताऊं ।
मग वैराग्य का कठिन महान, इस पर चलना नहीं आसान ।
पर अपर दो भेद लो जान, पहला वशीकार लो मान ।
पर वैराग्य दूसरा भाई, उस पर चले मुक्त हो जाई ।
*देखा सुना हो जो कुछ मीत, किसी से भी न जिसकी प्रीत ।
उसे वैरागी लो तुम जान, "वशीकार" की यही पहचान ।

---

* **योगदर्शन** I. 15—दृष्टानुश्रविक विषय वितृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्यम् ।
अर्थ-देखे और सुने विषयों में जिसकी तृष्णा नहीं रही है। उसका वैराग्य वशीकार नाम वाला अर्थात अपर वैराग्य है।

दो०—*पर वैराग्य की न कहें, वह तो त्रिगुणातीत ।
तीन गुणों की सृष्टि में, नहीं कहीं भी प्रीत ॥ 3730 क
परमेश्वर का ज्ञान हो, माया में न सक्त ।
वह अवस्था पायकर, होय परम विरक्त ॥ 3730 ख
हे साध मैं तुझे बताया, पांच यमों का ज्ञान कराया ।
पांच यमों को जो जन साधे, कुण्डलि शक्ति उसे आराधे ।
ऐसी सिद्धि पुरुष वह पावे, जिसकी समता कहीं न आवे ।
सिद्धियां पाकर रहे विरक्त, चित्त न उनमें होय आसक्त ।
जग को भी दे नहीं आभास, उसमें शक्ति है कोई खास ।
हे साध अब यहां से जाओ, प्रातः काल लौट के आओ ।
आगे का हम देंगे ज्ञान, प्राणों का जिमि कीन बखान" ।

## पच्चीसवां दिन (25) प्रातः

भयी प्रातः साधु चलि आया, आ स्वामी को शीश झुकाया ।
कहा स्वामी हे साध सुजान, लीना, तुमने मुझ से जान ।
प्राण की शक्ति वह संभाले, यम नियमों को वह जन पाले ।
दो०—यम नियमों को पाल कर, अधिकारी जन होय ।
जागृत शक्ति को वही, संयमित रख संजोय" ॥ 3731
कहा साध "हे नाथ महान, यम का तो मिल पाया ज्ञान ।
नियमों का भी करें बखान, सभी सुनूं मैं लाकर ध्यान ।

---

1. * योगदर्शन I. 16—तत्परं पुरुष ख्याते गुंण वैतृष्ण्यम् ।
अर्थ—विवेक ख्याति द्वारा गुणों से तृष्णारहित हो जाना परवैराग्य है ।

उनके नाम बतावें देव, पालें किमि उन्हें अधिदेव।
लाभ उनसे क्या होय विशेष, पाले उन्हें जो जन हमेश।
आपके मुख से सुन कर नाथ, करूं हृदयंगम बनूं सनाथ"।
नाथ सुनी उसकी जिज्ञास, कहन लगे ला मुख पै हास।
"नियम पांच हैं मेरे भाई, 'शौच' 'संतोष' 'तप' सुखदायी।
स्वाध्याय को लो चौथा जान, प्रणिधान ईश्वर पंचम मान।
हर इक का बहु महत्व भाई, जाने सो जिस कीन कमाई।

दो०—पांच नियम व पांच यम, जो पाले सब काल।
ऐसा योगी वह भये, जिस के हो वश काल ॥ 3732

'शौच' को कहते शुद्धि भाई, मन वचन और कर्म समाई।
'षट्कर्मन' से तन को शोधे, शुद्ध भाव से मन प्रबोधे।
वचन की शुद्धि ऐसी होय, दोष न दीखे उसमें कोय।
लाभ अनेक शौच के भाई, सब सुनो तुम ध्यान लगाई।
तन की रक्षा शौच से होय, रोग मुक्त रह सुख को गोय।
संक्रामक भी न रोग सताय, रक्षा का यह महान उपाय।
शुद्धि अन्तःकरण की होय, चित्त सदा प्रसन्नता गोय।
मन एकाग्र रहे मम मीत, इन्द्रियों पर हो जन की जीत।
*सब से मुख्य बात यह जान, आत्म दर्शन पाये पुमान।

* योग दर्शन II, 40-41. शौचात्स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः ।
अर्थ-शौच से अपने शरीर के अंगों की रक्षा होती है और दूसरो से संसर्ग का अभाव होता है ।
सत्व शुद्धि सौमनस्यैकाग्रयेन्द्रियजयात्म दर्शन योग्य-त्वानिच ॥
अर्थ-चित की शुद्धि, मन की स्वच्छता, एकाग्रता, इन्द्रियों का जीतना और आत्म दर्शन की योग्यता आभ्यन्तर शौच से प्राप्त होती है ।

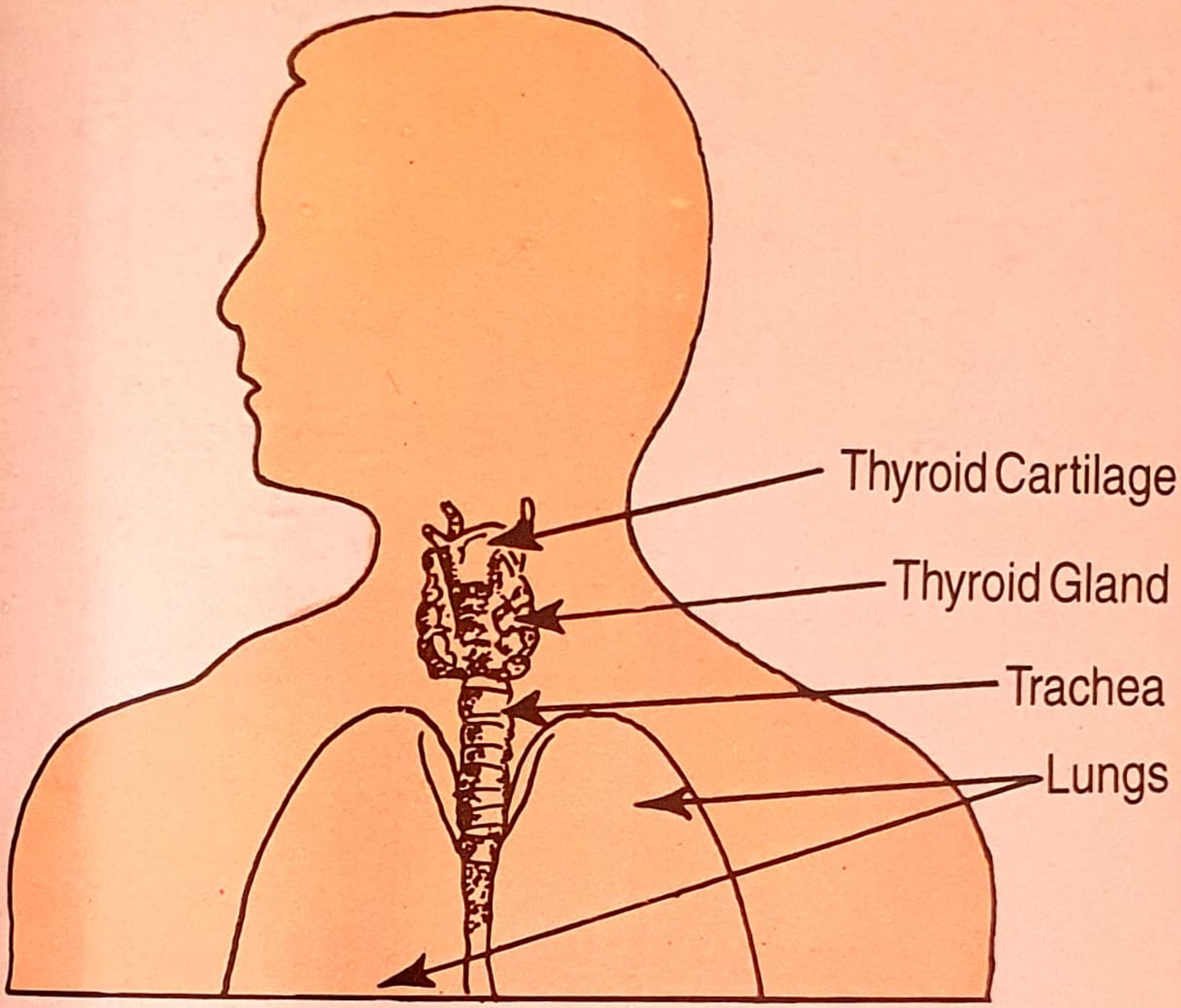


Drawing of the human thyroid gland

दो०—एक शौच से जन गहे, इतने लाभ महान ।
पालन कर इस नेम का, सुखी बने पुमान ॥ 3733 क
अन्य नियम संतोष है, उसको भी लो जान ।
ईश्वर ने जो कुछ दिया, जानो उसे महान ॥ 3733 ख
गिडगिडाना छोड़ कर, सुखी रहें सब काल ।
माया का क्या अन्त है, करे जीव बे हाल ॥ 3733 ग
*जब सन्तोषी जन भये, परमानन्द न दूर ।
उसे अनुत्तम सुख मिले, और खुशी भरपूर ॥ 3733 घ

अगला नियम अब लेवो जान, उसका 'तप' ऐसा अभिधान ।
अग्नी रूप तपस्या जानो, शुद्धी हेतु उसे पहचानो ।
तप से दूर भयें सभी दोष, जलावे मन का सञ्चित कोष ।
साधन वे जिनसे इमि होय, तप के साधन कथे हैं सोय ।
इन्द्रियों में विकार अनेक, चले कुपथ पर भी प्रत्येक ।
कुपथ का अन्त सदैव विनाश, जीव फंसे न कुपथ के पाश ।
इसी हेतु वह तप कर पाये, निज इन्द्रियों को वश में लाये ।
*घोड़े को जिमि सइस सिधाये, हाथी को माहौत सिधाये ।
स्वामी श्वान को जिमि सिधाये, योगी इन्द्रियों को कर पाये ।

* योग दर्शन II. 42 संतोषादनुत्तम सुख लाभः ।
अर्थ-संतोष से अनुत्तम सुख का लाभ प्राप्त होता है ।
(उत्तम से उत्तम सुख, अर्थात जिससे बड़ा और कोई सुख नही)
* सइस—घोड़े को शिक्षित करने वाला व्यक्ति ।
माहौत—हाथी को शिक्षित करने वाला व्यक्ति ।

दो०—* इन्द्रिन को इमि वश करे, पशु को जैसे नाथ ।
काया सिद्ध तभी भये, चले न उलटे पाथ" ॥3734

कहा साध "हे योगीराज, संशय उठा है मम मन आज ।
एक इन्द्री न वश में आये, दश इन्द्रिन किमि वश कर पाये ।
यह तो सरल नहीं है काम, करनी वश में इन्द्री तमाम ।
कोई वही उपाय बतायें, सब इन्द्री जिमि वश में आयें" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, इस का भी मैं दूं तुझे ज्ञान ।
शत्रु एक का हो जभी नाश, दूसरा जाता होत हताश ।
इक इन्द्री जब वश हो पाये, शक्ति अन्य की कम हो जाये ।
योगी करे जब नित प्रयास, बने तपस्वी इक दिन खास ।

दो०—करत करत अभ्यास से, वश में होत शरीर ।
इन्द्रिन के सब दोष से, मुक्त तपस्वी धीर" ॥3735

कहा साध "हे जग के नाथ, मिटे संशय मैं भया सनाथ ।
आगे का मुझे दीजो ज्ञान, ज्ञानी तुम मैं शिष्य अनजान" ।
कहा नाथ "अब सायं आना, ज्ञान तभी तुम मुझ से पाना ।

## पच्चीसवां दिन (25) सायं

सायं भयी साध चलि आया, स्वामी को आ माथ झुकाया ।
और कहा "हे नाथ प्यारे, सुनने आया वचन तिहारे ।
आगे का अब दीजो ज्ञान, ज्ञान का दीजो मुझ को दान" ।
कहा नाथ "मैं तुझे बताऊं, स्वाध्याय का रहस्य जताऊं ।

---

* योगदर्शन II. 43—कायेन्द्रिय सिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः ।
अर्थ—तप से अशुद्धि के क्षय होने से शरीर और इन्द्रियों की शुद्धि होती है ।

स्वाध्यायी पुरुष वही कहाय, नाम प्रभु का नित्य जप पाय ।
प्रभु की लीला सुने निरन्तर, प्रभु की लीला पढ़े निरन्तर ।
दो०—जपत प्रभु के नाम को, करत प्रभु का ध्यान ।
सुनत प्रभु की गाथ को, स्वाध्यायी लो जान" ॥3736
सुन कर नाथ का यह उपदेश, कहा साध "हे गुरु सर्वेश ।
ग्रंथ कौन जो हम पढ़ पायें, नाम कौन जो हम जप पायें" ।
सुन कर साध की यह जिज्ञास, कहा नाथ "जन कर विश्वास ।
नाम जपे स्व इष्ट का भाई, मन्त्र उसी से भव तर जाई ।
ग्रंथ पढ़े जिस में गुण गान, अपना इष्ट जहां भगवान ।
*इस विध इष्ट का हो साक्षात, स्वाध्याय का यह है गुण तात ।
जिन का इष्ट राम है लाल, 'राम' नाम से भये निहाल ।
वे जपें सदा 'राम' ही 'लाल', यही नाम जप रहें खुशहाल ।
दो०—राम लाल प्रभु की दया, उन पर ऐसी होय ।
मिलें कभी वे स्वप्न में, या ध्यान में खोय ॥ 3737
ग्रंथ प्रभु का लागे प्यारा, बारबार वे पढ़ते सारा ।
दिव्य रामायण से लें सीख, चलें सदा वे उस ही सीख ।
मन में उन के प्रभु का वास, प्रभु को सिमरें वे हर श्वास ।
दर्शन दें प्रभु उन को ऐसे, निज संबंधी हों वे जैसे ।
इस विध भक्त बनें नरनार, स्वाध्याय का वे ले आधार ।

---

*योग दर्शन II. 44—स्वाध्यायादिष्ट देवता संप्रयोग :
अर्थ—स्वाध्याय से इष्ट देवता का साक्षात होता है ।

जपें नाम और पढ़ें ग्रंथ, गहें भक्ति का सुन्दर पंथ।
होत यह ईश्वर का प्रणिधान, जिस से लागे प्रभु में ध्यान।
*समाधि स्थित जन इस विध होय, नियम की महिमा जाने सोय।
इस से क्या हो बढ़ कर भाई, प्रकटे ईश जन सन्मुख आई।
दो०—ईश्वर के प्रणिधान से, मिलें आ भगवान ।
ध्यान प्रभु का जब धरें, हो तभी कल्याण" ॥3738
कहा साध ने "हे भगवान, प्रभु के नाम की महिमा जान।
और प्रभु ग्रंथ महान, संपूर्ण जिस में योग ज्ञान।
प्रभु का रूप जो हे मम नाथ, जन को करें ये सभी सनाथ।
अब मैं श्रवण करूं हे नाथ, राम प्रभु की आप से गाथ।
मैं भी उन में चित्त लगाऊं, ईश्वर रूप प्रभु को ध्याऊं"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, पाना चाहो प्रभु का ज्ञान।
अनादि अनीह प्रभु अखण्डा, जिन के रचे सभी ब्रह्माण्डा।
प्रतियुग में वे लें अवतार, करते हैं वे योग उद्धार।
दो०—योग की शक्ति से रचा, विश्व प्रभु ने आप ।
युग युग में अवतार ले, योग सिखाते आप ॥3739 क
सतयुग शिव अवतार ले, प्रकटाया था योग ।
आदिनाथ नाम धराय, स्वयं फैलाया योग ॥3739 ख

* योग दर्शन II. 45—समाधि सिद्धिरीश्वर प्रणिधानात् ।
अर्थ—समाधि की सिद्धि ईश्वर प्रणिधान से होती है ।

## The Pituitary and Related Organs

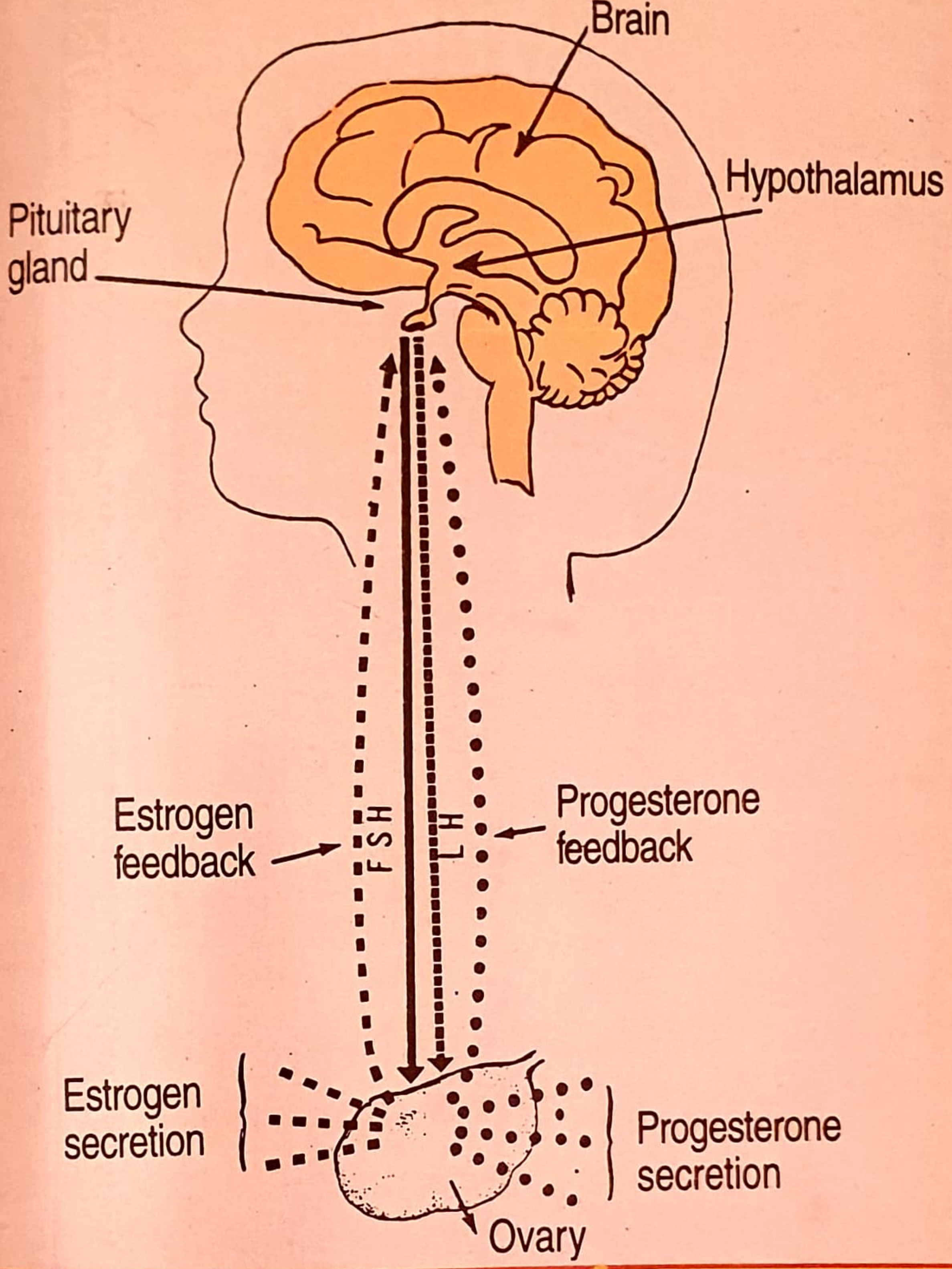

दो०–त्रेता में फिर राम जी, रहे वसिष्ठ के पास ।
ज्ञान 'योग वसिष्ठ' का, मिला जगत को खास ॥3739 ग
योगेश्वर फिर कृष्ण जी, प्रकटे द्वापर आय ।
भगवद्गीता नाम से, योग शास्त्र रच पाय ॥3739घ
कलियुग में फिर योग को, भूला जब संसार ।
राम लाल के रूप में, लीन प्रभु अवतार ॥3739ङ
दीना जग को आन कर, वही सनातन योग ।
उन की शिक्षा से लगे, योग करने सब लोग ॥3739 च
उसी प्रभु से सीख कर, 'मुलख' भया मैं धन्य ।
प्रभु कृपा से हूं भया, प्रभु का दास अनन्य ॥3739 छ
उन्हीं प्रभु की गाथ को, जानन चाहो मीत ।
सावधान हो श्रवण कर, जो कहूं सुप्रीत ॥3739ज
उन्हीं प्रभु की मैं बतलाऊं, जीवन लीला कुछ कथ पाऊं ।"
लीना प्रभु ने जग अवतार, योग का करने पुनरुद्धार ।
अनन्त शक्ति को ले वे आये, कलि का पाप देख जब पाये ।
अमृतसर में लीन अवतार, पण्डित गंडा राम के द्वारा ।
माता भागवन्ती कुख जाय, देव भी जय जय थे कर पाय ।
सम्पत्ति से न प्रभु को काम, विश्व सम्पत्ति के वे धाम ।
वर मुहं मांगा दे वे पायें, ऐसी शक्ति संग वे लायें ।
ऐश्वर्य लोक परलोक का भाई, देने में समर्थ गोसाई ।
सिद्धि अष्ट के वे हैं मालक, सर्व विश्व के वे ही पालक ।

दो०—दुखी भक्त को निरख कर, निज तन पर दुख लेंय ।
उस का दुख खुद भोग कर, सुखी उसे कर देंय ।।3740 क
दुख अन्य का भोगना, यह शक्ति उन पास ।
सहायक सभी जनन के, प्रभु अवतारी खास ।।3740 ख

प्रातः काल जब तुम चलि आओ, वर्णन आगे का सुन पाओ ।
अब करिये जाय कर विश्राम, होने को आ रही है शाम ।

## छब्बीसवां दिन (26) प्रातः

प्रातः काल साधु चलि आया, स्वामी को निज माथ झुकाया ।
और कहा "हे मेरे नाथ, प्रभु लीला कह करें सनाथ" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, चरित प्रभु के करूं बखान ।
राम नवमी दिन ले अवतार, आये जग का करन उद्धार ।
बालपने बहु कीने काम, जन्मसिद्ध थे बालक राम ।
बुढ़िया मरणासन्न निहार, तन में प्राण उन दीने डार ।

दो०—*ऐसे ऐसे कर्म बहु, बालपने में कीन ।
आयु पंदरह वर्ष तक, शिक्षा भी बहु लीन ।।3741 क

---

* श्री प्रभु राम लाल जी के जीवन काल का विभाजन—

| | | |
|---|---|---|
| (1) विद्यार्थी काल | आयु 1–15 वर्ष | सन ई० 1888–1903 |
| 2. विवाहित काल | आयु 15–20 वर्ष | सन ई० 1903–1908 |
| 3. प्रयटन काल | आयु 20–30 वर्ष | सन ई० 1908–1918 |
| 4. प्रचार काल | आयु 30–51 वर्ष | सन ई० 1918–1938 |
| 5. वनवास काल (दूसरा शरीर) | आयु 51–65 वर्ष | सन ई० 1938–1952 |
| 6. विश्वरूप काल (तीसरा शरीर) | आयु 65 कल्पांत | सन ई० 1952–कल्पांत |

प्रभु जीवन के काल की यह गणना ऋषि काक भुशुण्डी कृत भविष्यवाणी और योगी भक्तों की समाधियों के आधार पर है ।

आयु पंदरह वर्ष में, व्याह राम का कीन ।
राम लाल उस काल भी, जग के हित में लीन ।।3741 ख
भ्रमण करें इत उत प्रभु, योग धर्म के हेत ।
धर्म बढ़े इस जगत में, था यही अभिप्रेत ।।3741 ग
बीस वर्ष के राम थे, गये पिता सुरधाम ।
निकले तब गुरु खोज में, राम लाल सुख धाम ।।3741 घ
था प्रयटन राम का, कष्टों से भरपूर ।
जान जोखम में डाली, गये प्रभु बहु दूर ।।3741 ङ
गुरुओं के गुरु राम जी, गुरु खोज में लीन ।
हर इक को गुरु चाहिए, शिक्षा जग को दीन ।।3741 च
समेरु पर्वत गुरु मिले, शिव अवतारी नाथ ।
राम लाल सेवा करें, जो नाथन के नाथ ।।3741 छ
आज्ञा गुरु की जब भयी, जाने की जग मांझ ।
राम लाल तब आ गये, बस्तिन के फिर मांझ ।।3741 ज
जब बस्ती में प्रभु जी आये, हरिद्वार की ओर सिधाये ।
ऋषि मुनियों को दर्शन दीने, जीवन धन्य सबन के कीने ।
योग का था न उन को ज्ञान, तप तप कर थे भये हैरान ।
उन को परम अधिकारी जान, पहले उन का कीन कल्याण ।

योग का भया था परम ह्रास, तपस्वी भी थे वञ्चित खास।
ऋषि मुनि कोई जो मिल पाये, सभी योग से वञ्चित पाये।
प्रभु ने कीन बहुत प्रयास, शिक्षित कीने ऋषि कई खास।
हरिद्वार से तभी सिधाये, ऋषिकेश की ओर थे आये।
जहां कहीं अधिकारी पाया, प्रभु ने उस को योग सिखाया।

दो०—गुरु की आज्ञा पालते, गुरुओं के सिरमौर।
जहां अधिकारी होता, जाते उस ही ठौर ॥3742

ज्ञान कृपालानन्द का पाय, उस वन की प्रभु ओर सिधाय।
कृपालानन्द ने प्रभु को जाना, आये ईश्वर हैं यह माना।
उसे मिल प्रभु फिर चलि आये, हरिद्वार में डेरे लाये।
वहां पर भरा कुंभ का मेल, जनता की वहां रेल व पेल।
प्रभु वहां भी योग प्रचारें, जन गण के बहु भ्रम निवारें।
प्रभु का भ्रात कुंभ था आया, राम को मिल वहां वह पाया।
भाई दोनों घर तब आये, अमृतसर जो नगरी सुहाये।
देव सकल तब भये प्रसन्न, सुखी भये गा जग आपन्न।

दो०—नगरी में जब आ गये, खुले जगत के भाग।
जन गण में प्रचार होन, योग धर्म का लाग ॥3743 क

अमृतसर तभी बन गया, केन्द्र एक विशेष।
योग जहां पर सीखती, जनता आय हमेश ॥3743 ख

बीस वर्ष तक नाथ ने, कीन योग प्रचार।
हो गया सभी जगत में, योग धर्म विस्तार ॥3743 ग

प्रभु ने आश्रम योग बनाये, साधन आश्रम योग कहाये ।
दिव्य नाम वा दिव्य वे धाम, जो चलि आये हो पूर्ण काम ।
दूर दूर जा योग सिखाया, लुप्त योग जग में प्रकटाया ।
सतयुग में जो शिव ने कीन, रामचन्द्र जो त्रेता दीन ।
द्वापर योग कृष्ण दे पाये, देने अब थे प्रभु जी आये ।
नयी क्रांति अब जग में आयी, देख सकल जगती चकरायी ।
जनता न था जो कभी देखा, प्रभु के आश्रम आ वह पेखा ।
नासिका से हो जल का पान, और वहीं से दूध का पान ।
सेरों कच्ची सब्जी खायें, कर के जीवन तत्व पचायें ।
ऐसे ऐसे साधन देख, जनता थी सभी चकित विशेष ।
प्रभु सबन को स्वयं समझाते, "जन गण इस से सुख हैं पाते ।
ऋषियों की यह विद्या भाई, सर्व जगत को है सुखदाई ।

दो०—जग के ही कल्याण हित, शिव रचा था योग ।
परंपरा वह योग की, भूल गये हैं लोग ॥3744 क
तन मन के सब दोष को, करत योग है दूर ।
आओ सीखो योग को, रोग भयेंगे दूर" ॥3744 ख

प्रभु उपदेश को सब ने मान, जग ने कीना योग प्रवाण ।
बीस वर्ष उन योग सिखाया, लीन बदल फिर उन निज काया ।
काक भुषुण्डी की जो वाणी, भयी सत्य हम सबने जानी ।
दूजा देह धर वन सिधाय, जान रहस यह भक्त ही पाय ।

सेवक 'मुलख' को दीनी सेव, ध्यान में दर्शन दें अधिदेव।
चौदह वर्ष वन में रह पाय, तीसर देह में तब वे आय।
विश्व रूप धारा भगवान, भुषुण्डी वचन कीन प्रवाण।
सभी भक्तों के अब वे साथ, हो न कोई भी भक्त अनाथ।
दो०—इस रूप में नाथ अब, जग प्रसारें योग।
द्वीप द्वीप में योग को, सीख सकें सब लोग ॥3745
हे साध ! मैंने बतलाया, प्रभु का दिव जीवन कथ पाया।
तीसर तन जो प्रभु है धारा, कल्पांत तक रहे संसारा।
हे साध ! अब तुम चलि जाओ, सायं काल लौट के आओ"।

छब्बीसवां दिन (26) सायं

सायं का जब वेला आया, साधु भी तब लौट कर आया।
कहन लगा "हे योगीराज, फिर बतलाओ मुझ को आज।
प्रभु जी ने लेकर अवतार, तीजा देह अब लीना धार।
उस तन में जो कर रहे कार, जिस विध करते योग उद्धार।
अल्प काल हि योग महाराज, फैलाया जग सकल में आज।
दो०—अल्प काल में योग का, भया इतना विस्तार।
फैला सारे जगत में, प्रभु की शक्ति अपार ॥3746
सूक्ष्म अति प्रभु का रूप, रहें सदैव जगत से गूप।
किमि हम उन को जानन पावें, स्थूल रूप किमि दर्शन पावें।
क्या यह संभव है मम नाथ, यह बतला कर करें सनाथ।
मैं हूं तव चरणों का चेरा, साधन योग कर्म है मेरा।

चाहूं प्रभु के दर्शन पाऊं, चरण धूल ले मस्तक लाऊं"।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, कहा स्वामी ला मुख पै हास ।
"निराकार हैं प्रभु इस काल, भक्तों के चित्त में साकार ।
प्रभु तो सभी जगह विद्यमान, भक्त के मन को लेवें जान ।
दो०—श्रद्धा जन की देख कर, प्रकट हों प्रभु दयाल ।
ध्यान मग्न जन को करें, दें दर्शन उस काल ॥3747
प्रभु दर्शन के कारण तीन, सके न जन स्वयं सब चीन ।
प्रथम कारण मन की जिज्ञास, दूसर कारण मन शुद्धि खास ।
प्रभु की कृपा तीजा कारण, करती जो सब विघ्न निवारण"।
सुन कर साध प्रभु की बात, बोल उठा "हे जगत त्रात ।
यह ही मैं तो जानन चाहूं, निज जिज्ञास मैं किमि बढ़ाऊं ।
ज्ञान मिले न बिन जिज्ञास, दर्शन की किमि पूजे आस ।
यह भी नाथ मुझे बतलायें, चित्त की शुद्धि किमि कर पायें ।
मन मैला चित्त चंचल नाथ, उपाय बता कुछ करें सनाथ ।
दो०—हे नाथ मैं पूछता, तुम से यह ही बात ।
किमि जिज्ञासा ऊपजे, चित्त किमि शुद्ध तात ॥3748
कहा नाथ "हे साध प्यारे, रहस बताऊं तुम को सारे ।
जिज्ञासा उपजाने हेत, दो ही कारण हैं अभिप्रेत ।
प्रथम कारण है गुरु का संग, स्वाध्याय जानो दूसर अंग ।
यदि दोनों जन करें निरंतर, हो जिज्ञासा तब जन अंतर ।
चित्त शुद्धि के अंग हैं चार, उन पर करे जन नित्य विचार ।
मित्र भावना मन में लाओ, जन किसी को सुखी जो पाओ।

दुख में पड़ा देखो इन्सान, करुणा मन में उपजे आन।
करुणा से चित्त होत पवित्त, जीव दुखी प्रति आवे चित्त।
दो०—अंग तीसरा जानिये, कीना जिमि उल्लेख।
मुदिता उस का नाम है, होय पुण्य को देख ॥3749
पुण्य कर्म जब जन ले देख, चित्त में लाये हर्ष विशेष।
चित्त पवित्र होय तब भाई, मन का कलुष निकल ही जाई।
मन शुद्धि का चतुर्थ उपाय, श्रवण करो तुम चित्त को लाय।
पाप कर्म जब होता देखो, बार बार न उसे उल्लेखो।
*उपेक्षा वृत्ति राखो मीत, शुद्ध रहेगा तब तव चीत।
जन का मन जब शुद्ध हो जाय, प्रभु दर्शन वह तब ही पाय"।
सुनी नाथ से बात समूची, साथ नाथ की बात उलूची।*
"दो कारण मैं ने सुन पाये, प्रभु दर्शन के जो बतलाये।
दो०—दो कारण प्रभु दर्श के, जो कथे तुम नाथ।
मन जिज्ञासा एक है, चित्त शुद्धि उस साथ ॥3750 क
तीजा कारण जो कथा, उसे भी करें स्पष्ट।
भ्रांति चित्त की दूर हो, हो संशय भी नष्ट" ।3750 ख

---

1. * चित्त शुद्धि के चार उपाय—
1. सुखी के प्रति मित्रता भाव।
2. दुखी के प्रति करुणा भाव।
3. पुण्य के प्रति मुदिता भाव।
4. पाप (अपुण्य) के प्रति उपेक्षा भाव।
2. * उलूची—टोकी, रोकी।

स्वामी जी ने सुन यह बात, कहा जब तुम कल आओ प्रात ।
पूछ लेनी फिर तुम यह बात, उत्तर मिलेगा तुम को तात ।

## दिन सताइसवां (27) प्रातः

भयी प्रातः साध चलि आया, आय नाथ को शीश झुकाया ।
वही बात उस फिर कथ पायी, कल सायं जो थी मुख लायी ।
सुनी जब साधु की जिज्ञास, कहा नाथ ला मुख पै हास ।
"हे साध मैं था बतलाया, तीजा कारण सुन तुम पाया ।
प्रभु किरपा मैं थी बतलाई, भया दर्शन जिस कृपा पाई" ।
कहा साध "मुझ पर कर दाया, मुझ को कथिये वही उपाया ।
जिस से प्रभु किरपा पा जाऊं, और प्रभु के दर्शन पाऊं" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, कर श्रवण ये वचन तिहारे ।
मुझ को तो न दीख वह पाय, कथन करूं जो तुझे उपाय ।
ईश्वर के जो उपाय अधीन, जीव सके किमि उस को चीन ।
दो०—ईश कृपा को जानिये, ईश्वर के अधीन ।
किस कारण से होत वह, सके न को भी चीन" ॥3751
कहा साध "हे नाथ सुजान, सद्गुरु से होत कौन महान ।
गुरु का किया न ईश मिटाय, गुरु अधीन हैं सकल उपाय ।
गुरु की शरण जब जन हो पाय, गुरु से ही वह सब कुछ पाय ।
मुझे बताइये वही उपाय, प्रभु की कृपा जिस विध हो जाय ।
सर्वव्यापक जो हैं नाथ, और रहें हम सब के साथ ।
उनके दर्शन की जिज्ञास, हो पूर्ण मम यह अरदास ।

गुरु चरणी जब जन चलि आये, अपूर्ण काम क्यों रह पाये।
एक जन्म नहीं, जन्म अनेक, बाद मिली गुरुपूर्ण की टेक।

दो०—गुरुपूर्ण को पाय कर, जो न दर्शन होय।
भाग्य हीन मुझ सा प्रभो, न जानूं यहां कोय" ॥3752

कहा नाथ "हे साध सुजान, जिस मन होत जिज्ञास महान।
निराश तो वह न होता मीत, प्रतीक्षा में रह वह सप्रीत।
देर प्रभु के घर हो भाई, पर अंधेर तो है न राई।
प्रभु निर्णायक जहां हो साध, न्याय में लागे लेश न बाध।
उच्चित काल जभी चलि आय, दर्शन भक्त अवश्य ही पाय।
रहो प्रतीक्षा में सदा साध, प्रभु को प्रतिक्षण लो आराध।
सदा प्रतीक्षा में जन जोय, पल पल स्मरण करे जन जोय।
प्रभु निरखें खुद उस की ओर, प्रकटें किसी भी क्षण उस ठोर।

दो०—प्रभु को बाधा तो नहीं, प्रकट किसी हों काल।
जन अधिकारी सो भये, सिमरे जो सब काल" ॥ 3753

सुन कर नाथ का यह उपदेश, कहा साध "हे मम हृदयेश।
जो उत्तर अब मैंने पाया, मेरा संशय सकल नशाया।
और बात इक जानन चाहूं, ज्ञान आप से ही मैं पाऊं।
प्रभु अवतारी जब जग आयें, उस युग में बहु कुछ कर जायें।
राम लाल अवतारी नाथ, किस विध करेंगे जगत सनाथ।
प्रतियुग में करें कर्म विशेष, मिटें जगती के जिमि क्लेश।
कर्म कौन अब करें भगवान, जिन से जगत का हो कल्याण"।

सुन कर साध की यह जिज्ञास, कहा स्वामी ला मुख पै हास ।
हे साध तुम लो यह जान, प्रभु सर्वज्ञ, समर्थ, सुजान ।
दो०–देश काल अनुरूप ही, प्रभु धारें निज देह ।
पाप भरे कलि काल में, धारा योगी देह ॥3754 क
धर्म के अवतार प्रभु, होय धर्म प्रसार ।
उनकी शिक्षा पर चले, जग का हो उद्धार ॥3754 ख
योग धर्म वे खुद प्रचारें, सर्व जगत के जन गन तारें ।
देश काल की सीम न जानें, सीमित न निज कर्म को मानें ।
जहां भक्त अधिकारी पावें, वहां प्रकट ही वे हो जावें ।
धर्मी जनों का करते त्राण, व्यापक सर्व विश्व भगवान ।
उन्हें न बन्धन है कुछ साध, क्षण में प्रकटें वे निर्वाध ।
पापपरिपूर्ण अब संसार, केवल योग से हो उद्धार ।
दो०–योग की शक्ति से प्रभु, धर्म प्रसारें आप ।
पाप कर्म से हो घृणा, जो देता संताप ॥3755क
ईश्वर के संकल्प से, हो न सके क्या कार ।
उन के ही संकल्प से, सुधरे गा संसार ॥3755ख
ले कर यही विशेषता, आये हैं भगवान ।
शस्त्र प्रभु का योग है, जग ले अब यह जान ॥3755 ग
अहिंसा शस्त्रयोग का, क्यों करे संहार ।
नाश पाप का ही करे, पापी का उद्धार" ॥3755 घ

कहा साध "हे नाथ प्यारे, मिट गये मम भ्रम हैं सारे।
और ज्ञान जो योग का होय, सुनूं वह भी आप से सोय"।
कहा नाथ "हे साध सुजान, शाम आओ तब करूं बखान"।

## दिन सताइसवां (27) सायं

सायं भयी साध चलि आया, उसे नाथ निज पास बिठाया।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, प्राणायाम का ज्ञान महान।
उस का करें हम अब बखान, श्रवण करो तुम ला कर ध्यान।
जग जीवन का प्राण आधार, साधें प्राण को नित नर नार।
प्राणायाम का एक विधान, करूं मैं उस का प्रथम बखान।
दो०—नाडी शोधन हेत जो, वही कथूं अब मीत।
नित्य करे अभ्यास जो, ले प्राण को जीत ॥ 3756
बाईं नास से खींचो प्राण, सीने को तब लो तुम तान।
रोको भीतर शक्ति अनुसार, दाईं से फिर दो नीकार।
पुनः दाईं से भर के श्वास, रोक के भीतर सह विश्वास।
बाईं से निकाल दो भाई, नाडी शोधन यही कहाई।
मम सन्मुख अब कर दिखलाओ, प्राण की क्रिया शुद्ध अपनाओ"।
कहा साध "हे सद्गुरु प्यारे, श्रवण किये मैं वचन तिहारे।
एक बात यह भी बतलायें, किस आसन में बैठन पायें।
और बात यह भी लूं जान, कितना काल करूं भगवान।
दो०—और भी बात बतायें, रोकूं कितना काल।
प्राणायाम तभी करूं, नाथ इसी मैं काल" ॥ 3757

कहा स्वामी "हे साध सुजान, इसका भी मैं दूँ तुझे ज्ञान ।
आसन की तुम पूछी बात, आसन उत्तम पद्म है तात ।
प्रथम इस आसन का अभ्यास, कर पाछे शोधो निज श्वास ।
पद्मासन न अगर लग पाये, सिद्धासन ही जन अपनाये ।
अथवा वज्रासन ले साध, उसमें ही ले श्वास आराध ।
कठिन लगें यदि ये सब भाई, सुखासन तब होय सुख दाई ।
यदि हो टांगों में कुछ दोष, लाये न जन मन में कुछ रोष ।
कुर्सी पर ही बैठ दिखाये, प्राणायाम वहीं कर पाये ।

दो०—सर गर्दन व कमर को, सीधा रख सुजान ।
नित प्राणायाम करे, धार प्रभु में ध्यान ॥ 3758

पूछी है जो दूसरी बात, काल की तुम ने हे मम तात ।
पूरक कुंभक का अनुपात, एक चार का जानो तात ।
पूरक रेचक का जो भाई, एक व दो ही बह सुखदायी"।
स्वामी जी की सुन कर बात, कहा साध "जो कहा अनुपात ।
सरल रीति से करिये स्पष्ट, दास का भ्रम जिमि हो नष्ट"।
कहा नाथ "मैं फिर बतलाऊं, सरल रीति से अब कह पाऊं ।
आठ पल में जो लेवो सांस, रोको बत्तीस पल वह सांस ।
सोलह पल में उसे निकालो, तुम अनुपात इसी को पालो ।

दो०—इसी विधि जभी जन करे, नित्य प्राणायाम ।
स्वस्थ रहे वह ही सदा, सिमर सिमर कर राम ॥3759

एक बात करूं और स्पष्ट, तव भ्रांति को करने नष्ट ।
जैसे जैसे बढ़े अभ्यास, मात्रा में भी हो वृद्धि खास ।

पूरक में जभी वृद्धि होय, कुंभक रेचक में भी सोय ।
शक्ति अनुसार बढ़ावे काल, योगी समझे प्राण की चाल"।
स्वामी जी की सुन कर वाणी, कहा साध "हे जन कल्याणी ।
धृष्टता मेरी करिये माफ, और बात इक कर दो साफ ।
कितने कुंभक नर कर पाये, जिस से वह बहु लाभ उठाये"।
कहा नाथ "जो प्रश्न तुम कीन, बहुत उपयुक्त बात पुछ लीन ।
दो०—उतने कुंभक ही करे, जितनी शक्ति होय ।
शक्ति का अतिक्रमण कर, हानि उठावे सोय ॥ 3760
प्रयाप्त छः कुंभक ही जानो, स्वास्थ्य लाभ इतने से मानो"।
साध प्रश्न पुनः कर पाया, "हे नाथ बहु आप की दाया ।
कीनी सभी तुम बात स्पष्ट, भ्रम भये सभी मेरे नष्ट ।
आज्ञा हो तो पूछूं देव, मिले आप से पूरा भेव ।
पूरक आदि का अनुपात, इस में क्या रहस्य है तात ।
पूरक से कुंभक का काल, कथा चौगुणा आप दयाल ।
दुगुणा रेचक को कथ पाया, यह रहस्य न समझ में आया"।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, ज्ञान संबंधी प्रश्न तिहारे ।
कल प्रातः जभी चलि आओ, इनका उत्तर तब ही पाओ ।

## दिन अठाइसवां (28) प्रातः

दो०—भया प्रातः काल जब, आ गया तब साध ।
प्रश्न वही उस कर दिया, जिसमें रहस्य अगाध ॥ 3761
कहा साध "हे सद्गुरु दयाल, पूंछू वही मैं आज सवाल ।
प्राणायाम की मात्रा देव, इस में गूढ़ कौन सा भेव ।

कृपा कर मुझ को समझावें, मम जिज्ञासा शांत करावें"।
कहा नाथ "जिज्ञासा भाई, जो है तेरे मन में आई।
तुम्हारा बहु यह शुभ विचार, प्राणायाम का प्रकटे सार।
पूरक द्वारा पूरे प्राण, भरता भीतर योगी सुजान।
वेग द्वारा करे यह काम, श्वास से सीना भरे तमाम।
धीरे धीरे यदि कर पाये, श्वास न पूर्ण वहां भर पाये।

दो०— शीघ्रता से श्वास जन, भर ले सीने बीच।
अधिक काल वहां रोके, इस से लाभ समीच ॥3762क
अधिक काल जो रोकना, उसमें गुण विशेष।
रुका सांस जब फैलता, उपजे शक्ति निःशेष ॥3762ख
उस वायु की आक्सीजन, करे खून को शुद्ध।
जितनी मात्रा में कथा, रोके जन प्रबुद्ध ॥3762ग
मात्रा से बढ़ रोकना, हानि बहु उपजाय।
घुटन हो जब श्वास में, हृदय तब अकुलाय ॥3762 घ
सुन रेचक की बात अब, श्वास निकाले साध।
धीरे धीरे ही करे, होय जिमि निर्वाध ॥3762 ङ
पूरा सांस निकालना, है आवश्यक साध।
धीरे से ही हो सके, यह क्रिया निर्बाध ॥3762 च
पूरक से दुगुणा समय, हो रेचक में मीत।
व्यवहारिक यह नेम है, पालें सब सपरीत" ॥3762 छ

स्वामी जी की सुन कर बात, कहन लगा वह साध "हे तात ।
जो ज्ञान मैं आप से पाया, उसने सब मम भ्रम दुराया ।
पूरक कुंभक रेचक देव, मैं करूं रह आप की सेव ।
मात्रों का भी राखूं ध्यान, जैसा पाया आप से ज्ञान ।
दीजो मुझे प्रभो आशीष, युक्त भयें मम प्राण मुनीष"।
कहा स्वामी "हे साध प्यारे, ये हैं शुभ विचार तुम्हारे ।
प्राणों को जो ले जन साध, सिद्धि योग में हो निर्बाध ।
प्रातः सायं कर अभ्यास, संयमित कर ले अपना श्वास ।

दो०—संयम में हो श्वास जब, मन पर संयम होय ।
योग युक्त तब जन बने, ईश कृपा पा सोय" ॥3763

कहा साध "हे गुरु महाराज, और इक बात बताओ आज ।
किस स्थान पर बैठ के नाथ, साध प्राण हम बनें सनाथ" ।
स्वामी जी तब उसे बताया, जो पूछा था वह समझाया ।
प्राणायाम के करने हेत, स्थान शुद्ध ही है अभिप्रेत ।
दूषित वायु जहां नहीं होय, स्थान उच्चित जानो तुम सोय ।
वायु शुद्ध व स्थान भी शुद्ध, प्राणायाम कर विकसे बुद्ध ।
इस का भी जन राखे ध्यान, देश एकान्त उत्तम स्थान ।
शोर शराबा जहां पै होय, स्थान उच्चित न जानो सोय ।

दो०—इतना ही बस जान लो, उपयुक्त वही है देश ।
वायु जहां की शुद्ध हो, शोर जहां न लेश" ॥3764

कहा साध "हे सद्गुरु देव, जानन चाहूं मैं यह भेव ।
किस विध शब्द हों बाधक नाथ, प्राणायाम में दीना नाथ" ।

सुनी जब साधु की जिज्ञास, कहा नाथ "सुन बात यह खास ।
मन व प्राण का नात अटूट, सतर्क रहो न जाय यह छूट ।
शब्दों में यदि मन रुक पाये, प्राणों में तब बाधा आये ।
मन को एकाग्र कर के मीत, प्राणायाम करो ला चीत" ।
पूछा साधु "प्राण आधार!, साधें प्राण जब नर व नार ।
मन एकाग्र कहां कर पायें, यह बात मुझे प्रभो बतायें ।
दो०—करें प्राणायाम जभी, बैठ एकान्त स्थान ।
मन एकाग्र कहां करें, स्पष्ट करें भगवान" ॥3765
कहा नाथ "तुम ठीक उच्चारा, किस थल का मन लेय सहारा ।
जिस से स्थिरता गहे वह मीत, और न भटके जन का चीत ।
एक बात तुम निश्चित जानो, मन प्राण का नाता मानो ।
मन प्राण के साथ मिलाओ, प्राणायाम तभी कर पाओ" ।
कहा साध "हे मम गुरु देव, मुझे बताओ इस का भेव ।
मन को प्राण से किमि मिलावें, जिमि विलग न दोय हो पावें ।
मन चंचल व प्राण भी तरल, मिलना इन का तो नहीं सरल" ।
सुन कर उस का तर्क विशेष, कहा स्वामी "न संशय लेश ।
प्राण व मन का मेल गोसाईं, योग युक्ति बिन संभव नाहीं ।
योगी जन जिमि करें अभ्यास, और पायें वे सिद्धि खास ।
वही युक्ति मुझसे सुन पाओ, तब उसे अभ्यास में लाओ ।
केन्द्र प्राणों का जो भाई, जब उस में तव मन टिक पाई ।
प्राणायाम तभी हो सिद्ध, योगि जनों में बात प्रसिद्ध ।
यह बात मैं खोल बताऊं, सायं वेला जब मिल पाऊं" ।

## दिन अठाइसवां (28) सायं

दो०—सायं वेला जब भयी, आ गया तब साध ।
बैठ गया गुरु चरण में, मन में प्रभु आराध ॥3766

कहा स्वामी "हे साध सुजान, प्राणायाम का सारा ज्ञान ।
वह तो दुर्लभ है मम मीत, सिद्धों को ही हो प्रतीत ।
करे निरन्तर जो अभ्यास, श्रद्धा ला कर मन में खास ।
दीर्घ काल के तब पश्चात, सिद्ध भये वह योगी तात" ।
कहा साध "हे परम ज्ञानी, बात एक मम मन है आनी ।
सिद्ध होय जब योगी राज, उस के कैसे हों सब काज" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, कर्म विलक्षण उस के सारे ।
माया से रह सकता दूर, आकाशी भी उड सकत जरूर ।

दो०—सिद्ध पुरुष वह जानिये, जिस के वश शरीर ।
अनासक्त जग में रहे, नभ में विचरे धीर ॥3767

राम प्रभु को सब जग जाने, सिद्ध पुरुष उनको पहचाने ।
उड़ आकाशी गये गुरु पास, माना परिश्रम न था खास ।
महा प्रभु का जहां इस्थान, वहां आते बहु सिद्ध महान ।
गगन मार्ग से बहु हैं आते, वैसे सभी लौट के जाते ।
महा प्रभु संग नाथ योगेश, जाते मग आकाश हमेश ।
सिद्ध गुफा से निकले नाथ, गगन मार्ग से नहीं को साथ ।
पहुंच गये वे हरि के द्वार, सिद्ध पुरुष की महिम अपार" ।
कर के श्रवण साध कह पाया, "जाने कौन सिद्ध की माया ।
दयानाथ अब तुम कर पाओ, प्राणायाम मुझे सिखलाओ ।

दो०—शिक्षा प्राणायाम की, कर कृपा दे पायें ।
मन प्राण का संगम, होत किमि बतलायें" ॥3768

कहा स्वामी "हे साध सुजान, प्रथम यही तुम बात लो जान ।
मन वा प्राण का हो किमि संग, जो अभिन्न है योग का अंग ।
प्राणायाम जभी कर पाये, चित्त सुषुम्ना में ठहराये ।
सुषुम्ना प्राण का केन्द्र जान, चित्त रुके जब वहां पर आन ।
प्राण व मन का होय संयोग, करे अभ्यासी इस विध योग" ।
पूछी साध नाथ से बात, "है सुषुम्ना कहां पर तात ।
जन जहां पर चित्त ठहराये, प्राणायाम तभी कर पाये" ।
सुन कर साध की यह जिज्ञास, कहा स्वामी ला मुख पै हास ।
"प्रश्न उच्चित है यह तिहारा, मिले ज्ञान प्राण का सारा ।

दो०—सुषुम्ना केन्द्र देह की, नाडी एक विशेष ।
मेरु दण्ड के बीच में, रहती स्थित हमेश ॥ 3769 क
प्राणों का आधार वह, प्राण शक्ति भरपूर ।
उसी में चित्त टिकाये, हठ योगी जन शूर ॥3769 ख

जो जन उस में चित्त टिकाय, प्राणायाम कर योग कमाय ।
चित्त एकाग्र उस का होय, उत्तम स्थिति ध्यान की गोय ।
मन प्राण में होता लीन, प्राण भी मन में होत विलीन ।
यह अवस्था जभी जन पाये, प्राणायामी तभी कहाये ।
अन्तर्मुखी उसी को जानो, मन व प्राण संयमित मानो ।
इस विध करो तुम नित अभ्यास, सिद्धि मिलेगी योग में खास ।

तुम ने पूछी थी जो बात, प्राण की सिद्धि की मम तात ।
हुई क्या तुम को सभी स्पष्ट, भ्रम तेरा क्या भया है नष्ट ।
दो०—अब सायं है हो चली, चलो करें विश्राम ।
जब मिलें कल प्रात हम, करना प्राणायाम" ॥3770 क
इतना कह कर उठ दिये, साधु स्वामी दोय ।
सन्ध्या वन्दन काल था, करने लागे सोय ॥3770 ख

## दिन उनत्तीसवां (29) प्रातः

भयी प्रातः साधु चलि आया, स्वामी जी उस को फरमाया ।
"हे साधो, अब करो अभ्यास, जिमि बतलाया था कल खास" ।
स्वामी जी को कर प्रणाम, लगा वह करने प्राणायाम ।
मेरु दण्ड में चित्त लगाया, पूरक कुंभक को कर पाया ।
रेचक से वह सांस निकाले, यही क्रिया फिर वह कर डाले ।
इस विध कर कुछ काल अभ्यास, बात कही तब नाथ से खास ।
"हे नाथ यह क्या हो पाये, सनसनी मेरु दण्ड समाये ।
च्यूंटीचालन की जो रीत, ऐसी होती वहां प्रतीत ।
वह तो कष्ट न कुछ दे पाये, हल चल मधुर सी मन लुभाये ।
दो०—मेरु दण्ड के बीच में, क्या नाथ हो पाये ।
करूं प्राणायाम जभी, मन वहीं टिक जाये" ॥3771
कहा नाथ "हे साध सुजान, यही तो था मैं दीना ज्ञान ।
प्राण व मन का जो संयोग, देख लिया तुम ने कर योग ।
नित्य करो इस का अभ्यास, पाओगे सिद्धि तब तुम खास ।

चित्त एकाग्र जब हो पाये, सुषुम्ना में तब शक्ति आये ।
करत सुषुम्ना श्वास संचार, इस विध खुले योग द्वार ।
कभी भस्त्रिका खुद चल पाये, मन में दिव आनन्द समाये ।
दीर्घ काल जो करे अभ्यास, कुण्डली जागे बिन प्रयास ।
इसको महा सिद्धि तुम जानो, प्राणायाम का गुण पहचानो ।
दो०—जानो प्राणायाम को, सिद्धि दायी विशेष ।
चित्त एकाग्र कर करो, बैठ इकान्त हमेश" ॥3772
स्वामी जी की सुन कर बात, साधु बोला "हे पूज्य तात ।
मन जब सुषुम्ना में न जाये, नाडी कौन प्राण चलाये ।
यह संशय है मम मन आया, इसे निवारो तुम कर दाया" ।
कहा नाथ "तब संशय भाई, ज्ञान गूढ़ की वार्ता आई ।
चित्त बहिर्मुखी जभी होय, सुषुम्ना नाड़ी रहती सोय ।
नाड़ी दोय अन्य हैं भाई, उनसे चलत श्वास सदाई" ।
पूछा साध "हे योगी राज, कौन नाड़ीं जो करतीं काज ।
उनके नाम हमें बतलायें, नूतन ज्ञान आप से पायें ।
दो०—जिन नाड़िन से चलत है, निशि दिन जन का श्वास ।
कर कृपा मुझे दीजिये, ज्ञान वही अब खास" ॥3773
कहा स्वामी "हे साध सुजान, नाडियां दो प्रसिद्ध महान ।
जीवन की आधार लो जान, प्राण चलें नहीं उन बिन मान ।
ईड़ा पिंगला दो ये नाम, जिन के आश्रित प्राण तमाम ।
ये चलावें श्वास को भाई, श्वास प्रश्वास जो कहाई ।
होंय स्वस्थ अगर ये मीत, श्वास चले तभी उत्तम रीत ।

इन में दुर्बलता यदि आये, कठिन श्वास तभी चल पाये" ।
सुन कर स्वामी का उपदेश, कहा साध "हे पूज्य हृदयेश ।
श्वास लेने में यह कठिनाई, कई जनों में हम है पाई ।
खींच के लेना पड़ता श्वास, अन्तः करण भी रहत उदास ।
तुम रहस्य की बात बताई, जो मुझे अब समझ है आई ।
दो०—यह ज्ञान तो जगत को, नहीं विदित है नाथ ।
ज्ञान आप से पाय कर, अब मैं भया सनाथ ॥3774 क
अब पूछूं मैं आप से, दुर्बलता यदि आय ।
पड़े खींचना श्वास यदि, क्या क्रिया कर पाय" ॥3774 ख
स्वामी जी तब उत्तर दीना, ज्ञान पूर्व जो था तुम चीना ।
नाड़िन की दुर्बलता भाई, नेति दुग्ध तब होत सहाई ।
दुग्ध नेति जब जन कर पायें, ईड़ा आदि सबल हो जायें ।
सामान्य गति श्वास की होय, साधन से जन लाभ विगोय" ।
सुन कर स्वामी का उपदेश, चकित भया वह साध विशेष ।
बोला वह "हे नाथ प्यारे, रोग भयें जो भयदा सारे ।
सुगम रीत से होय उपचार, योग का जग पै बहु उपकार ।
एक बात अब बताओ नाथ, क्रिया सुषुम्ना की इस साथ ।
सुषुम्ना कब कर्म कर पाय, सांस में कब वह करत सहाय ।
दो०—कर्म सुषुम्ना का प्रभो, मुझे बतावें देव ।
कौन कर्म उस हेत है, जीवन में अभिप्रेत" ॥3775
कहा नाथ "हे साध सुजान, प्रश्न साधारण न यह जान ।
सायं को जब तुम चलि आओ, इस का उत्तर हम से पाओ" ।
इमि बतला स्वामी उठ पाये, प्रात कर्म के हेत सिधाये ।

## दिन उनत्तीसवां (29) सायं

सायं भयी तब साधु आया, प्रसंग वही फिर उस चलाया ।
"हे नाथ मुझ को बतलाओ, क्रिया सुषुम्ना की समझाओ" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, सुषुम्ना का है कार्य महान ।
अन्तर्मुखी जब जन हो पाय, सुषुम्ना श्वास को तब चलाय" ।
कहा साध "तब दीना नाथ, ईड़ा काम करे क्या साथ ।
दो०—श्वास सुषुम्ना से चले, उस अवस्था नाथ ।
ईड़ा पिंगला क्या करें, रह सुषुम्ना साथ" ॥3776
श्रवण करी जब यह जिज्ञास, स्वामी जी तब कहा सह हास ।
"हे साध जो प्रश्न तुम्हारा, इस से ज्ञान मिलेगा भारा ।
कर्म सुषुम्ना जब कर पाये, नाड़ीद्वय निष्क्रिय हो जाये ।
यही प्राण का संयम माना, "प्राणायाम" जो है बखाना ।
ईड़ा पिंगला को कर शांत, सुषुम्ना कर्म करे निभ्रांत ।
बदले श्वासों की तब चाल, अन्तर्मुखी हो मन का हाल ।
देह का विशेष न रहे ध्यान, चित्त रहे निज इष्ट स्थान ।
*प्राणायाम यह ऋषि बखाना, मिला योग में है अधिमाना ।
दो०—चाल प्राणों की तभी, बदल जाय मम मित्त ।
सुषुम्ना हो सक्रिय जब, और एकाग्र चित्त" ॥3777

---

* ऋषि—पतंजली ऋषि
देखो योगदर्शन (पातांजल) II. 49
"श्वास प्रशवासयो र्गति विच्छेद: प्राणायाम: ।

स्वामी जी की सुन कर बात, कहा साध "हे पूज्य मम तात ।
प्राण साधना आप बताई, चित्त एकाग्र भी हो जायी ।
इस विषय पर और जो ज्ञान, उस का भी प्रभो करो बखान" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, ज्ञान कहूंगा हित तिहारे ।
कथनी से न लेश हो पाये, क्रिया में जब तक नहीं आये ।
दृढ़ आसन में बैठ दिखाओ, अन्तर्मुखी चित्त कर पाओ ।
हृदय मध्य हो तेरा चित्त, प्राण की क्रिया बदले मित्त" ।
पूछा साध "हे नाथ प्यारे, कर श्रवण ये वचन तिहारे ।
मन मेरे यह आये बात, आज्ञा हो तो पूंछू तात ।
कहां पर हृदय का इस्थान, जहां एकाग्र करूं मैं ध्यान ।

दो०—हृदय कहां है नाथ जी, मानव घट के बीच ।
जहां एकाग्र चित्त हो, चालें प्राण समीच" ।।3778

सुन कर साध की यह जिज्ञास, कहा स्वामी ला मुख पै हास ।
"बहुतों की यह भ्रांति भाई, हिरदय की पहचान न राई ।
ऋषियों ने जो हृदय बखाना, दिल को हृदय नहीं उन माना ।
तन का मध्य हृदय है भाई, सुषुम्ना नाडी जो कहाई ।
*मेरुदण्ड के बीचों बीच, स्थान इस का है बना समीच ।
बैठो जा ला उस में ध्यान, प्राण गति तब बताओ आन" ।

* हठयोग के ग्रंथों में 'हृदय का भाव" सुषुम्ना नाडी से है ।

स्वामी का उस मान आदेश, उठ कर गया एकांत विशेष ।
कुछ काल वहां बैठा जाय, और बताया तब उस आय ।

दो०—आय स्वामी को कहा, "हे योगेश्वर राय ।
मान आदेश आपका, बैठा जूं ही जाय ॥3779 क
दीर्घ गति भयी सांस की, चित्त भया था शांत ।
ऐसा लागा था मुझे, सारी मिटी भ्रांत" ॥3779 ख
अनुभव उस का श्रवण कर, बोले नाथ दयाल ।
"संस्कारी जो जीव हों, उनका यही हवाल ॥3779 ग
चित्त एकाग्र होत है, सुषुम्ना में हि मीत ।
गति श्वास की बदलती, रहते स्थित सप्रीत ॥3779 घ
रहते स्थित सप्रीत वे, मन प्राण में लीन ।
मन प्राण का मेल हो, जान साध प्रवीन ॥3779 ङ
आसन प्राणायाम का, योग जान यह मीत ।
आसन में इमि बैठ कर, चित्त सके जन जीत ॥3779च
नित्य करे अभ्यास जो, सिद्धि लागे हाथ ।
करत करत अभ्यास से, बढ़े योग के पाथ" ॥3779 छ
इकाग्र मन से साध ने, सुनी नाथ की बात ।
"आगे का पथ हे प्रभो, कहो दया कर तात" ॥3779ज

बैठा हो जब शांत ।
दो०—इस विध कह कर साध वह, "सुन आगे की बात ॥3779झ
कहा नाथ ने साध से,

हे साध तुझ को कथ पाऊं, योग शास्त्र की बात बताऊं ।
*आसन जभी सिद्ध हो जाये, प्राणायाम स्वयं हो पाये ।
चाले सुषुम्ना से ही श्वास, सरल रीत यह योग की खास ।
आसन का करो तुम अभ्यास, श्वास चले तब बिन प्रयास ।
यह ही सुख का सांस कहावे, चित्त इसी में तब रुक पावे ।
चित्त की बहिर्मुखी जो वृत्ति, त्याग करे इमि निज प्रवृत्ति ।
अन्तर्मुखी हो मन स्वभाव, साध ! समझा क्या मेरा भाव ।
बहिर्मुखी जो मन रह पाये, अन्तर्मुखी वही हो जाये ।

दो०—समझ लिया क्या साध तुम, मेरा सारा भाव ।
योग युक्त जब जन भये, जाय बदल स्वभाव" ॥3780

सुन साध यह नाथ की बाणी, किया कथन "धन्य महादानी ।
योग युक्ति जो आप बताई, समझ सहज में ही है आई ।
उस अवस्था का क्या अभिधान, अन्तर्मुखी जब भये पुमान" ।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, वेला भया है बहुत विहान ।
कल प्रातः जब आओ मीत, समझनी बात लाय कर चीत" ।
कह इतना स्वामी उठ पाये, सायं कर्म हेत सीधाये ।

---

* देखो योग दर्शन (पातंजल) II. 49
तस्मिन् सति श्वास प्रश्वासयोर्गति विच्छेदः प्राणायामः ।
अर्थात—आसन के स्थिर होने पर श्वास प्रश्वास की गति का विच्छेद प्राणायाम है ।

## दिन तीसवां (30) प्रातः

भयी प्रातः फिर साध आया, आय नाथ को शीश झुकाया ।
कहा स्वामी तब साधु ताहिं, "अन्तर्मुखी जब मन हो जाहिं ।
वह अनूपम अवस्था भाई, विसर सुधि तन की तब जाई ।
दो०—विसरे देह की सुध तब, अन्तर्मुखी हो मन ।
इसी अवस्था को साध जी, चाहते योगी जन ॥3781
इस अवस्था को जो ग्राहवे, प्रत्याहारी वही कहावे ।
प्रत्याहार बिना नहीं योग, लेवें समझ यह मुमुक्षु लोग" ।
साधु ने निज जिज्ञास जताई, "हे स्वामी मम मन यह आई ।
कितना काल कर के अभ्यास, जन बने प्रत्याहारी खास ।
और बतलावें यह भी भेव, कितना नित्य करे हे देव" ।
सुन जिज्ञास तब उस की नाथ, कहा "बतलाऊं' सब इक साथ ।
प्रथम पूछी जो तुमने बात, कितना समय लगेगा तात ।
मैं बताऊं रहस्य यह खोल, भ्रांति सकल मिट जाये अडोल ।
दो०—मन तेरे की भ्रांति जो, मिटे सकल इक साथ ।
हो जिज्ञासा पूर्ण तब, लगे ज्ञान भी हाथ ॥3782
प्रथम कारण इसमें लो जान, गुरु की कृपा को पहचान ।
सद्गुरु कृपा जिस जन पै होय, शीघ्र प्राप्त करेगा सोय ।
श्रद्धा दूसर कारण भाई, इकाग्र मन उस से हो जाई ।
वैराग्य तीजा कारण जान, माया लिप्त न हो इन्सान ।
पूर्व के संस्कार भी जान, उनका महत्व कथा महान ।
योग साधन जो कीना पूर्व, फल मिलेगा अवश्य अपूर्व ।

*योग भ्रष्ट जीव जो भाई, अवश्य आकर करे कमाई ।
संगति भी है कारण एक, त्यागे जन कुसंग प्रत्येक ।
दो०—कारण सारे होंय जब, योग करे इन्सान ।
प्रत्याहारी तब भये, यह है मेरा ज्ञान ॥3783
काल की गणना तो न भाई, कारण की ही है प्रभुताई ।
प्रश्न अन्य जो कीन उस काल, नित अभ्यास हो कितना काल ।
उसमें यह तुम समझो बात, अपनी सुविधा मुख्य ही तात ।
गृहस्थी को जब वेला होय, उसी काल कर सकत है सोय ।
तुम साधु मैं तुझे बतलाऊं, कब करो मैं यही कथ पाऊं ।
साधु करे अभ्यास निरन्तर, दिन में चार बार बिन अन्तर ।
प्रात करे दो घड़ी अभ्यास, सायं भी दो घड़ी अभ्यास ।
दो घटिका मध्याह्न लगावे, मध्यरात भी तिमि कर पावे ।
दो०—आठ घडी इस रीत से, करे निरन्तर साध ।
प्रत्याहारी तब बने, मिले सिद्धि निर्बाध" ॥3784
कहा साध "हे सद्गुरु प्यारे, किमि वर्णू उपकार तिहारे ।
मुझ को योग मार्ग दिखाया, साध जीवन का मग बताया ।
मुझ पर किरपा करनी नाथ, चल शिक्षा पर बनूं सनाथ ।
प्रत्याहार के आगे नाथ, क्या होत है योग का पाथ ।
कर किरपा वह भी बतलायें, मम जिज्ञासा शांत करायें" ।
सुन स्वामी जी उस की बात, कहन लगे "हे मम प्रिय तात ।
जभी सिद्ध न हो प्रत्याहार, आगे योग करना दुश्वार ।

* योग भ्रष्ट—योग साधना करते-करते जिस का शरीरान्त हो जाता है, वह योग भ्रष्ट कहलाता है ।

करते रहो इस का अभ्यास, काल उच्चित दें शिक्षा खास ।
प्राणायाम जो मैं बताया, प्रत्याहार हेतु समझाया ।
प्राणायाम अन्य भी भाई, जिन की क्रिया ऋषियन बताई ।
दो०—प्राणों का विज्ञान जो, उस का बहु विस्तार ।
शास्त्रों में जो है लिखा, उस पर करें विचार" ॥ 3785
श्रवण करी जब नाथ की बात, साध बोला "हे भक्तत्रात ।
कर कृपा मुझे दीजो ज्ञान, जिस का कीना आप बखान" ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, वेला है अब बहुत विहान ।
सायं वेला जब चलि आओ, आगे बात तभी सुन पाओ ।
कथ इतना स्वामी उठ पाये, निज कक्ष में तभी सीधाये ।

## दिन तीसवां (30) सायं

सायं का जब वेला आया, सद्गुरु चरणि साध भी आया ।
और बैठ उस बचन उचारा, "नाथ आप की दया अपारा ।
गूढ़ भेद जो आप बताये, कभी न पहले थे सुन पाये ।
दो०—ज्ञान गूढ़ जो योग का, दीना दीनानाथ ।
सद्गुरु के उपदेश से, भया हूं मैं कृतार्थ ॥ 3786 क
प्राणों का विज्ञान सब, उस का हो विस्तार ।
शरण पड़े अल्पज्ञ का, करो नाथ उद्धार" ॥ 3786 ख
कहा नाथ "हे साध सुजान, प्राणायाम का दूं मैं ज्ञान ।
रेचक पूरक कुंभक जान, प्राणायाम के भेद पहचान ।

*कुंभक के भी भेद दो साध, कथे दोनों के लाभ अगाध ।
सहित कुंभक एक कथ पाया, केवल कुंभक दूज कहाया ।
जब प्राण को खींच दिखायें, उस को पूरक हम कथ पायें ।
बाहिर छोडे जब जन श्वास, रेचक क्रिया वह हों खास ।
भेद तीसरा कुंभक भाई, उसको भी सुन लो मन लाई ।
रोके निज जब सांस इन्सान, कुंभक उस का होत अभिधान ।

दो०—रेचक पूरक सहित जब, श्वास रोक दिखायें ।
'सहित' कुंभक होत वह, शास्त्र इमि लिख पायें ॥3787 क
* 'केवल' कुंभक जान लो, रेचक पूरक रहित ।
वर्णन उस का फिर करें, सुनिये प्रथम 'सहित' ॥3787 ख

सहित कुंभक के सुन लो भेद, प्रथम कथा है "सूरजभेद" ।
दूजा "उज्जायी" हि लो जान, तीजा "सीत्कारी" पहचान ।
चौथा "शीतली" आया मीत, पंचम "भस्त्रिका" कर प्रतीत ।
"भ्रामरी" छटा है मम भाई, "मूर्छा" सतवां भेद कहाई ।

---

* हठयोग प्रदीपिका—II. 7.

प्राणायामास्त्रिधा प्रोक्तो रेचकपूरककुंभकैः ।
सहित केवलश्चेति कुम्भको द्विविदो मतः ॥

अर्थ—प्राणायाम तीन प्रकार का होता है—रेचक, पूरक, कंभक ।
कुंभक प्राणायाम के दो भेद हैं—सहित और केवल ।

योग कुण्डल्युपनिषद में भी—I. 19.20

* प्रथम 'सहित' कुंभक का वर्णन करते हैं, 'केवल' कंभक का वर्णन तत्पश्चात होगा ।

*अष्टम "प्लाविनी" प्राणायाम, आठों भेदों के ये नाम ।
आठों कुंभक मैं कथ पाये, शास्त्रों में जो नाम हैं आये ।
इन नामों को कर के याद, सीखने मुझसे उसके बाद ।
योगिजन का यह आविष्कार, करे जगत का बहु उपकार ।
दो०– शिक्षा प्राणायाम की, जगत वन्द्य है मीत ।
श्रद्धापूर्वक जो करे, फल हो आशातीत ॥" 3788
स्वामी जी का सुन उपदेश, बोला साध "हे गुरु महेश ।
किस मुख से मैं गुण तव गाऊं, ज्ञान गूढ़ तुम से सुन पाऊं ।
शरण योग की मैं चल आया, सहाभ्यास ज्ञान को पाया ।
अन्यत्र मिले न यह सुयोग, कथनी कर सभी भ्रमते लोग ।
आपकी आज्ञा को सिरधार, करूं साधन मैं सब प्रकार ।
आठों कुंभक जो बतलाये, स्मरण नाम उन के हो पाये ।
मैं सुनाऊं सभी के नाम, 'सहित' कुंभक के हे सुखधाम ।
'सूर्य भेद', 'उज्जायी' नाथ, 'सीत्कारी' भी उस के साथ ।
'भस्त्रिका' 'शीतली' भगवान, 'भ्रामरी' 'मूर्छा' लीने जान ।
'प्लाविनी' अगला प्राणायाम, सीखूं सभी आप के धाम ।
दो०– शिक्षा प्राणायाम की, मिले आप से नाथ ।
इस विद्या का दान दे, करिये मुझे सनाथ" ॥3789

---

* सहित कुंभक के आठ भेद–

1. सूरज भेद
2. उज्जायी
3. सीत्कारी
4. शीतली
5. भस्त्रिका
6. भ्रामरी
7. मूर्छा
8. प्लाविनी

कहा नाथ "हे साध प्यारे, भाग्यवान हो तुम बहु भारे ।
जिस के चित्त में है जिज्ञास, प्राणायाम के प्रति जो खास ।
प्राण जानो जीवन आधार, प्राण विद्या ज्ञान का सार ।
जिस ने प्राण विद्या न जानी, मैं जानूं वह जन अज्ञानी ।
वेद वेदांग भी कथ पायें, प्राण शक्ति के गुण बहु गायें ।
प्राण निकलें, जान चलि जाये, प्राण लौटें जान चलि आये ।
कथन यही वेदों में आया, योग शास्त्र भी यह कथ पाया ।
होंय सशक्त जिमि जन के प्राण, कथन करें अब वही विज्ञान ।

दो०—प्रातः आ कर सीखना, प्राणों का विज्ञान ।
प्राण विद्या जिसे कहें, होंय सशक्त प्राण" ।। 3790 क
इतना कह कर उठ दिये, स्वामी दीन दयाल ।
साधु भी तभी चल दिया, डूबा अपने ख्याल ।।3790 ख

## दिन इकतीसवां (31) प्रातः

प्रातः भयी तब साधु आया, आ चरणों में शीश झुकाया ।
और कहा उस नत हो माथ, "मन में प्रश्न मेरे इक नाथ ।
प्राण विद्या का कौन बखान, होते प्राण क्या भगवान ।
'प्राण वायु' जिस को कह पायें, उसे ही क्या 'प्राण' कह पायें ।
सकल देह में बसते प्राण, ऐसा सुनते आय भगवान ।
प्राण निकल जो तन से जाये, वह क्या है, जो इमि कहाये ।
देह में भी हैं पांच प्राण, समझ सकूं न मैं सब ज्ञान ।
कैसी पहेली यह भगवान, मिले आप से ही यह ज्ञान ।

दो०—प्राण प्राण जिसे कहें, उस का असली रूप ।
वह समझूं मैं आप से, हे योगिन के भूप" ।।3791
सुन कर उस की यह जिज्ञास, कहा नाथ ला मुख पै हास ।
"प्रश्न तुम्हारा सुन्दर साध, ज्ञान प्राण का जान अगाध ।
जानो प्राण इक शक्ति भाई, सकल विश्व के बीच समाई ।
गति विश्व को वही दे पाये, ग्रह नक्षत्र वही चलाये ।
वह सर्वव्यापक शक्ति साध, उसे नहीं कहीं कोई बाध ।
सूर्य मण्डल में वह समाई, घट घट में भी वह है आई ।
उस का है न कोई स्वरूप, शक्ति ही जानो उस का रूप ।
योगियों ने वह शक्ति देखी, अपने तन में वही उलेखी ।
उसी शक्ति का लेय सहारा, जरा मरन से देह उबारा ।
दो०—शंकर सम जो हो गये, परम सिद्ध योगेश ।
उन के वश में थी भयी, शक्ति प्राण विशेष" ।।3792
कहा साध ने "हे महाराज, बात रहस्य की पूछूं आज ।
विश्व व्यापी शक्ति प्राण, घट में वह किस रहती स्थान" ।
कहा स्वामी "हे साधु सुजान, प्रश्न इसी में छिपा है ज्ञान ।
प्राण नाडिन को लो तुम जान, उन में वास करत है प्राण" ।
कहा साध ने "हे महाराज, यह भी जानूं आप से आज ।
प्राणनाडियों का कहां स्थान, देह में मानें हम भगवान" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, नाडिन विस्तृत तन में सारे ।
कोई न कन ऐसा तन मांहि, जिस में प्राण की नाडी नाहिं ।

दो०—उन नाडिन का जाल इक, विस्तृत है तन मांहि ।

प्राण उन्हीं में विचरत, विद्युत की ही नाहिं" ॥3793

पूछा साध तभी "हे नाथ, बात बतायें इसी के साथ।
प्राण की नाडिन तन में जोय, उन की संख्या कितनी होय"।
कहा स्वामी ला मुख पै हास, संख्या असंख्य की न हो खास।
फिर भी योगियों का अनुमान, वहत्तर कोटी लें हम जान।
सभी में प्राणों का संचार, होता प्रतिक्षण सब प्रकार"।
पूछी साध तब रहस्य की बात, "मुझे बताओ हे जग त्रात।
प्राण शक्ति जो कही व्यापक, प्रविष्टे घट किमि जग पालक।
सुन कर उस की यह जिज्ञास, कहा नाथ "है रहस्य यह खास।
दशम द्वार है घट में जान, प्राण आये उस मग से मान।
विश्व प्राण औं घट के प्राण, दशम द्वार में संगम जान।

दो०—आवे इस ही द्वार से, व्यापक शक्ति प्राण ।

चेतन होवें नाडियां, तन में व्यापे जान" ॥3794

कहा साध "हे स्वामी मेरे, ज्ञान स्रोत वचन हैं तेरे।
प्रतिशब्द से नूतन ज्ञान, मिल पाये मुझ को भगवान।
दशम द्वार किधर है देव, उस का भी मैं जानूं भेव।
दशम द्वार उस का क्यों नाम, क्या विशेष है उस का काम"।
सुनी बात जब उस की खास, स्वभाविक ही थी जो जिज्ञास।
कहा स्वामी "हे साध प्यारे, मैं जानूं शुभ भाव तिहारे।
दशम द्वार की तव जिज्ञास, दशम द्वार चोटी के पास।

ईश्वर रचा यह घट हमारा, दश द्वारों का घर न्यारा ।
दश द्वार जो घट के मांहि, भिन्न सभी का कारज साईं ।
दो०—अपने अपने कार्य में, व्यस्त सभी लो जान ।
नव द्वारे खुले रहें, बन्द दशम ही मान" ॥3795
सुन कर स्वामी जी की बात, बोला साध "पूज्य हे तात ।
नव द्वारों का दीजो ज्ञान, द्वार दशम क्यों बन्द भगवान" ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, उच्चित ये हैं प्रश्न तिहारे ।
इन का उत्तर मुझ से पाओ, सायं काल जभी चलि आओ" ।
स्वामी ऐसा कथ उठ पाये, प्रात कार्य के लिए सिधाये ।

## दिन इकतीसवां (31) सायं

सायं काल साध चलि आया, प्रश्न वही फिर वह कर पाया ।
"नव द्वार जो कथे भगवान, उन का मुझ को दीजो ज्ञान" ।
कहा नाथ "ये द्वार लो जान, सन्मुख सब के हैं दो कान ।
दो आंखें और नासिका दो, छः द्वारे तुम जान यही लो ।
सातवां द्वार मुख है भाई, कर्म करे जो बहु सुखदाई ।
दो०—दो द्वारे जो और हैं, जानें सब ही लोग ।
मलमूत्र विसर्जन करें, राखें देह निरोग ॥3796
हे साधो ये नव जो द्वार, कर्म करें ये बहु प्रकार ।
जग जीवन के ये आधार, इन बिन जीवन हो निस्सार ।
शुद्ध यदि ये द्वार रह पायें, रोग मुक्त तब तन रह पायें ।
योग साधन से इन को शुद्ध, सदा रखे जन योग प्रबुद्ध ।
षट् कर्म जो तुझे बतलाये, उन से जन शुद्धी कर पाये" ।

स्वामी जी का सुन उपदेश, साध कथा "हे मम हृदयेश।
नव द्वारों का पाया ज्ञान, दशम द्वार का करो बखान।
चोटी मध्य तुम कीन बखान, वहां पर इस का नहीं निशान।
नाथ से पूछूं मैं यह बात, द्वार दशम कब खुलता तात।
क्या वह सदा बन्द रह पाये, और न कभी भी खुल दिखाये।
दो० — द्वार दशम का ज्ञान यह, दीजो नाथ दयाल ।
यह जिज्ञासा मन बसत, मेरा यही सवाल" ॥3797
स्वामी सुनी जब यह जिज्ञास, कहा साध से ला मुख हास ।
"हे साध यह प्रश्न तिहारा, ज्ञान छिपा है इस में सारा ।
इस द्वार के खोलने हेत, योगी रहत सदैव सचेत ।
अन्तर्मुखी जब होवे चित्त, डोले नहीं वा किसी निमित्त ।
प्राण शक्ति को लेकर साथ, उर्ध्व गहे जब वह यही पाथ ।
पहुंच जाये जब सहस्त्रार, खुलता तभी यह दशम द्वार ।
सुगम साधना नहीं यह मीत, योगी विरले की यह रीत ।
गुरु की कृपा और अभ्यास, से ही चढ़ें इस मग में श्वास ।
दो० — द्वार दशम का खोलना, कठिन कठिन है काम ।
विरला सिद्धी को गहे, दया करें जब राम" ॥3798
कीना श्रवण स्पष्ट उपदेश, विनय साध ने की "हृदयेश ।
तव चरणों में रह कर नाथ, साधन करूं सिद्धि तव हाथ ।
राम वा तुम में भेद न कोई, गुरु कृपा बिन नहीं कुछ होई ।
हे नाथ ! तव किरपा चाहूं, योग में सिद्धि तब ही पाऊं ।
प्राणायाम का हो अभ्यास, जो बतलाया तुम है खास ।

उस का विस्तृत दीजो ज्ञान, विनय मेरी यही भगवान ।
प्राणायाम के भेद बताये, आठों कुंभक जो कथ पाये ।
उन का करूंगा मैं अभ्यास, तव चरणों में रख विश्वास ।
सूरज भेद जो प्रथम बताया, उसे करावो कर के दाया" ।
सुन कर उस की स्वामी बात, कहन लगे "सुन लो मम तात ।
सूर्यभेद का भेद बताऊं, फिर उस का अभ्यास कराऊं ।

दो०—सूर्यभेद जो जन करे, कफ दोष हो दूर ।
श्लेषम की भी छंटनी, तन की होत ज़रूर ।।3799 क
पद्मासन में बैठकर, सीधा रख कर देह ।
बाएं स्वर को रोक कर, सांस दांय से लेह ।। 3799 ख

नाभि भीतर ध्यान लगाय, भीतर श्वास रोक वह पाय ।
यथा शक्ति कर कुंभक मीत, छोड़े बायें से सप्रीत ।
कई बार इस विध कर पाये, पूर्ण लाभ तब जन पा जाये ।
प्रातः सायं कर अभ्यास, योगी पाता लाभ को खास ।
करना इस का तुम अभ्यास, बिन अभ्यास न ज्ञान हो खास ।"
सुन कर साध नाथ की बात, नतमस्तक हो वह साक्षात ।
कहन लगा "हे नाथ महान, सूर्य भेद का दीना ज्ञान ।
कर किरपा मुझे यह बतलाय, सांस दायें से क्यों ले पांय ।

दो०—पूरक दायें से करे, खास लाभ क्या होय ।
इस रहस्य को आप से, जन सके पा कोय ।" 3800

नाथ कहा 'हे साध प्यारे, कर अभ्यास जा निज द्वारे ।
प्रातः काल जभी चलि आओ, यह प्रश्न तब ही कर पाओ ।"

इतना कह स्वामी उठ पाय, अपने कक्ष में तभी सिधाय ।

## दिन बतीसवां (32) प्रातः

प्रातभयी जब हुआ उजाला, उठा साध आश्रम को चला ।
मन में उसके यही विचार, सद्गुरु ने मम कीन उद्धार ।
बन साधु मैं कुछ नहीं पाया, योगी सद्गुरु योग सिखाया ।
बिना योग क्या साधु होय, व्यर्थ ही जीवन वह निज खोय ।
इसी सोच में आश्रम आया, आय नाथ को शीश झुकाया ।
स्वामी बोले "साध प्यारे, स्मरण मुझे हैं प्रश्न तिहारे ।

दो०—पूरक दायें से करें, खास लाभ क्या होय ।
इस रहस्य को साध जी, जान सके ही कोय । 3801

सृष्टि ईश्वर की बहु न्यारी, अणु अणु में रहस्य है भारी ।
अनादि काल से चलती आये, सरल रीत से सब चल पाये ।
समता इसका है आधार, विषमता रहे न किसी प्रकार ।
मुख्य नियम सहयोग लोमान, प्रतिकण पूरक अन्य का जान ।
नासिका दो रचे भगवान, स्वभाव भिन्न दोनों का मान ।
दांय से जब सांस चल पाये, देह में ऊष्णता उपजाये ।
शीतल बायां सांस बनाया, कुदरत की कैसी है माया ।
'सूर्यभेद' में दांय चलायें, देह में ऊष्णता उपजायें ।

दो०—ऊष्णता जभी देह में, बढ़ती मेरे मीत ।
वातदोष तब देह का, शांत भये इस रीत । 3802

और भी गुण इस का लो जान, रक्त शोधन इससे लो मान ।
मलीन रक्त रोग उपजाये, सूर्यभेद से मल धुल पाये ।"

कहा साध "हे मेरे नाथ, यह समझाओ इस के साथ ।
यदि वात दोष न जन को होय, कौन साधन करे जन सोय ।"
सुन कर उसकी यह जिज्ञास, कहा नाथ, "सुन सह विश्वास ।
सामान्य गुण जब जन तन होय, करे 'उज्जायी' ही जन सोय ।
यह साधन भी बहु गुणकारी, लाभ मिले इससे बहु भारी ।
सीना इससे पुष्ट हो जाय, दुर्बल हृदय सबल हो पाय ।
दो०—अब उज्जायी को कथूं, ला सुनो तुम ध्यान ।
इस साधन को नित करो, होगा लाभ महान ॥ 3803
नासद्वय से खींचो श्वास, रोको भीतर सह विश्वास ।
मुख भीतर भी उसको लाओ, यथा शक्ति कुंभक कर पाओ ।
धीरे-धीरे बाहिर निकाल, पूरक करो फिर उस ही काल ।
करो उज्जायी अब तुम मीत, जैसी समझ पायी है रीत ।"
स्वामी जी का आदेश, साधु लायी न देरी लेश ।
पद्मासन में बैठ तत्काल, सांस खींच के लीन संभाल ।
जब तक रोक सका वह साध, रेचक कीना फिर निर्बाध ।
यही क्रिया उस पुनः दुहरायी, स्वामी सन्मुख सब कर पायी ।
कई बार उस लीन श्वास, कुंभक रेचक सह विश्वास ।
दो०—सर झुकाय फिर नाथ को, प्रश्न साध ने कीन ।
हे नाथ बतलाइये, शुद्ध क्या मैं कीन ।" 3804
कहा नाथ "तुम सीख हो पाय, पूछो और जो मन अब आय ।
अगली क्रिया तब करूं बखान, अधिक मिले जो प्राण का ज्ञान ।"
कहा साध "हे सद्गुरु देव, बहु मिला मुझे प्राण का भेव ।

मुझे बतावें अब मम नाथ, कुंभक करें क्या बिन ही हाथ ।
अथवा हाथ से रोके "श्वास, रोकते किमि हैं योगी श्वास ।
तुमरी आज्ञा को जिमि पाऊं, विधि उसी को सदा अपनाऊं ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, इनमें भिन्नता नहीं महान ।
किसी रीत से करो अभ्यास, किसी रीत से रोको श्वास ।
बिन हाथ तुम करो उज्जायी, योगिन रीत यही अपनाई ।

दो०—नासद्वय से खींच कर, रुके श्वास बिन हाथ ।
नास द्वय से त्याग दो, बिना लगाये हाथ ।।" 3805

कहा ~~साथ~~ साध "हे स्वामी प्यारे, समझ लिये मैं भाव तिहारे ।
अगला प्राणायाम बतावें, सह अभ्यास मुझे समझावें ।
एक बात मैं जानन चाहूं, यदि शरीर में गर्मी पाऊं ।
उस दशा में कौन अभ्यास, करके पावें सुख का श्वास ।"
बात सुनी उसकी जब सारी, कहा नाथ "यह बात तिहारी ।
इस का उत्तर दूं मैं साध, सुनना सायं आ निर्वाध ।
स्वामी कथ इतना उठ पाये, कक्ष अपने में वे सिधाये ।

## दिन बतीसवां (32) सायं

सायं काल फिर साधु आया, और नाथ को माथ झुकाया ।

दो०— नाथ कहा तब साध से, बिठलाय कर पास ।
"साध तिहारे प्रश्न का, दूं उत्तर अब खास ।। 3806 क
तुम पूछी थी बात यह, गर्मी तन में होय ।
कैसे प्राणायाम से, शांत सकत हो सोय ।। 3806 ख

हे साधो ! ऋषियन का बोध, नस नस का कीना उन शोध ।
चमत्कारी साधन बनाये, तन स्वस्थ जिन से रह पाये ।
तन ही तन को करे निरोग, रह पाये नहीं तन में रोग ।
इससे बढ़ कर क्या हो ज्ञान, स्वास्थ्य लाभ का साध सुजान ।
स्वतन्त्र जीवन की यह रीत, प्रकृति पर प्रकृति की जीत ।
अद्भुत ऐसा योग का ज्ञान, जग को मिला था उसका दान ।
जगत ने उसको दीन विसार, राम प्रभु अब करें उद्धार ।
करके अनन्त कला स्वीकार, जग में उतरे जो तन धार ।

दो०—अनन्त कला अवतारी, राम प्रभु भगवान ।
ऋषि मुनियों के ज्ञान का, जग को देवें दान ॥ 3807 क
बढ़े ताप जब देह में, सीत्कारी कर पाय ।
ताप घटे तब देह का, अद्भुत योग उपाय ॥ 3807 ख

इसकी विधि मैं अब बतलाऊं, सरल रीत से सब समझाऊं ।
जिमि बतलाऊं तिमि कर पाना, अपना अनुभव मुझे बताना ।
दांतों पीछे जीभ टिकाओ, होठों को चपाट रख पाओ ।
मुख से खींचो प्राण समीर, जैसे पी रहे अमृत नीर ।
सीत्कार का शब्द हो पाये, मुंह से वायु भीतर जाये ।
पूरक इस विध ही कर पाओ, कुंभक फिर तुम कर दिखलाओ ।
यथा शक्ति ही रोक के सांस, नासिका से फिर छोड़ो सांस ।
जितनी इच्छा हो कर पाओ, कुंभक का भी काल बढ़ाओ ।
अपनी शक्ति का रख ध्यान, सदैव योग करे इन्सान ।

दो०—यथा शक्ति अब तुम करो, सीत्कारी हे मीत ।
इसके लाभ महान हैं, करो तो हों प्रतीत ॥ 3808

साधु ने आदेश को पाया, आसन सन्मुख वहीं लगाया ।
सारी क्रिया कर दिखलायी, स्वामी जी के मन वह भायी ।
साधु ने तब टेक निज माथ, प्रश्न किया "हे दीना नाथ ।
वचन आप के सत्य भगवान, करूँ प्रश्न पाने को ज्ञान ।
सीत्कारी में क्या गुण खास, ताप मिटे लें इस विध श्वास ।
यहां खास जो हो कुछ ज्ञान, समझूं आपसे मैं भगवान ।"
सुनकर उसकी यह जिज्ञास, कहा नाथ ला मुख पै हास ।
"हे साध जो प्रश्न तुम कीन, पूर्व कभी न किसी यह कीन ।

दो०—हे साध इस प्रश्न से, मम मन में यह आय ।
थे वे अद्भुत ज्ञानी, साधन जिन रच पाय ॥ 3809 क
उनके इस विज्ञान को, समझे सब संसार ।
इस हेत मैं कथन करूं, सीत्कार का सार ॥ 3809 ख

गर्मी पैदा पेट से होय, सूर्य का केन्द्र देह में सोय ।
नाभि चक्र है सूर्य का स्थान, जठराग्नि का स्रोत लो मान ।
उसको शांत रखने के हेत, अवस्था सम हो जब अभिप्रेत ।
मुख से वायु खींच के भाई, शांति मिलती ताप से राई ।
'सी' 'सी' करती मुख से जाये, शीतलता उसमें अधिकाये ।
उदर में कर के वह प्रवेश, करती शांत ताप को लेश ।
हे साध लो श्वान को देख, करता ऐसे उसे भी पेख ।
गर्मी अधिक जब उसे सताय, जिह्वा निकाल सांस ले पाय ।

दो०—कुत्ते का अभ्यास यह, ईश्वर का है दान ।
मानव इससे सीख ले, साधे अपने प्राण ॥ 3810

हे साधो जो तुम सुन पाया, क्या उत्तर तुम को मिल पाया ।
अब बतलाओ अपनी बात, और सुनना क्या चाहो तात ।"
कहा साध "हे दीन दयाल, सुलझ गया है मेरा सवाल ।
आगे का मुझे दीजो ज्ञान, मैं शिष्य अधम तुम गुरु महान ।"
कहा नाथ "अब तुम चलि जाओ, प्रातः काल लौट के आओ ।
तभी कथेंगे अगला ज्ञान, प्राण विद्या विशाल महान ।"

## दिन तैंतीसवां (33) प्रातः

प्रातः भयी साध चलि आया, आकर अपना शीश झुकाया ।
कही स्वामी तब उससे बात, "जो सीखा क्या स्मरण है तात ।
दो०—स्मरण रहे जिस शिष्य को, पाछल अपना ज्ञान ।
अधिकारी वह साधक, सिद्धि पाये महान ॥ 3811

क्या करते हो तुम अभ्यास, नित्य प्राणायाम का खास ।
भेद प्राणायाम के तात, कथन करो उनको इस प्रात ।"
सुनकर सद्गुरु का आदेश, साध का मस्तक ठनका लेश ।
गुरु परीक्षा ले रहे भाई, महान गुरु की यह प्रभु ताई ।
साध को स्मरण सभी था ज्ञान, महान गुरु का शिष्य सुजान ।
कुंभक के उस भेद बताये, सूर्य भेद उज्जायी सुनाये ।
सूर्य भेद करके दिखलाया, स्वामी जी संतोष जताया ।
कीन उज्जायी भी उस काल, ऐसे शिष्य पै गुरु दयाल ।

दो०—सीत्कारी भी कथ दिया, कथा शीतली नाम ।
भस्त्रिका औं भ्राभरी, मूर्छा प्राणायाम ॥3812क
अष्टम नाम प्लाविनी, वह भी कीन बखान ।
कथन किये जब नाम सब, स्पर्शे गुरु पग आन ।3812ख

कहा नाथ "हे साध प्यारे, कथ दिये तुम नाम हैं सारे ।
प्राणायाम कौन अब भाई, सीखन की तब मन में आई ।"
कहा साध "हे दीनानाथ, जो चाहो कथ करो सनाथ ।
उस कर्म में तो हे भगवान, शीतली का था कीन बखान ।"
कहा नाथ "तो लेवो जान, शीतली का मैं करूं बखान ।
उसको फिर तुम कर दिखलाना, शुद्ध रीति से तुम कर पाना ।
उसकी विधि तुम जानो भाई, बैठिये आसन दृढ़ लगाई ।
मुख से जिह्वा बहिर निकालो, चोंच समान उसे कर डालो ।

दो०—धीरे-धीरे सांस फिर, मुख से लेवो साध ।
उदर मध्य उसको भरो, कुंभक लो आराध ॥ 3813

रेचक नासिका से कर लेना, बार-बार इमि तुम कर लेना ।
जैसा नाम वैसा गुण जान, शांत करत यह ताप को मान ।"
नाथ की बात जब सुन पाई, भ्रांति तभी साध चित्त आई ।
और उस पूछ लिया "हे नाथ, भ्रांति दूर कर करो सनाथ ।
सीत्कारी इक प्राणयाम, दूसर शीतली प्राणायाम ।
मुंह से ही वायु ले पावें, तब पेट में उसे ठहरावें ।
नासिका से फिर उसे निकाल, इसे करें कहा दीन दयाल ।

दोनों का गुण एक बताया, शीतलता जो मैं सुन पाया ।
इनमें अन्तर तब क्या नाथ, भ्रांत भया है मेरा माथ ।
दो०—सीत्कारी वा शीतली, इनमें क्या विशेष ।
सिरफ नाम की भिन्नता, दीखत भेद न लेश" ॥ 3814
साध ने पूछा गूढ़ सवाल, प्रसन्न भये सुन दीन दयाल ।
कहन लगे हे साध प्यारे, परिप्रश्न जो पूछो सारे ।
इनसे मिलता है बहु ज्ञान, गुरु के अन्तर जिसका स्थान ।
परिप्रश्न है डोरी समान, गुरु का अन्तर कूप लो जान ।
निकले डोरी से जल भाई, परिप्रश्न से ज्ञान कमाई ।
जो प्रश्न तुमने अभी कीना, ऐसा हमने कहीं न चीना ।
इसका उत्तर दूं अब भाई, जग सकल को विदित हो जाई ।
सब जन सीखें साधन योग, रहें न वञ्चित को भी लोग ।
दो०—सीत्कारी वे कर सकें, जिनके हों सब दांत ।
इस क्रिया को किमि करें, होंय न जिन के दांत ॥ 3815
जन शीतली सभी कर पायें, दन्त हीन भी जो हो जायें ।
वञ्चित रहें क्यों दन्त विहीन, तभी रचना यह भयी नवीन ।
हे साधो जो तुम सुन पाया, उत्तर क्या तुझे मिल पाया ।"
उसने नाथ को टेका माथ, और कहा "मैं भया सनाथ ।
आगे का अब दीजो ज्ञान, शरणी तव यह जन अनजान ।"
कहा नाथ "अब सायं आना, आकर शीतली कर दिखाना ।
फिर हम देंगे अगला ज्ञान, अनजान नहीं, तुम हो सुजान ।"
स्वामी इतना कह उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन तैंतीसवां (33) सायं

दो०—शाम भयी तब आ गया, ले जिज्ञासा साध ।
आसन पर थे नाथ भी, अपने ध्यान अगाध ॥ 3816

प्रणाम कर तब साध आसीन, भया वह भी ध्यान में लीन ।
दोनों ने जब ध्यान त्यागा, प्रश्न साध कुछ करने लागा ।
स्वामी कहा "प्रथम कर पाओ, कर शीतली हमें दिखलाओ" ।
स्वामी जी का पा आदेश, लगाई उसने देर न लेश ।
पद्मासन में बैठ दिखाया, तन को भी सीधा कर पाया ।
जिह्वा को उस बहिर निकाल, पूरक कर लीना तत्काल ।
स्वामी जी तब कहा उस काल, "जिह्वा को तुम लीन निकाल ।
इसको चोंच समान बनाओ, तब तुम पूरक को कर पाओ ।
सपाट जीभ न राखो भाई, काक चञ्चु सम होय सुहाई ।

दो०—काक चञ्चु सम जीभ को, करके मेरे मीत ।
मुख से ले लो सांस को, धारो फिर सप्रीत ॥" 3817

सद्गुरु की जिमि आज्ञा पाई, वैसे ही उस कर दिखलाई ।
प्राणायाम शीतली देख, स्वामी जी तब कीन उल्लेख ।
"अब हम तुम को वह सिखलायें, भस्त्रिका सब जिसे कह पायें ।
पद्मासन में बैठ दिखाओ, तन को सीधा भी रख पाओ ।
*अंगुली से लो ईडा रोक, पिंगला चाले बिन ही टोक ।

*ईडा — बाई नासिका । पिंगला—दाई नासिका

चाले सांस पंप की रीत, बारह सांस लो सहित प्रीत ।
भर लो भीतर सांस तब साध, कुंभक इस विध लो आराध ।
यथा शक्ति तुम सांस को रोक, कर रेचक इड़ा से बिन टोक ।
ईडा से फिर सांस चलाओ, रेचक पिंगला से कर पाओ ।
दो०—बदल-बदल कर इसी विध, भस्त्रिका करे सुजान ।
जितनी बारी कर सके, शक्ति अपनी जान ॥ 3818
मम समक्ष अब करिये मीत, भास्त्रिका की जिमि समझी रीत ।
करने से सब होय स्पष्ट, और भ्रांति भी होवे नष्ट ।"
गुरु की आज्ञा मान के साध, आसन को उस लीन आराध ।
दांय नाक से सांस चलाया, तेज़ी-तेज़ी से कर पाया ।
पूरा श्वास तब उस भर लीन, यथा शक्ति उस कुंभक कीन ।
बायें से रेचक कर पाया, और वहीं से सांस चलाया ।
भस्त्रिका में वह भया प्रवीण, और प्रश्न यह उसने कीन ।
"हे स्वामी, यह मम जिज्ञास, भस्त्रिका का क्या लाभ है खास ।
दो०—भस्त्रिका प्राणायाम का, है क्या गुण विशेष ।
करने से अच्छा लगे, यह न कठिन विशेष ।" 3819
कहा स्वामी "हे साध सुजान, भस्त्रिका के गुण लो तुम जान ।
बात व कफ का रोगी होय, इससे लाभ विशेष वह गोय ।
यह भी गुण विशेष लो जान, श्वास क्रिया में लाभ महान ।
जो जन इसको करे हमेश, बाधा श्वास में होय न लेश ।
मनुष्य का हृदय करत सशक्त, शुद्ध करत यह दूषित रक्त ।
कई रोगों से बच वह पाय, नित्य नियम से जो कर पाय ।

इस विध करना नित तुम भाई, योग साधन में अति सहाई ।"
कहा साध "हे मेरे नाथ, ज्ञान पाय मैं भया सनाथ ।
दो०—अगला प्राणायाम जो, सीखूं वह भी आज ।
मन चाहे मम नाथ जी, ज्ञान गहूं सब आज ॥" 3820
कहा नाथ "हे साध प्यारे, सहज रूप से सीखो सारे ।
कल प्रात जब आओ भाई, सुन लेना फिर तुम मन लाई ।
वेला अब तो बहुत विहाई, सायं कर्म करेंगे जाई ।"
यह कह नाथ तभी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन चौतीसवां (34) प्रातः

प्रात भयी तब आया साध, आसन लीना आ उस साध ।*
गुरु देव को कीन प्रणाम, बात कही जो पूछी शाम ।
"गुरुवर कृपा अब कर पायें, अगला प्राणायाम बतायें ।
प्राण की शिक्षा पा कर नाथ, जानूं जन्म मम भया सनाथ ।
मेरी पूर्ण भयी है आस, शिक्षा आप से पा कर खास ।
दो०—शिक्षा दीनी आप ने, इस विद्या की जोय ।
अन्यत्र न मैं पा सका, इतना जीवन खोय" ॥3821
कहा स्वामी "हे साध सुजान, प्राणायाम योग के प्राण ।
इस का करता वही अभ्यास, गुरु पर जिसको दृढ़ विश्वास ।
गुरु से शिक्षा पा कर साध, लेता जान जो प्राण आराध ।

* आसन साधना=किसी योगासन में बैठना ।

चमत्कारी वह योगी होय, अलौकिक सुख ले जन वह गोय ।
दीर्घ काल जो करे अभ्यास, पाता वही है सिद्धि खास ।
अगला है जो प्राणायाम, प्लाविनी जानों उस का नाम ।
विरले जन करते अभ्यास, कठिन क्रिया यह जानो खास ।
सिद्ध करत जो यह अभ्यास, जल में तैरत बिन प्रयास ।

दो०—प्लाविनी क्रिया जान लो, इस का गुण महान ।
भीतर नीर न डूबता, योगी काष्ठ समान ॥3822 क
दीर्घ काल अभ्यास से, भरे पेट में वात ।
राखे उस को रोक वह, कुंभक वत हे तात ॥3822 ख

प्लाविनी क्रिया तब हो पाये, देह में वायु भर जब जाये ।
सद्गुरु करावे यह अभ्यास, यह तो सुखमय क्रिया खास ।
इसका अभ्यास नित कर पाना, पेट में वायु रोक दिखाना ।
सिद्धि जभी इसकी हो पाये, देह में स्फूर्ति तुझे लखाये ।"
सुन कर स्वामी जी की बात, कह साध "मैं तव साक्षात ।
कर दिखलाऊं यह अभ्यास, कुंभक कथन क्रिया जो खास ।"
इस विध कथ उस पेट फिलाया, भर श्वास कुंभक कर पाया ।
जब उस ने फिर सांस निकाला, पेट रह नहीं पाया फैला ।

दो०—हो हताश कहने लागा, "हे मेरे भगवान ।
बात आप की समझ ली, क्रिया कठिन महान ॥ 3823

वायु तन में नहीं रुक पाये, निकल निकल ही वह चलि जाये ।

क्या उपाय इस का हे नाथ, वायु देह को ही रहे साथ ।"
जान साधु की यह कठिनाई, स्वामी जी तब रीत बताई ।
*"जभी पेट में रोको प्राण, करिये जालंधर बंध सुजान ।
धीरे धीरे सांस चलाओ, कण्ठ के नीचे न ले जाओ ।
कुंभक की यह रीत महान, न करती साधक को परिशान ।
इस विध बैठ करो तुम भाई, कहना यदि कुछ हो कठिनाई ।"
बैठ के साधु पेट फिलाया, पूरक कर कुंभक कर पाया ।
रोक जालंधर बंध से सांस, चलत रहा मंद गति से सांस ।

दो०—प्राण भरे थे पेट में, कुंभक भी था साथ ।
मंद मंद था चल रहा, सांस उसी के साथ ॥ 3824क
कुछ काल तक बैठ रहा, वह यह कुंभक साध ।
उठ कर फिर कहने लगा, "नाथ मैं लीन आराध ॥3824ख

आप ने युक्ति जो बतलाई, है कठिनाई न इस में राई ।
इमि बैठ सकूं मै दीर्घ काल, तव कृपा पा कर दीन दयाल ।
सिद्ध भये मम यह अभ्यास, प्राणायाम जो है इक खास ।
आगे का प्रभो दीजो ज्ञान, धन्य भये यह शिष्य अनजान ।"
कहा नाथ "अब तुझे बताऊं, ऐसा प्राणायाम कराऊं ।
मन को भी जो वश कर पाये, प्राणों को मन साथ मिलाये ।

* जालंधर बंध=अपनी ठोडी को कण्ठ कूप के साथ लगा रखने का नाम जालंधर बन्ध है ।

भ्रामरी इसका है अभिधान, अब सुनो तुम लाकर ध्यान ।
अर्धरात को उठ जन पाये, आसन में तब बैठ दिखाये ।
दो०—कोई शब्द न होय जब, मध्यरात्रि के काल ।
आसन में जन बैठ कर, कान मूंद ले डाल ॥" 3825 क
सुन कर उनकी बात को, चकित साध उस काल ।
कहन लगा "हे नाथ जी, मेरा एक सवाल ॥ 3825 ख
प्राणों का क्या कान से नात, बंद करें जो उनको तात ।
सरल रूप से मुझे बतायें, संशय मेरे जिमि मिट पायें ।"
सुन कर उसकी यह जिज्ञास, नाथ कहा ला मुख पै हास ।
"चिरञ्जीव तुम को बात बताऊँ, सायं काल तुझे समझाऊं ।
अब तुम जाकर करो विश्राम, आना फिर जब होगी शाम ।"
स्वामी इतना कह उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन चौतीसवां (34) सायं

सायं भयी साध चलि आया, आकर उसने शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, पूछो जो थे प्रश्न तिहारे ।"
दो०—कहा साध 'हे नाथ जी, मेरा यही सवाल ।
कान क्यों हैं मूंदते, इसमें दीन दीनदयाल" ॥3826 क
सुन उस की जिज्ञास को, कहा नाथ "हे मीत ।
बात बताई फिर कहूं, श्रवण करो ला चीत ॥3826 ख

प्राण व्यापक थे बतलाये, घट में भी हैं वही समाये ।
उनमें हो रहा शब्द निरन्तर, बहिर और भी घट के अन्तर ।
उसी शब्द को सुनने हेत, प्राणायाम यह है अभिप्रेत ।
कान को जन जब बन्द कर पाये, तभी शब्द जन वह सुन पाये ।"
सुन कर नाथ का यह उपदेश, बोला साध तब "हे हृदयेश ।
उस शब्द का जोय अभिधान, उस का भी प्रभो करो बखान ।
तव मुख से जब मैं सुन पाऊं, दृढ़ विश्वास तभी मन लाऊं ।"
मम जिज्ञासा पुरवो स्वामी, मैं सेवक तुम अन्तर्यामी ।

दो०—मुझे बताओ नाथ जी, क्या शब्द है सोय ।
कानों को जब मीच लें, सुन पड़ता है जोय" ॥3827

सुनी नाथ जब वह जिज्ञास, बोले मुख पर ला कर हास ।
"चिरञ्जीव जब मूंद के कान, बैठें एकाग्र कर के ध्यान ।
प्राण ध्वनि तभी सुन पाये, ध्वनि प्रणव की यह कहाये ।"
कहा साध "हे सद्गुरु देव, अर्थ प्रणव का क्या अधिदेव ।
ज्ञान गूढ़ जो आप बतायें, सरल रूप से वह कथ पायें ।
मैं तो योग से हूं अनभिज्ञ, सद्गुरु मिले तुम योगी विज्ञ ।
ग्रहण करूं बहु योग का ज्ञान, यह मांगू मैं आप से दान ।
क्या प्रणव का अर्थ है नाथ, कर स्पष्ट यह करो सनाथ ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, श्रवण करो यह गूढ़ ज्ञान ।

दो०—ज्ञान गूढ़ को श्रवण कर, मन में लो वह धार ।
और कहूं अभ्यास जो, वह करना स्वीकार ॥3828

कान मूंद जो ध्वनि सुन पावे, प्राणों की वह गूंज कहावे ।

प्राण अनादि औ ध्वनि अनाद, प्रणव ध्वनि का अन्त न आद ।
'ओ' को प्रणव ध्वनि लो जान, कान गूंद जो सुनत पुमान ।
'शब्द ब्रह्म' यह ध्वनि कहाय, वर्णन जिस का वेद में आय ।
'ओ' नाम तू ब्रह्म का जान, इससे ब्रह्म की हो पहचान ।"
सुन नाथ की गूढ़ यह वाणी, कहा साध "हे सर्व ज्ञानी ।
'ओ' शब्द अभी आप बखाना, उसे ब्रह्म का वाचक माना ।
वेदों में तो 'ओं' है आया, ब्रह्म का वाचक वह कहाया ।
दो०– 'ओ' वा 'ओं' में भेद जो, स्पष्ट करें मम नाथ ।
भ्रांति मेरी दूर कर, करिये मुझे सनाथ" ॥3829
साधु ने निज भ्रांति बताई, स्वामी जी तब उसे बुझाई ।
"हे साधो मैं तुझे बताऊं, "ओ" अक्षर ही व्यापक पाऊं ।
तुम भी सुनोगे वह ही नाद, सृष्टि से जो हो रहा आद ।
"ओ" तब "ओं" का रूप धराये, जन होठ जब बंद कर पाये ।
सतत हो जब नाद यह भाई, "ओ" की ध्वनि तुम सुनो सदा ही ।
आसन में अब बैठ के साध, लेवो प्राणायाम आराध ।
एक बात मैं और बताऊं, कुंभक की मैं रीत जताऊं ।
दीर्घ काल जो बैठ दिखाये, दीर्घ काल कुंभक कर पाये ।
उस की भ्रामरी होवे सिद्ध, योगिन में यह रीत प्रसिद्ध ।
दो०– योगिन की यह रीत है, निरत करें प्रयास ।
दीर्घ काल अभ्यास से, सिद्धि मिलत है खास" ॥ 3830
स्वामी जी का सुन उपदेश, कहा साध "हे गुरु सर्वेश ।
दीर्घ काल कुंभक कथ पाया, वह तो समझ में है न आया ।

इतना कुंभक किमि हो पाये, चित्त तो शीघ्र ही घबराये।"
कहा स्वामी "हे साध सुजान, प्रातः काल दूं इसका ज्ञान।
अब तो वेला बहुत विहायी, उठने की है चित्त में आयी।
इतना कह स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में तभी सिधाये।

## दिन पैंतीसवां (35) प्रातः

प्रातः काल जब साधु आया, प्रश्न वही उसने कर पाया।
"हे नाथ मुझे आप बतावें, दीर्घ काल किमि सांस रुकावें।"
नाथ कहा "सुनिये मम तात, सब न जानें गुप्त यह बात।
कुंभक संग चले जो श्वास, वह रहस्य की बात है खास।
उपमा दे तुम्हें समझाऊं, जल से पूरित घट दिखलाऊं।
नल तले जो धरा हो भाई, नल का जल भी पड़त सदाई।
दो०—जल भरा एक घट धरा, नल के नीचे तात।
घट रिक्त नहीं होत है, जल बदला भी जात ॥383॥
कुंभक में तुम बैठ दिखाओ, नासिका को न बंद कर पाओ।
अल्प श्वास चलेगा भाई, कुंभक में चित्त न विकलाई।
इस विध कुंभक कर के बैठो, रोक के कानों को ही पैठो।
"ओ" की ध्वनि को सुनते जाओ, मन एकाग्र वहीं कर पाओ।
भ्रमरी की यह रीत लो जान, कर तुम देखो अभी सुजान।"
मानी साध नाथ की बात, बैठा कान रोक साक्षात।
साथ सांस भी लीना पूर, राखा नाक भी खुला जरूर।
तिल तिल श्वास आता जाता, दिल लेश नहीं था घबराता।

दो०—स्थित कान वह रोक कर, और सांस भी रोक ।
तिल तिल तो था चल रहा, दम उस का बेटोक ॥3832
बैठ रहा वह प्रयाप्त काल, उठ बतलाया निज फिर हाल ।
"हे नाथ तव किरपा भारी, मेरी दुविधा सकल निवारी ।
पूरक कर मैं रोका श्वास, चलाया तिल तिल सह विश्वास ।
मन भया था शब्द में लीन, भयी अनुभूति एक नवीन ।
प्रथम बात जो मैंने जानी, ओमकार की ध्वनि पहचानी ।
'ओ' ही 'शब्द ब्रह्म' है नाथ, मानव स्वयं 'म' जोड़ा साथ ।
ज्ञान और जो तुम से पाया, कुंभक करना आप सिखाया ।
कुंभक का यह रूप हे नाथ, शिक्षा पा मैं भया सनाथ ।
दो०—इस कुंभक के कारणे, दृढ़ होगा अभ्यास ।
दीर्घ काल जन कर सके, समाधि का प्रयास ॥3833
और बात इक मैं ने जानी, जो मैं थी न कहीं पहचानी ।
किमि प्राण मन से मिल पायें, शास्त्र जिस को कथन में लायें ।
मन प्राण का मेल अनूप, शास्त्रों में जो कथा है गूप ।
उस का रहस्य आप से पाया, ध्यान में बैठ लख मैं पाया ।"
सुन कर उस की सारी बात, कहा नाथ "यह सत्य है तात ।
करना तुम यह नित्य अभ्यास, प्राणायाम की विधि यह खास ।
अगला प्राणायाम बताऊं, "मूर्छा" जिस का नाम सुनाऊं ।
करना उस का भी अभ्यास, शिक्षा ले कर अब मम पास ।
दो०—मूर्छा कुंभक जान लो, प्राणायाम विशेष ।
जो जन इस को साध ले, शान्ति पाये विशेष ॥3834

जो कुंभक तुम को करवाया, तिल तिल कर था सांस चलाया ।
वही कुंभक कर के हे तात, बैठ लगाना ध्यान प्रात ।
मस्तक में ही ध्यान लगाना, मन एकाग्र वहीं कर पाना ।
होगा मस्त तुम्हारा चित्त, यदि अभ्यास करोगे नित ।
मूर्छा इसका नाम लो जान, सुख का अनुभव करे पुमान ।
ऐसा सुख इसमें मिल पाये, त्यागना जन न इस को चाहे ।
प्राण व मन का दृढ़ संयोग, प्रमाणित करता है यह योग ।
प्राणायामी जो हो जाये, चित्त एकाग्र भी कर पाये ।

दो०— चित्त एकाग्र होय जब, मिलता सुख अपार ।
सदा करे अभ्यास जो, मिले योग का सार ॥3835

इसका अभ्यास जा कर पाना, और शाम को फिर चलि आना ।
अनुभव अपना आ बतलाना, हो प्रश्न जो तभी कर पाना ।
ऐसा कह कर दीन विदायी, अनुपम शिक्षा साधु ग्राही ।

## दिन पैंतीसवां (35) सायं

सायं काल जब साधु आया, अपना अनुभव उस बतलाया ।
साध कहा "हे दीन दयाल, क्या बतलाऊं निज मैं हाल ।
मूर्छा प्राणायाम से नाथ, मूर्छित मन मम भया उस साथ ।
सुख की बात जो थी बतलाई, अनुभव वह भी मैं कर पाई ।
धन्य भया हूँ मैं मम नाथ, आप मिले जो गुरु जग नाथ ।

दो०— समझी अब यह बात मैं, गुरु बिन हो न ज्ञान ।
गुरु के अन्तर बसत है, चार वेद का ज्ञान ॥3836

हे प्रभो अब मुझे बतलाओ, अगला ज्ञान मुझे दे पाओ ।
योग रत्न के तुम रत्नाकर, दिव ज्योति के आप दिवाकर ।
दिव्य योग मैं तुम से पाऊं, अपना जीवन धन्य बनाऊं ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, भेद प्राणायाम के सारे ।
मैंने तुम को हैं बतलाये, क्या सभी हैं ध्यान में आये ।
मुझ को उन के नाम सुनाओ, तभी ज्ञान आगे का पाओ ।
कहा साध "हे सद्गुरु देव, वर्णूं सभी तुम्हारी सेव ।
सहित कुंभक के जो प्रकार, बतलाये थे तुम कृपा धार ।

दो०— सब कुंभन के नाम अब, मैं बतलाऊं देव ।
सीखे हैं जो आप से, रह आप की सेव ॥3837

सूर्य भेद तुम एक बताया, फिर उज्जायी था कथ पाया ।
तीजा सीत्कारी हे नाथ, चौथा शीतली भी उस साथ ।
पंचम भस्त्रिका प्रणायाम, भ्रामरी छटे का है नाम ।
सातवां मूर्छा है भगवान, अष्टम प्लाविन कीन बखान ।
आठों कुंभक आप सिखाये, नाथ सभी के थे बतलाये ।
आज्ञा दीजो अब हे नाथ, और कहूं मैं क्या इस साथ ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, तुमने हैं ये सीखे सारे ।
अब बतलाऊं प्राणायाम, प्रसिद्ध "केवली" जिस का नाम ।

दो०— "केवली" उस का नाम है, धन्य कहूं वे लोग ।
करें निरन्तर साधना, धार 'केवली' योग ॥3838

'केवली' को जो जन अपनावे, आठों पहर उसे कर पावे ।
प्राणों में रहे युक्त ध्यान, उस योगी के कौन समान ।

सांसों की तुम माल बनाओ, उस से नाम प्रभु का ध्याओ।
होय ईश से जिस की प्रीत, वही जाने इस योग की रीत।
आवे जावे श्वास प्रश्वास, प्रभु का नाम जपे हर श्वास।
श्रद्धा की ही गांठ से भाई, प्राण से मन युक्त हो पाई।
बिन श्रद्धा न चले यह माल, वह तो रुक जाये तत्काल।
बात रहस की यह है भाई, श्रद्धा की इस में अधिकाई।
इस को करना जो जन चाहे, गुरु चरणों में श्रद्धा लाये।

दो०—श्रद्धा गुरु के चरण में, होवे जिस की मीत।
श्वास श्वास में नाम का, जाप करे इस रीत ॥3839

अब तुम बैठ के देखो साथ, यह लो प्राणायाम आराध।
प्रभु चरणों में चित्त लगाना, मन्त्र श्वासों में जप पाना।
जो भी अनुभव तुम कर पाओ, वह ही उठ कर हमें बताओ।"
कहा साध "हे दीना नाथ, बताओ यह भी इस के साथ।
ईश्वर के किस नाम का जाप, करुं बताओ यह भी आप।
गुरुमुख से जो मिलता नाम, उससे शिष्य का बनता काम।
नाम आप से जो सुन पाऊं, "द्वारा ध्यान उसी कर पाऊं।"
कर कृपा मुझ को बतलाइये, मन्त्र का भी ज्ञान कराइये।

दो०—बताओ मन्त्र नाथ जी, चले प्राण के साथ।
निशि दिन जपता मैं रहूं, तव कृपा पा नाथ" ॥3840

कहा नाथ "हे साध प्यारे, प्रातः फिर इस आना द्वारे।
अब वेला है बहुत विहायी, उठने की है मन में आयी।
कह कर नाथ तभी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये।

## दिन छत्तीसवां (36) प्रातः

आ गया साधु प्रातः काल, चित्त उस के था वही सवाल ।
कौन मन्त्र जो मैं जप पाऊं, श्वासों में मैं जिसे रमाऊं ।
नाथ को कर तब उस प्रणाम, कहा "नाथ यह प्राणायाम ।
केवली जिसका है अभिधान, वह है ध्यान की रीत महान ।
उसकी विधि सब आप बताई, श्रद्धा से जो मैं सुन पायी ।
दो०—अब बतलाओ नाथ जी, वही मन्त्र भगवान ।
जिस मन्त्र का जाप करूं, पाकर तुमसे ज्ञान ।।3841
कहा नाथ "हे साध प्यारे, विचार ये हैं शुभ तुम्हारे ।
नाम प्रभु का हो आधार, नाम बिना तो योग निःसार ।
कौन नाम तुम्हें बतलाऊं, असंख्य नाम उसी के पाऊं ।
'राम' कहे को 'शाम' ध्याये, ओंकार कोइ जन कह पाये ।
जग की भाषायें हैं अनन्त, अतः प्रभु के नाम बेअन्त ।
*मानवेतर भी यदि ध्यावें, अपनी वाणी में कथ पावें ।
उस का न तो किसी को ज्ञान, प्रभु का नाम रहस्य महान ।
उस रहस्य को जानन हारा, हुआ न पैदा इस संसारा ।
दो०—प्रभु के ही सब रूप हैं, प्रभु के ही सब नाम ।
नामों की सब कल्पना, मानव का ही काम ।।3842
प्रभु अनामी और बिन रूप, उसका न कोई नाम व रूप ।
किसी ने कोई रूप है ध्याया, किसी ने को नाम जब पाया ।
चित्त एकाग्र जिमि हो पाये, वही करे जन लाभ उठाये ।

---

*मानवेतर—मनुष्य से भिन्न अन्य प्राणी—पशु, पक्षी आदि ।

निश्चित मत पर जानो भाई, नाम रूप की है प्रभुताई ।
गुरु पास जभी जन चलि जाये, नाम रूप में उसे लगाये ।
गुरु बतलावे जो भी नाम, बने शिष्य का उसी से काम ।
गुरु देवें जिस रूप का ध्यान, शिष्य के लिए वही भगवान ।
गुरु प्रदत्त नाम जप पावे, गुरु प्रदत्त रूप को ध्यावे ।

दो०—मन में प्रभु का रूप धर, जपे श्वास में नाम ।
प्राण संग है ध्यान यह, एक पंथ दो काम ॥3843 क
इस की है जो साधना, राज योग लो जान ।
राज संग हठ योग है, दोनों को अधिमान" ॥3843 ख

सुन साध यह नाथ की वाणी, कहा "नाथ तुम परम ज्ञानी ।
हठ योग के संग हे नाथ, राज योग बतलाया साथ ।
राज योग होत क्या स्वामी, मुझे बतावें अन्तर्यामी ।
मैं तो अज्ञ शिष्य हूं देव, जिसे स्वीकारा तुम निज सेव ।
दीना मुझ को दिव तुम ज्ञान, भया कृतार्थ मैं यहां आन ।
जो बतलावें आप भगवान, सभी सुनूं मैं ला कर ध्यान ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, राजयोग के अंग हि सारे ।
समय पाय तुम को बतलायें, प्रस्तुत बात अभी कर पायें ।

दो०—तव जिज्ञासा नाम की, जपो श्वास के बीच ।
उसी नाम का ज्ञान अब, दूं मैं सकल समीच ॥3844

तुम जपो वह नाम हे भाई, वही ध्वनि जो विश्व में छायी ।
प्राणों में जिस की गुंजार, सभी वेदों का जो है सार ।
ऋषियों ने जिस को स्वीकारा, है पंतजली प्रणव पुकारा ।
'ओं' नाम भगवान का भाई, इसी नाम की करो कमाई ।

गुरुमन्त्र इस को लो तुम जान, अन्य न इस के कोई समान ।
श्वासों में तुम इसे रमाओ, प्रतिश्वास में यह जप पाओ ।
कर्म करो जब कुछ भी साथ, इस मन्त्र को संग आराध ।
जिमि आकाश में ध्वनि समाये, सुगंधी वायु में रम पाये ।
तिमि श्वास में मन्त्र रमाओ, श्वास न बिना मन्त्र ले पाओ ।
दो०—हर श्वास का मोल है, मन्त्र रमे उस साथ ।
योग युक्त तब जन बने, लागे मुक्ति हाथ" ॥3845
कर के श्रवण साथु हरषाया, स्वामी जी को कह वह पाया ।
"नाथ दिया तुम नाम का ज्ञान, करिये रूप का संग बखान ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, रूप प्रभु के निर्मित सारे ।
किस रूप का करो तुम ध्यान, सायं काल मैं दूंगा ज्ञान ।
अब तो वेला बहुत विहायी, प्रातः कर्म करेंगे भाई ।
इमि बतला स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन छत्तीसवां (36) सायं

प्रातः साध पुनः चलि आया, उस के मन उल्लास समाया ।
कहन लगा "हे नाथ प्यारे, भ्रम तुम मेरे सकल निवारे ।
नाथ दिया तुम नाम का दान, इस जीव का कीन कल्याण ।
दो०—नाम संग अब रूप का, भी कराओ ज्ञान ।
नाम रूप की साधना, निशि दिन हो भगवान" ॥3846
नाथ कहा "हे साध सुजान, तव जिज्ञासा को मैं जान ।
भेद की बात तुझे बताऊं, तुम अधिकारी हो समझाऊं ।
रूप की परख न जन कर पाय, दृष्टि दिव्य उस को लख पाय ।

बाह्य रूप तो सभी समान, दिव्य दृष्टि से भेद का ज्ञान।
गुरु हि भेद के जानन हारा, भेद बतावे वह ही सारा।
दैवी गुण जिस में हों भाई, ध्यान में रूप वही सहायी।
दिव्य गुण दिव्य पुरुष में होय, उसका ध्यान करे हर कोय।
दिव्य पुरुष को खोजे साध, उसी का ध्यान करे निर्बाध।

दो०—दिव्य पुरुष का ध्यान धर, करे एकाग्र चित्त।
दिव्य गुण चित्त में बसें, इसी में जन का हित" ॥3847

सुन कर नाथ का यह उपदेश, साध कहा "हे गुरु सर्वेश।
दिव्य दृष्टि तो मुझ में नाहीं, दिव्य पुरुष किमि खोजूं साईं।"
कहा नाथ "हे साध लो जान, गुरु की आज्ञा को जन मान।
ध्यान करे उस का ही भाई, जो आज्ञा गुरु से हो पाई।
सद्गुरु को दिवपुरुष का ज्ञान, श्रद्धा से शिष्य ले वह मान।
उसी ध्यान को करे निरन्तर, श्रद्धा में न आये अन्तर।
दीर्घ काल जब बीते भाई, साधक सिद्धि को पा जाई।
यही मार्ग सद्गुरु बतलाते, श्रद्धावान शिष्य तर जाते।

दो०—दीर्घकाल सत्कारयुत, निरन्तर करे ध्यान।
उस साधक की क्या कहें, सिद्धि पाये महान" ॥3848

कहा साध "हे नाथ प्यारे, सुन्दर ये उपदेश तिहारे।
तीन गुण जो आप बतलाये, साधन के जो हित समझाये।
उनको स्मरण राखूँगा नाथ, सिद्धि लगे जिस विध मम हाथ।
श्रद्धा से मैं ध्यान लगाऊं, प्रति दिन निरन्तर हि कर पाऊं।
करता रहूं सदैव भगवान, दीर्घ काल के गुण को जान।

एक बात पर मैं सुन पाई, गुरु किरपा भी बनत सहायी ।
आप की कृपा जो पा जाऊं, सिद्धि को मैं तब ही पाऊं ।
अधिकारी शिष्य यदि मैं नाथ, रूप दिव्य दिखा करें सनाथ ।
दो०—दिव्य रूप का दान दें, शरणी आया जान ।
जीवन मेरा सफल हो, करें कृपा भगवान ।।3849 क
करें कृपा भगवान मम, भटक रहा था दास ।
मिले चरण जब आपके, आप बंधाई आस" ।।3849 ख
साध यही कह चरण ग्राहे, स्वामी जी मन में मुसकाये ।
और कहा "हे साध प्यारे, खुल पाये अब भाग्य हमारे ।
प्रभु ने अब है लीन अवतार, उसी रूप को लो मन धार ।
परम दिव्य है प्रभु का रूप, सृष्टिमध्य वह रूप अनूप ।
दिव्य गुणों का वह भण्डार, परम सौम्य है वह आकार ।
तुम उसी रूप का करो ध्यान, श्वासों में करो मन्त्र गान ।
इस विध कर लो तुम अभ्यास, प्राणायाम की विधि यह खास ।"
केवली प्राणायाम बताय, नाथ तभी थे चुप हो पाय ।
प्रभु के ध्यान में भये विलीन, साध रहस्य को लीना चीन ।
दो०—समझ लिया था साध ने, स्वामी जी का प्यार ।
जगत नियन्ता राम में, जिन लीना अवतार ।।3850
शाम भयी तब वह उठ पाया, अपने घर को साध सिधाया ।

## दिन सैंतीसवां (37) प्रातः

अगली प्रात साध चलि आया, अपने मन जिज्ञासा लाया ।
देख नाथ को ध्यान आसीन, प्रणाम साध ने उन को कीन ।

नाथ के चरणों में ला ध्यान, बैठ रहा वह साधु सुजान ।
जब नाथ जी ध्यान निज खोला, कर प्रणाम साध तब बोला ।
"हे नाथ मम चित्त जिज्ञास, प्रभु पग में मम हो विश्वास ।
आप सुनाओ हे भगवान, प्रभु अवतार की कथा महान ।
फिर देना तुम अगला ज्ञान, श्रवण करूं मैं ला कर ध्यान ।

दो०—ज्ञान आप से मैं गहूं, सभी योग का नाथ ।
प्रथम मुझे बतलाइये, प्रभु अवतार की गाथ" ॥3851

कहा नाथ "हे साध सुबोध, प्रभु का दूं मैं तुम को बोध ।
अनन्त शक्ति ले कर भगवान, लीना उन अवतार जग आन ।
*युग त्रेता की भविष्य वाणी, कलियुग में प्रभु है प्रवाणी ।"
कहा साध "हे मेरे नाथ, त्रेता की यह क्या है गाथ ।
मम मन भयी उत्कट जिज्ञास, त्रेता का भी सुनूं इतिहास ।"
कहा नाथ "तुम को बतलाऊं, त्रेता की मैं गाथ सुनाऊं ।
ऋषि भुषुण्डी इक भये प्रसिद्ध, ज्योतिष शास्त्र उन्हें था सिद्ध ।
त्रेता युग है उनका काल, गाथ कथी उन थी उस काल ।

दो०—उसी काल थी उन कथी, कलियुग की यह बात ।
अनन्तकला के स्वामी, प्रकटें प्रभु साक्षात ॥3852 क
प्रकटें प्रभु कलिकाल में, ले कर कला अनन्त ।
योग धर्म उद्धार हित, अधर्म का करने अन्त ॥3852 ख

* देखो श्री योग महादिव्य रामायण दोहा———2551

कथा भुषुण्डी काक ने, पंचनद हो प्रदेश ।
पण्डित गण्डाराम घर, प्रकटें गे सर्वेश ॥3852ग
अमृतसर महानगर हो, घर हो सिंह द्वार ।
भागवन्ति की गोद में, लेंगे प्रभु अवतार ॥3852घ
बालपने से खोज हो, गुरु की सब ही काल ।
महाप्रभु उन को मिलें, सद्गुरु दीन दयाल ॥3852ङ
सद्गुरु के आदेश से, रहें जगत में नाथ ।
प्रलय काल तक वे रहें, भक्त जनों के साथ ॥3852च
हे साधो मैं ने कथी, यह काक की बात ।
भयी सत्य जो काल इस, जग समक्ष साक्षात ॥3852छ
उसी प्रभु का ध्यान करो, सिद्ध करो निज योग ।
यही सरलतम साधना, अपनायें सब लोग ॥3852ज

प्रभु का ध्यान धरो मन लाय, मन्त्र जपो तुम संग लिव लाय ।
प्राणों में तुम मन्त्र रमाओ, मन में प्रभु का रूप ध्याओ ।
प्रभु प्रकटें जब जग में आन, भक्त धरें उन्हीं का ध्यान ।
प्रभु का ध्यान परम सुख दायी, प्रभु का ध्यान हि योग कमायी ।
जन धरे जब प्रभु का ध्यान, उपजे उस के अन्तर ज्ञान ।
प्रभु के ध्यान से मन हो शुद्ध, उजागर जन की होवे बुद्ध ।
इकाग्र धरे जो प्रभु में ध्यान, दूर भये उस का अज्ञान ।
हे साधो मम यह उपदेश, स्मरण करो तुम प्रभु हमेश ।"
कर श्रवण सद्गुरु उपदेश, बोला साध, "हे गुरु सर्वेश ।

आप की शिक्षा पर हे नाथ, सदैव चलूं मैं हे जग नाथ ।
मेरे मन इक यह जिज्ञास, महिमा प्रभु की सुनूं तव पास ।
लीला प्रभु की जो भी होय, श्रवण करूं मैं आप से सोय ।
दो०—प्रभु लीला जो जन सुने, पाप सकल हों क्षीण ।
पूरण होवें कामना, है श्रवण यह कीन" ॥ 3853
कहा नाथ "तू सत सुन पाया, जग में विस्तृत है प्रभु माया ।
माया से बच वह ही पाये, प्रभु लीला जो सुनता जाये ।
प्रभु लीला मैं तुझे सुनाऊं, संक्षेप से हि कुछ कथ पाऊं ।
1.*शैशव की इक घटन सुनाऊं, शक्ति प्रभु की तुझे बुझाऊं ।
मरनासन इक बुढ़िया भाई, दर्शन बाल रूप कर पाई ।
प्रभु ने दीना जीवन दान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
2.*घटना एक और है भाई, शक्ति दैवी प्रभु प्रकटाई ।
प्रातः 'राम तीर्थ' प्रभु जायें, सह पाठी उन रोक दिखायें ।
भिडंत भई जब उन से भाई, प्रकटा विश्व रूप भय दायी ।
भाग गये सब वे ले प्राण, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिनकी लील अपार ।
शेष शारदा भी स्वयं, पा सकें नहीं पार ॥3854
3.*जब प्रभु कहीं पढ़ने जाते, विस्मित गुरु जन भी हो पाते ।
पढ़ने को तो यह है आता, हमें पढ़ा कर ही है जाता ।

---

1. * देखो दोहा संख्या 11–12
2. * देखो दोहा संख्या 24–30
3. * देखो दोहा संख्या 16–17

कर पाते जिन का इमि बखान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
1. *काशी में थे जभी पधारे, विश्व नाथ के मन्दिर ठारे ।
योगिजनों के सुने उपदेश, प्रभु भी बखान किया था लेश ।
योगिजन भये बहुत हैरान, बालक को है कितना ज्ञान ।
हम तो वयोवृद्ध हैं भाई, बचपन में इस कीन कमाई ।
जिस को दीना योगिन मान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिन की लील अपार ।
शेष शारदा भी स्वयं, पा सकें नहीं पार ॥3855
हे साधो अब तुम चलि जाओ, सायं काल शीघ्र ही आओ ।
बखान प्रभु का हो जब भाई, सुधि काल की विसर ही जाई ।"

## दिन सैंतिसवां (37) सायं

सायं काल साध जब आया, नाथ प्रसंग वही चलाया ।
कहा नाथ, "अब मैं कथ पाऊं, सुन्दर घटना एक सुनाऊं ।
2.*जसपुर में इक बालक आया, मन्दिर में प्रभु को मिल पाया ।
खेचर उस की सिद्ध करायी, उस पर प्रभु दया कर पाई ।
योग का दीना था जिस दान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
3. * नर्बद नद पर प्रभु पधारे, वहां किये उन कर्म न्यारे ।
हरिराम एक बालक आया, प्रभु चरणी जिस शीश चढ़ाया ।
समाधि में उस को बिठलाया, सिद्ध बना शरणी रख पाया ।

1.* देखो दोहा संख्या 59—60

2.* देखो दोहा संख्या 160—166

3.* देखो दोहा संख्या 240—252

प्रभु के चरित विलक्षण जान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान।

दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिन के चरित अपार।

शेष शारदा भी स्वयं, पा सकें नहीं पार ॥3856

1. *अलमोडा थे नाथ आसीन, मिली अवधूता इक अति दीन।
उस का संकट वे हर पाये, भगवद्दर्शन उसे कराये।
ऐसे जिन के चरित महान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान।
2. *प्रभु ने गंगा तट पर देखा, ब्राह्मण दीन दुखी इक पेखा।
पुत्री कारण दुखी विशेष, कुसंग पड़ी न सुनती लेश।
पुत्री को प्रभु बख्शा योग, पिता का दूर किया सब सोग।
निन्दा करते थे जो लोग, भये प्रशंसक सभी वे लोग।
करते जो हैं योग का दान, उसी प्रभु का धर तू ध्यान।

दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिस के चरित अपार।

शेष शारद न पा सकें, उस प्रभु का पार ॥3857

बंग देश में राम पधारे, संग भक्त थे उन के सारे।
जज की पत्नी रामा बाई, सेवा में जब चल कर आई।
हो प्रसन्न उसे दीना योग, उसे मिला यह अमूल्य सुयोग।
रामा करत जिन का गुण गान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान।
3. *असम देश जब प्रभु पधारे, नागे मिले तभी हत्यारे।
हरण प्रभु का वे कर पाये, ले समक्ष देवी के आये।

1. * दोहा 182 क

2. * दोहा 382

3. * दोहा 486

मिल कर प्रभु की बलि चढ़ायें, दुष्ट भाव यह मन में लायें ।
योग शक्ति तब प्रभु दिखायी, विपदा नागों पर चलि आई ।
भक्तों का जिन कीन त्राण, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिस के चरित अपार ।
शेष शारद न पा सकें, उस प्रभु का पार ।।3858
1.*मय ग्राम में प्रभु चलि आये, राजा रणसिंह को मिल पाये ।
जाने क्या राजा मन आया, प्रभु पै मारण मन्त्र चलाया ।
मन्त्र का नहीं भया प्रभाव, राजा के मन जागे भाव ।
उस ने शक्ति प्रभु की चीनी, दीक्षा ग्रहण प्रभु से कीनी ।
राजा ने प्रभु लीन पहचान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
2.*राजा से प्रभु थे कह पाये, तेरे गुरु को मिलने आये ।
पालकी पर बिठलाये नाथ, राजा चला पैदल ही साथ ।
गुरु का आश्रम जब दिख पाया, स्वागत हित वह दौड़ा आया ।
प्रभु को दण्डवत कर प्रणाम, कहने लगा स्वागत हो राम ।
जिस को गुरु ने लीन पहचान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।
दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिस के चरित अपार ।
शेष शारद न पा सकें, उस प्रभु का पार ।।3859क
3.*थे निकले गुरु खोज में, जग के सिरजन हार ।
मिल पायें कहां सद्गुरु, पडे सोच करतार ।।3859 ख

1. * देखो दोहा संख्या 545–547
2. * देखो दोहा संख्या 551–552
3. * देखो दोहा संख्या 585–586

मिल पाय खुद आय कर, महाप्रभु के रूप ।
शिव अवतारी महाप्रभु, राम विश्व के भूप ॥3859 ग
महा प्रभु तभी राम को, दीना बहु था मान ।
ईश्वर को तो ईश की, थीं पूरी पहचान ॥3859 घ

महा प्रभु दीना जिन को मान, उसी प्रभु का धर तू ध्यान ।
प्रभु महिमा को किमि लख पायें, योगी जन सब उन को ध्यायें ।
सिमरे जो प्रभु जी को मीत, चरणों में रख करके प्रीत ।
योग समाधी वह पा जाये, चौरासी से जन मुक्ति पाये ।
मुझ पर जो किरपा हो पाई, कथनी में ला सकूं न भाई ।
मैं निमाना था एक बाल, मुझे मिले प्रभु स्वयं दयाल ।
भटकत था मैं गुरु की खोज, स्वयं मिले वे आ इक रोज ।
गुरु मेरे ये हैं भगवान, उसी प्रभु का तू धर ध्यान ।

दो०—उसी प्रभु का ध्यान धर, जिसके वश संसार ।
जग भूले जब धर्म को, आते ले अवतार" ॥3860

साध सुनी प्रभु की जब वाणी, कहन लगा "हे जग कल्याणी ।
आप की आज्ञा को मैं मान, नित्य धरूंगा प्रभु का ध्यान ।"
कहा स्वामी "प्रभु कृपा पाओ, दृढ़ योगी तुम बन दिखलाओ ।
इसके आगे जो है भाई, वह तुम सुनना प्रातः आई ।"
इतना कह स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन अठतीसवां (38) प्रातः

अगले रोज जब साधु आया, प्रणाम करि तब वह कह पाया ।
"नाथ कीन तुम ऐसी दाया, दर्शन मैं ने प्रभु का पाया ।

था स्वप्न वा सत्य वह बात, भयी रोमाञ्चित मेरी गात ।

दो०—प्रभु के उस ही रूप को, ध्या रहा हूं देव ।
इस दर्शन से मिल गया, मुझे प्रभु का भेव ॥3861 क
दर्शन जो प्रभु ने दिये, न सामान्य थे नाथ ।
वह अलौकिक रूप इक, दिव्य तेज उस साथ ॥3861 ख

करता हूं अब उसी का ध्यान, तव कृपा से है पाया ज्ञान ।
आगे का जो ज्ञान हो नाथ, वह बतला कर करें सनाथ ।
मेरी बस इक यही अभिलाष, योग करूं जब तक है श्वास ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, प्रभु: दर्शन जो दीने आन ।
उस का समझो यही संकेत, जन्म मिला है योग के हेत ।
आजीवन तुम योग कमाओ, मानव देह सफल कर पाओ ।
अब देंगे तुझे अगला ज्ञान, मुद्रा जिस का है अभिधान ।
मुद्रा महा विद्या है साध, इस से शक्ति पायें आराध ।

दो०—मुद्रा की जो साधना, इक अनोखा ज्ञान ।
मानवतन को जानिये, हीरों की है खान ॥3862 क
खान को जिमि कुदाल से, खोद सकें हम मीत ।
मुद्रा से इस देह को, खोजन की है रीत ॥3862 ख
सुनी नाथ की बात जब, उपजा उस मन चाव ।
कहन लगा वह साध तब, अपने मन के भाव ॥3862 ग

कहा साध, हे नाथ दयाल, एक मेरा अब वही सवाल ।
मुद्रा साधक जब कर पाये, विशेष लाभ वह क्या ग्राहे ।
और बतावें यह भी बात, मुद्रा क्या होती है तात ।"
नाथ ने सुन उस की जिज्ञास, कहा "बताऊं बात जो खास ।
मुद्रा का जो करत अभ्यास, स्थिरता उस में उपजत खास ।
चंचलता हो उस की दूर, मन में दृढ़ता आये जरूर ।
और बात जो तेरे चीत, मुद्रा होती क्या है मीत ।
यही ज्ञान तुझ को दे पाऊं, बहुत हैं मुद्रा सब सिखाऊं ।"

दो०—सब मुद्रा के नाम जो, लो जान तुम मीत ।
उस का तब अभ्यास भी, करना ला कर चीत ॥3863

मुद्रा बाई हैं कथ पाई, नाम सुनो उन के तुम भाई ।
*तीन बंध लो पहले जान, मूल बंध की कर पहचान ।
जालंधर व उड्डीयान बंध, मुद्रों के आधार निबंध ।
तीन बंधों के बिन अभ्यास, मुद्रा सिद्ध न हो को खास ।
प्रथम करो इन का अभ्यास, पाछे मुद्राओं का प्रयास ।"
कहा साध "हे सद्गुरु देव, मैं तो रह कर आप की सेव ।
जिमि आप करायें अभ्यास, तिस विध करूं मैं सह विश्वास ।
मैं तो हूं अज्ञानी देव, न जानूं कुछ योग का भेव ।

दो०—तीन बंध का नाथ जी, दीजो मुझ को ज्ञान ।
उन का मैं अभ्यास फिर, कर पाऊं भगवान" ॥3864

* तीन बंध—मूल बंध, जालंधर बंध, उड्डीयान बंध ।

कहा नाथ "हे साध सुजान, मूल बंध को लो तुम जान ।
तब बंध उड्डीयान लगाना, फिर जालंधर को कर पाना ।
सर्व प्रथम लो आसन साध, बैठो उस में घंटा आध ।
अपान वायु को ऊपर खींच, गुदा की पेशियों को लो मींच ।
ध्यान एकाग्र होवे भाई, बंध सिद्ध यह तब हो जाई ।
अभी बैठ कर मुझे दिखाओ, अनुभव जो हो वह बतलाओ ।
मानी साध नाथ की बात, सिद्धासन में बैठ साक्षात ।
मूल बंध को उस लगाया, जिमि था स्वामी जी बतलाया ।
बैठ रहा जब कुछ वह देर, नाथ जी उस को लीना टेर ।
कहा नाथ "बतलाओ साध, मूल बंध तुम लीन आराध ।
दो०—जो अनुभव हो साध जी, बतलाओ मुझ पांहि ।
दीर्घ काल अभ्यास से, ही जन लाभ उठांहि ॥3865
अब मैं वेला बहुत विहायी, बैठो तुम निज आसन जायी ।
सायं काल जभी हो आना, अपना सारा हाल बताना ।"

## दिन अठतीसवां (38) सायं

सायं काल जभी हो पाया, साध नाथ की चरणी आया ।
कहा नाथ "अब तुम बतलाओ, अपना अनुभव हमें सुनाओ ।
कितना काल किया अभ्यास, काल का महत्त्व इस में खास ।
जितना वेला बैठ दिखाओ, उतना ही तुम लाभ उठाओ ।"
साध सुनी जब नाथ की बात, कहन लगा "हे जग के त्रात ।
दो०—आज्ञा जैसी थी भयी, मैं कीना अभ्यास ।
मूल बंध लगाय कर, रहा स्थित यह दास ॥3866 क

दो०—बंध लगाना सुगम है, कठिनाई पर एक ।
चित्त चंचल न टिक सके, संग बंध के नेक" ।।3866 ख

कहा नाथ "हे साथ प्रवीण, बात रहस्य की तुम कथ दीन ।
मन न यदि बंध संग जुड पाय, बंध का लाभ न जन उठाय ।
बहु काल अभ्यास कर पाओ, मन में श्रद्धा भी तुम लाओ ।
करो निरन्तर जो अभ्यास, लाभ हो इस का तब ही खास ।
दूजा बंध कहूं अब मीत, उस को सुनो तुम ला कर चीत ।
जिस को कहते हैं अड्डियान, उस के गुण भी करूं बखान ।
पेट सिकोड़ो पीठ की ओर, बैठ रहो दृढ़ इक ही ठोर ।
दोनों बंध लगा कर मीत, बैठ रहो तुम स्थिर कर चीत ।

दो०—दोनों बंध लगाय कर, जो बैठे नित साध ।
योग युक्त वह हो सके, मुद्रा को ले साध ।।3867

पहले बंध को जो ले साध, मुद्रा सके वह जन आराध ।
बंधों को इस कारण साधो, पाछे मुद्रा को आराधो ।
बैठो बंध लगा दोय मीत, जैसी समझी है तुम रीत ।
तदुपरान्त मुझ को बतलाना, अपने अनुभव को कथ पाना ।"
उस ने गुरु की आज्ञा मानी, टेका माथा उस सन्मानी ।
बैठ गया दो बंध लगाय, सिद्धासन में स्थिर हो पाय ।
भया जभी कुछ काल व्यतीत, बुलाया गुरु जी तब सप्रीत ।
"हे तात ! अब उठ कर आओ, अपना अनुभव हमें सुनाओ ।"

दो०—आंख उघाडी साध ने, सद्गुरु सुन आदेश ।
मस्तक टेका आय कर, बोला "हे सर्वेश ।।3868 क

दो०—आसन ऊपर बैठ कर, बंध जभी लग पाय ।
गति श्वास की रुकत है, इस का क्या उपाय" ॥3868 ख
सुन कर उस की यह कठिनाई, स्वामी जी तब बात बताई ।
"तुम ने ठीक पूछा है मीत, बात सुनो मम ला कर चीत ।
बंध लगाते हैं जब भाई, गति श्वास की रुक ही जाई ।
पूरा श्वास तो न ले पायें, लघु श्वास से काम चलायें ।
छाती में हो पूरित श्वास, कुंभक का जो रूप है खास ।
हलका हलका चले तब सांस, बंधों में यह रीत है खास ।
बंध लगा कर बैठो नित्त, जब तक रहे एकाग्र चित्त ।
धीरे धीरे समय बढ़ाओ, इस साधन को नित कर पाओ ।
दो०—नित्य करो अभ्यास यह, और बढ़ाओ काल ।
वह जन मुद्रा कर सके, जो बैठे बहु काल" ॥3869
नाथ से पाकर सारा ज्ञान, पूछा साध "हे गुरु भगवान ।
जानन चाहूं यह भी बात, क्या बैठूं मैं केवल प्रात ।
अथवा और काल भी होय, रहे अभ्यास के हेतु जोय ।"
सुन कर सद्गुरु उस की बात, बोले, सुन लो हे मम तात ।
साधन हेत सब वेला शुद्ध, एकाग्र हो जब जन की बुद्ध ।
प्रातः सायं बैठो भाई, मध्यान्ह भी हो सुखदाई ।
*अर्ध रात यदि खुल जाय नयन, बैठ जाओ तब भी सुखचयन ।
चार काल ये ग्रंथन गाये, बैठो अधिक यदि चित्त भाये ।

* सुखचयन=सुख पूर्वक ।

दो०—नेम यही तुम समझलो, मन लगे जब मीत ।
आसन में तुम बैठ कर, कर साधन ला चीत" ॥3870
सुन कर साध नाथ की वाणी, कहन लगा वह गुरु सन्मानी ।
"नाथ पालूं मैं तव आदेश, कथिये अगला अब उपदेश ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, दिन के पल बीते हैं सारे ।
अब तो करेंगे हम विश्राम, कल तुम आना फिर इस धाम ।"
कह इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन उनतालीसवां (39) प्रातः

प्रातःकाल जब साधु आया, स्वामी जी को बैठा पाया ।
कर दण्डौत भया आसीन, नाथ से विनय तभी उस कीन ।
"साधन नाथ कौन हैं और, सीखूं रह जो मैं इस ठौर ।"
कहा नाथ "दो बंध बताये, तीजा सीखो अब मन लाय ।
दो०—बंध तीसरा सीख लो, जालंधर कहलाय ।
तीनों बंध लगाय जो, वह मुद्रा कर पाय ॥3871
बिना बंध नहीं मुद्रा होय, बोध अभ्यासी को यह होय ।
मुद्रा में प्रवेश वही पाय, बंधों को जो सिद्ध कर पाय ।
जालंधर की बताऊं रीत, दबाओ ठोडी को सप्रीत ।
कंठ कूप से जिमि सट जाय, ग्रीवा में कुछ सखती आय ।
जालंधर बंध यह हि जानो, मुद्रा का यह अंग हि मानो ।
सुनिये अब मुद्रा की बात, मुद्रा इक न बाइस हैं तात ।
नाम सुनाऊं उन के भाई, परिचय प्रथम जिमि हो जाई ।
दो वर्गों में मैं कथ पाऊं, प्रति वर्ग का लक्ष्य जतलाऊं ।

दो०—लक्ष्य भेद से मैं कथूं, मुद्रा के दो वर्ग ।
*प्रथम वर्ग में नौ कहे, तेरह दूजे वर्ग ॥3872 क
नाम सुनो अब दोय के, प्रथम वर्ग में जान ।
नभो मुद्रा तो एक है, खेचर दूजी मान ॥3872 ख
तड़ागी मुद्रा तीजी जान, चौथी मांडूकी पहचान ।
अश्विन मुद्रा पंचम भाई, छटवीं काकी मुद्रा आई ।
मातंगिनी को सप्तम जान, भुजंगिनी आठवीं पहचान ।
विपरीतकरी को नवम जान, प्रथम वर्ग की ये सब मान ।
द्वितीय वर्ग की मुद्रा जोय, कह दूं वे भी तुम को सोय ।
पहली है महामुद्रा साध, लो दूज महा बन्ध आराध ।
तीजी महाबेध है भाई, चौथी योनी मुद्रा आई ।
पंचम वज्रोणी लो चीत, शक्तिचालिनी छटवीं मीत ।
दो०—छः नाम जो अभी कथे, सुन लीने तुम मीत ।
इसी वर्ग के और भी, तुम सुनो ला चीत ॥3873 क
सप्तम मुद्रा शांभवी, सुन अष्टम का नाम ।
पृथ्वी की वह धारणा, बतलाई प्रभु राम ॥3873 ख

* प्रथम वर्ग की मुद्रायें—
(1) नभोमुद्रा (2) खेचरीमुद्रा (3) तड़ागीमुद्रा (4) मांडूकी मुद्रा
(5) अश्विनी मुद्रा (6) काकी मुद्रा (7) मातंगिनी मुद्रा (8) भुजंगिनी मुद्रा (9) विपरीतकरी मुद्रा।
द्वितीय वर्ग की मुद्रायें—
(1) महामुद्रा (2) महाबन्ध (3) महाबेध (4) योनिमुद्रा (5) वज्रोणिमुद्रा (6) शक्तिचालिनी मुद्रा (7) शांभवी मुद्रा (8) पृथिवी धारणा मुद्रा (9) जल धारणामुद्रा (10) अग्नि धारणा मुद्रा (11) वायवीधारणा मुद्रा (12) आकाशीधारणा मुद्रा 913) पाशनी मुद्रा।

जल की धारणा नवम आई, अग्नि धारणा दसवीं भाई ।
ग्याहरवीं का सुनो अब नाम, वायवी धारणा बहु अभिराम ।
अब आकाश धारणा भाई, वह है बारहवीं कहलाई ।
पाशिनी अगली का है नाम, यह है तेहरवीं शक्ति धाम ।
तीन बंध और मुद्रा बाई, पच्चीस संख्या इन की आई ।
हठ योग के परम आधार, इन को समझो सब प्रकार ।
इन के स्मरण करो तुम नाम, करो अभ्यास प्रातः शाम ।
इन से लाभ जो जन को होय, सभी बतलाऊं गा मैं तोय ।

दो०—हठ के साधन ये कथे, बंध व मुद्रा साध ।
मैं बतलाऊं गा सभी, लो इन जिमि आराध" ॥3874

कहा साध "मैं सब कर पाऊं, गुरु आज्ञा को शीष निबाऊं ।
तीनों बंध हैं भये स्पष्ट, साधन में न लेश भी कष्ट ।
तव चरणों में बैठ अब नाथ, मुद्रा सीखूं भी इन साथ ।
करिये यह भी बात स्पष्ट, भ्रांति दास की जिमि हो नष्ट ।
मुद्रा के दो वर्ग बताये, प्रथम वर्ग में नव हैं आये ।
द्वितीय वर्ग में तेरह तात, उनमें विशेष क्या है बात ।
वर्गों में कुछ भेद तो होय, करिये स्पष्ट प्रभो अब सोय ।"
सुन कर नाथ उस की जिज्ञास, कहन लगे "कुछ भेद है खास ।

दो०—खास भेद के कारणे, दो वर्ग बन पाये ।
दोनों के विशेष गुण, दूं तुझे समझाये ॥3875

अब तो वेला बहुत विहाना, सायं वेला फिर चलि आना ।
ऐसा कह सद्गुरु उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन उनतालीसवां (39) सायं

सायं भयी साध चलि आया, वही नाथ प्रसंग चलाया ।
"मुद्रा के दो वर्ग जो साध, समझो भेद जब लो आराध ।
प्रथम वर्ग का यह स्वभाव, उस का ग्रंथियों पर प्रभाव ।
द्वितीय वर्ग में मुद्रा जोय, प्राणों पर प्रभावी होय ।"
सुन कर साध ने पूछी बात, होती ग्रंथियां क्या मम तात ।
यह नाम जो आप बताया, सुन कभी नहीं हम ने पाया ।
तन में उनका कहां है वास, क्या संबंध मुद्रा से खास ।
दो०– ग्रंथी का हे नाथ जी, मुझे बताओ भेद ।
सर्व ज्ञाता आप हैं, कण्ठ सभी तव वेद" ॥3876
उत्सुकता जो साध दिखायी, स्वामी जी के मन बहु भायी ।
शिष्य अधिकारी उसको जान, ग्रंथियों का देन लगे ज्ञान ।
कहा स्वामी "हे साध सुजान, ग्रंथियां बिन तो तन बेजान ।
ग्रंथियां जीवन का आधार, जिन से स्रावे अमृत की धार ।
अनेकों ग्रंथियां तन में जोय, वे बिगड़ें तन रोगी होय ।
जब मुद्रा तुम सीखो भाई, यह बात तब समझ में आई ।

### (1) नभो मुद्रा

नभोमुद्रा का करूं बखान, इस की किरया इस विध जान ।
निज जिह्वा को ऊपर उठाय, तालु के संग सपाट लगाय ।

दो०—तालु संग लगाय कर, धरे उधर ही ध्यान ।
स्त्रवत तालु से अमृत रस, जिह्वा करती पान" ॥3877

सुनी नाथ की बात यह खास, कथी साध तब निज जिज्ञास ।
"हे नाथ यह रस जो स्त्रावे, तालु में वह कहां से आवे ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, तुम ने पूछा भेद महान ।
*तालु मध्य जो रस चलि आवे, मूर्धा ग्रंथि से वह स्त्रावे ।
1.*मूर्धा रस का महत्त्व महान, सब ग्रंथिन का प्रेरक जान ।
2.*पुरुषों में पौरुषत्व लाये, स्त्रीत्व नारियों में उपजाये ।
3.* इस रस की यदि होवे हान, बौना रहता तब इन्सान ।
नभो मुद्रा करे जन जोय, अमृतपान कर सकता सोय ।

दो०—चलते फिरते सोवते, भी करे अभ्यास ।
इस मुद्रा के कारणे, अमृत मिलता खास ॥3878

## 2. खेचरी मुद्रा

नभो मुद्रा से आगे जान, खेचरी की लो कर पहचान ।

---

* मूर्धा ग्रंथि—Pituitary gland.

The Pituitary gland is a small beam shaped reddish grey organ located in a saddle shaped depression in the floor of the skull and attached to the base of the brain by a stalk.

1. * The harmones secreted by the Pituitary gland stimulate and contro functioning of almost all the other endocrine glands in the body.

2. * The harmones secreted by the Pituitary gland stimulate the formation of the craflan follicle in the female ovary and the development of spermatozoa in the male, stimulate the tissues of the testes to elaborate the testosterone.

3. * Decrease in the secretion of the pituitary gland harmones causes dwarfness.

इस मुद्रा की जो विधि विशेष, श्रवण करो तुम पहले लेश ।
जिह्वा को उलटाओ लेश, कपाल कुहर में करे प्रवेश ।
इस हेतु तुम करो अभ्यास, जिह्वा लांबी हो जिमि खास ।"
कर के श्रवण नाथ की वाणी, कहा साध "हे गुरु कल्याणी ।
वह अभ्यास भी अब बतायें, जिह्वा लांबी जिमी कर पायें ।
यह तो संभव दीख न पाये, जिह्वा लांबी जो हो जाये ।
फिर भी मुझे बताइये नाथ, मम अभ्यास हो रह तव साथ ।
दो०—तव चरणों की शरण में, रह कर हो अभ्यास ।
सिद्ध होय जिमि खेचरी, कथी जो क्रिया खास" ॥3879
सुन कर उस की नाथ जिज्ञास, कहा नाथ "तू रख विश्वास ।
जिह्वा लांबी भी हो जाये, स्पर्श नाक को वह कर पाये ।
इस की विधि मैं तुझे बताऊं, निज समक्ष अभ्यास कराऊं ।
*सेंधा नमक लेय कर आओ, जिह्वा ऊपर उसे लगाओ ।"
साधु ने यह सभी कर पाया, जिह्वा ऊपर नमक लगाया ।
नाथ जी तब कहा "हे भाई, गो दोहन की विधि जो आई ।
कर दोहन तिमि जीभ का मीत, जिह्वा दोहन की यही रीत ।"
साधु जिह्वा दोहने लागा, जीभ दबा कर खींचन लागा ।
कई मिनट उस ऐसी कीन, नाथ ने उस को तब कह दीन ।
दो०—कहा नाथ ने साध से, "यही विधि है मीत ।
करत रहो इस को सदा, काल दीर्घ ला चीत ॥3880 क

* सेंधा नमक—भोजन में प्रयोग होने वाला साधारण नमक ।

दो०—करते रहना नित्य यह, कुछ काल के बाद ।
जिह्वा लांबी होयगी, जितनी चाहो साध ॥3880 ख

जिह्वा लांबी जब हो पाये, कपाल कुहर में उसे टिकाये ।
इस विषय में और जो ज्ञान, लेना पूछ प्रात तुम आन ।
स्वामी इतना कथ उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन चालीसवां (40) प्रातः

प्रातःकाल साध जब आया, स्वामी जी उस को कथ पाया ।
"मुद्रा के गुण तुम सुन पाये, पूछ लो अब जो चित्त आये ।"
कहा साध "हे नाथ प्यारे, आप योग के सागर भारे ।
ज्ञान योग का जो मैं पाया, सुनने में भी न कभी आया ।
भयी दास पर तेरी दाया, रहस योग का खोल बताया ।

दो०—ज्ञान योग का हे प्रभो, लुप्त भया जग बीच ।
प्रकट इसे हो कर रहे, जन गण मध्य समीच ॥3881

आप तज्ञ मैं अज्ञ स्वामी, स्वयं नाथ तुम अन्तर्यामी ।
पूछ पाऊं क्या न मैं जानूं, आज्ञा तेरी को सन्मानूं ।
कपाल कुहर कहां पर नाथ, यही बतला कर करें सनाथ ।
जिह्वा लांबी जब कर पाऊं, आज्ञा पा मैं वहीं टिकाऊं ।
खेचरी मेरी होवे सिद्ध, साधन योग का जो प्रसिद्ध ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, कपाल कुहर का दूं मैं ज्ञान ।
तालु ऊपर छेद जो भाई, उसने है यह संज्ञा पाई ।
जिह्वाग्र जब उसी में जाये, सिद्ध खेचरी तब हो पाये ।

दो०—सिद्ध खेचरी हो तभी, जिह्वाग्र का भाग ।
कपाल कुहवर में जाकर, रस लेने जब लाग" ।।3882

पूछा साध "हे नाथ महान, करती रसना कौन रस पान ।
यह जिज्ञासा मम मन आई, शांत करो हे जग सुख दाई ।"
*कहा नाथ "तुम को बतलाया, मूर्धा रस तुम जानन पाया ।
उसी रस को जिह्वा ग्राहवे, क्षुधा प्यास फिर नहीं सतावे ।
योग स्थित जब होवे योगी, सिरफ इसी वह रस का भोगी ।
योगी करत प्रयास महान, खेचरी सिद्ध होय जिमि ज्ञान ।
लांबी जिह्वा करने हेत, सतत यत्न करत अभिप्रेत ।"
कहा साध "हे नाथ महान, आप से पाया बहु मैं ज्ञान ।

दो०—जिह्वा दोहन मैं करूं, करूं सतत अभ्यास ।
लांबी जिह्वा होय मम, मन मेरे विश्वास ।।3883

हे नाथ ! मुझ को समझाओ, और यदि हो रीत बतलाओ ।
जिस से जिह्वा लांबी होय, आज्ञा पा करूं मैं सोय ।
तव अधीन हैं सकल उपाय, ज्ञान पाय जो शरण में आय ।
ज्ञान समुन्दर आप हैं नाथ, गहे शरण जोय बने सनाथ ।
शरण आप की जो जन आये, साधन कर योगी बन पाये ।
जो पूछा मैं हे मम नाथ, वही बतला कर करें सनाथ ।
लांबी जीभ कराओ देव, करूं योग रह आप की सेव ।
समाधि में मैं बैठ दिखाऊं, भूख प्यास से मुक्ति पाऊं ।

* मूर्धारस—Harmones secreted by the Pituitary gland.

दो०—करो दया हे नाथ मम, दीजो सकल ज्ञान ।
लांबी जिह्वा कर सकूं, करूं मैं अमृत पान" ॥3884

कहा नाथ "दोहन की रीत, करो इसे ही तुम सप्रीत ।
इस में भय का नहीं कुछ लेश, दूज उपाय में डर हमेश ।"
सुन कर साध नाथ की बात, कहन लगा "हे जगत त्रात ।
आपकी शरणी रह योगेश, भय का कारण रहे न लेश ।
जानन चाहूं मैं वह उपाय, ज्ञान वृद्धि में बने सहाय ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, रहस योग के बहुत न्यारे ।
शास्त्र कथा जो दूज उपाय, श्रवण करो तुम ध्यान लगाय ।
जिह्वा नीचे तंतु बारीक, रोकत वही जिह्वा को ठीक ।
उसी तंतु को काट दिखायें, जिह्वा लांबी भी कर पायें ।

दो०—"जिह्वा छेदन" रीत यह, योगिन में विख्यात ।
सावधान हो कर करें, यह रीत जो तात" ॥3885 क
नाथ से पूछा साध ने, "हो कैसे यह काम ।"
कहा नाथ "हे साध मम, यह बतलावें शाम ॥3885 ख

अब तो वेला बहुत विहाई, सायं को फिर आना भाइ ।

## दिन चालीसवां (40) सायं

सायं काल जब साधु आया, स्वामी जी उसको कथ पाया ।
"पूछी थी तुम ने जो बात, उत्तर सुनो उस का अब तात ।
जिह्वा लांबी करने हेत, जिह्वा छेदन भी अभिप्रेत ।

*क्रिया छेदन कठिन है भाई, इस की विधि इस विध है आई ।
तालुमूल को कर के शुद्ध, छुरिका ले जन बन प्रबुद्ध ।
बाल बराबर तन्तू काटे, काटे पर तब चूरण पाटे ।
नित्य मले चूरण को भाई, काटा तभी ठीक हो पाई ।

दो०—तन्तु कटा हि कटा रहे, क्षत ठीक हो जाई ।
सात दिनों के बाद फिर, यह करो मन लाई ॥3886 क
इस क्रिया को जो करे, छः मास प्रयन्त ।
जिह्वा लांबी होय तब, कहते योगी सन्त ॥3886 ख
क्रिया कठिन यह जानिये, गुरु बिन करे न कोय ।
गुरु बिन इसको जो करे, संशय मग में होय" ॥3886 ग
सुन नाथ की बात सब, कहा साध प्रवीण ।
"हे नाथ मैं दास तव, मैं तो आप अधीन ॥3886 घ

आप समक्ष सभी कर पाऊं, आज्ञा बिना न कदम उठाऊं ।
प्रभो बात इक मुझे बतायें, चूर्ण को हम कहां से पायें ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, इस का उत्तर भी लो जान ।
सेंधा नमक हरड़ लो भाई, चूर्ण करो पौडर बन जाई ।
छान छान कर करो बारीक, यही पौडर बस है यह ठीक ।"
कहा साध "हे सद्गुरु देव, मात्रा का भी दीजो भेव ।

---

* जिह्वा छेदन विधि—"सर्वप्रथम सात दिन प्रयन्त तालुमूल को गुरु के उपदेशानुसार घिस कर वहां का सब मल दूर करना चाहिए । फिर उत्तम धार वाले, शुद्ध चाकू से तालु मूल को एक बाल के बराबर काटे कटे हुए स्थान पर हरड़ और सैंधे नमक का चूर्ण बुरक दिया करे । सात दिन के पश्चात् पुनः बाल के बराबर काटना चाहिए । इस क्रम से प्रयत्न करते रहने पर जीभ का तालु के साथ का बन्धर कट जाएगा । इस प्रकार छः मास में जीभ बढ़ कर भौंहे के मध्य तक पहुंचने लगती है ।
इस प्रकार जिह्वा धीरे-धीरे ब्रहनरन्ध्र को भेद जाती है" योगकुण्डल्युपनिषद् से उद्धृत ।

कितना नमक हरड़ में होय, चूर्ण बने जो बहु शुद्ध सोय ।"
कहा नाथ "उसका परिमाण, स्वाद से ही तुम लेना जान ।
दो०—उतना नमक मिलाइये, प्रतीति उसकी होय ।
अधिक मात्रा न डालिये, स्वाद बिगाडे जोय" ॥3887
कहा साध "मिल पाया ज्ञान, यत्न करूंगा हे भगवान ।
तव अनुग्रह से हे मम नाथ, सफलता लागे गी मम हाथ ।
करो कृपा अब हे भगवान, अगली मुद्रा का दो ज्ञान ।"

## 3. तडागी मुद्रा

कहा नाथ "हे साध प्यारे, योग जिज्ञासु भाव तिहारे ।
तडागी मुद्रा लो अब जान, सुगम मुद्रा लो इस को जान ।
पेट सिकोडो भीतर भाई, जिस विध गढ़ा वहां बन जाई ।
इसे तड़ागी मुद्रा जान, पेट बने जब तडाग समान ।
अब तुम इस को कर दिखलाओ, पेट तडाग सम निज बनाओ ।"
दो०—यत्न किया तब साधने, गढा जिमि बन पाये ।
सफल भया न साध वह, कह नाथ से पाये ॥3888
"सुगम क्रिया न नाथ यह होय, यत्न करूं हो सिद्ध न सोय ।
पेट में गढा जिमि बन पाय, मुझे सुझाइये वही उपाय ।"
कहा नाथ "है सुगम उपाय, रेचक करो तभी हो पाय ।"
रेचक साधु जभी कर पाया, पेट सिकुड तब भीतर आया ।
कहा नाथ "अब करो अभ्यास, उथला ही तब चाले श्वास ।
इस क्रिया का काल बढाओ, इससे पूरण लाभ उठाओ ।"
पूछा साध "क्या लाभ विशेष, इस क्रिया से मिले हमेश ।"
कहा नाथ "यह है इस हेत, ग्रंथियों को यह करे सचेत ।

दो०—ग्रंथियों को सचेत यह, करे क्रिया यह साध ।
शिथिल यदि भयें, ग्रंथियां, उपजें रोग अगाध" ॥3889
कहा साध "हे नाथ बतायें, ग्रंथिन जो सचेत हो पायें ।
ग्रंथिन उन का स्राव जो होय, किस प्रयोग में आवे सोय ।"
स्वामी बोले "प्रश्न तिहारा, ज्ञान मिले उत्तर में न्यारा ।
उदर में ग्रंथियों का न अन्त, इस मुद्रा से लाभ बे अन्त ।
ग्रंथि एक तुम लेवो ज्ञान, जिस का महत्त्व अतीव महान ।
* 'मधुप ग्रंथि' उस को कह पायं, वह बिगडे मधु रोग हो जाय ।
सुन कर नाथ का स्पष्ट विचार, कहा साध 'हे जग करतार ।
जानूं मैं वह भयंकर रोग, मधु मेह कहते जिसको लोग ।
आज स्पष्ट मुझे हो पाया, उसका कारण आप बताया ।
दो०—नित्य करूंगा नाथ जी, मैं यह मुद्रा देव ।
आजीवन जिमि रह सकूं, बिन औषध की सेव ॥3890
मुद्रन का हे नाथ ज्ञान, इस में गुप्त रहस्य महान ।
अगली मुद्रा अब बतलायें, उस का ज्ञान अविलंब करायें ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, दीर्घ काल अब हुआ लो जान ।
कल प्रातः जब आओ भाई, मुद्रा और सुनो मन लाई ।
स्वामी इतना कह उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

---

* मधुप ग्रंथि—Pancreas

Pancrease lies transversely across the posterior wall of the abdomen, varying in length from 6 to 8 inches having a Breadth of about 1 1/2 inch and a thickness of from 1/2 inch to 1 inch. Its usual weight is about 3 oz. The head of the Pancreas lies in the concavity of the duodenum. Its endorine secretion (insulin) is important in the metabolisim of sugar in the body. The failure to secret sufficient amount of insulin causes diabetes.

## दिन इकतालीसवां (41) प्रातः

### 4. मांडूकी मुद्रा

प्रातः काल जब साधु आया, उसे नाथ जी पास बिठाया ।
और कहा "हे साध ज्ञानी, मुद्रा जो जो तुम ने जानी ।
उन के नाम बतलाओ साध, क्या तुम ने वे लीन आराध ।
अगली मुद्रा का अभ्यास, कराऊं फिर मैं सह विश्वास ।"

दो०—आज्ञा मानी साध ने, कीने नाम बखान ।
तीनों का ही ज्ञान था, कीना गुरु प्रदान ।।3891

कहा नाथ "मैं तुझे बताऊं, मांडूक मुद्रा अब सिखाऊं ।
जिह्वा जिमि मांडूक चलाये, जिह्वा मूल तिमि जन घुमाये ।
* 'जिह्वा ग्रंथियां' हो सचेत, भोजन उन से रस है लेत ।
पर्याप्त रस की मात्रा होय, पाचन क्रिया सुन्दर होय ।
* 'स्वाद ग्रंथियां' भी हों सचेत, स्वाद बढ़े जो हो अभिप्रेत ।
यह क्रिया तू सुगम ही जान, अभ्यास करो व लो पहचान ।
यह क्रिया है बहु गुण कारी, इससे स्वास्थ्य लाभ हो भारी ।
बैठो, यह क्रिया कर पाओ, अपना अनुभव हमें बताओ ।

---

* जिह्वा ग्रंथियां—Silvery glands When food is eaten the silvery glands produce secretions that are mixed with the food. The silva breaks down starches into destrin and malton, disolves solid food to make it susceptible to the action of later intestinal secretions, stimulates secretions of digestive enezymes and lubricates the mouth and esophyagus for the passage of solids.

* स्वाद ग्रंथियां—Taste buds

The tongue serves as an organ of taste with taste buds scattered over the surface and concentrated towards the bcak of the tongue.

The buds are located on the surface and sides of the tongue, the root of the mouth and the entrance of Pharynx.

दो०—साधु बैठा जाय कर, लगा करन अभ्यास ।
गुरु चरणि फिर आयकर, कीनी उस अरदास ॥3892
"हे नाथ जो आप सिखलायी, वह क्रिया है मैं कर पायी ।
प्राप्त किया कुछ स्वाद विशेष, चित्त भया है सुखी निशेष ।
ज्ञान समुदर आप महाराज, सुख पाया मैं आप से आज ।"
कहा नाथ "हे ~~साथ~~ साध प्यारे, साधन यौगिक सुखमय सारे ।
उन साधन को जो कर पाये, जीवन अपना सफल बनाये ।
अब तुझे मैं और बतलाऊं, अगला साधन मैं सिखलाऊं ।

## 5. अश्विनी मुद्रा

अगली मुद्रा जो है भाई, जन गण को वह बहु सुख दाई ।
*योग अश्व का है अपनाया, क्षुद्र जीव से बहु कुछ पाया ।
दो०—ऋषियों की सुमहानता, देखो मेरे मीत ।
ज्ञान जहां से भी मिला, ग्रहण किया सप्रीत ॥3893
नाली गिरा भी स्वर्ण उठायें, पशुओं से भी ज्ञान ले पायें ।
यही आदर्श पालन हारे, नीति निपुण थे ऋषि मुनि सारे ।
घोड़ा जिमि निज गुदा चलाये, अश्विनी मुद्रा वह कहाये ।
इस मुद्रा का कर अभ्यास, स्वास्थ्य लाभ तुम पाओ खास ।"
कहा साध "हे दीना नाथ, कुछ पूछूं मैं इस के साथ ।
मुद्रा की विधि फिर समझायें, गुण भी उस का मुझे बतायें ।"
स्वामी बोले "साध सुजान, सुनो विधि तुम ला कर ध्यान ।

*अश्व—घोड़ा

आसन में तुम बैठ के साध, इस को तुम इस विधि आराध ।
गुदा मार्ग को प्रथम सिकोड़, दो बाहिर को फिर तुम मोड़ ।
दो०—बार बार ही इस विध, करते जाओ मीत ।
सरल होय अभ्यास से, इस साधन की रीत ॥3894
इस का गुण तुम लो अब जान, सरल रीत से करूं बखान ।
जन जब भोजन को है खाता, उस का रस पच तन में जाता ।
शेष बचे सो मल कहलाये, बड़ी आंत में वह चलि जाये ।
*बड़ी आंत का कारज जानो, मल को बहिर फैंकना मानो ।
वह दुर्बल न कहीं हो जाय, आश्विन मुद्रा जन कर पाय ।
यदि नहीं मल का होय निकास, देह में रोग लगें बहु खास ।
अश्विनी मुद्रा का अभ्यास, स्वस्थ रहने की कुञ्जी खास ।
दुर्बल आंत होय यह भाई, देह सकल दुर्बल हो जाई ।
दो०—देह सशक्त न हो सके, हो दुर्बल जो आंत ।
मुद्रा के अभ्यास से, ग्राहवे शक्ति आंत" ॥3895
सुन कर नाथ का यह उपदेश, कहा साध ने "हे हृदयेश ।
रहस की बात आप बताई, सुनने में जो कभी न आई ।
बड़ी आंत का महत्त्व भारी, आश्विन मुद्रा बहु गुणकारी ।
बड़ी आंत करे यह ही काम, करती वा कुछ और भी काम ।
यह प्रश्न मेरे मन आया, स्पष्ट करो इस को कर दाया ।"
कहा नाथ "प्रश्न जो कीना, बात गूढ़ को तुम है चीह्ना ।

---

* बड़ी आंत—Colon. The large intestine or colon does not have a digestive function, it serves to store undigested food residues for evacuation.

मैं बतलाऊं अब वह बात, कार्य इक बड़ी आंत का तात ।
बड़ी आंत स्वस्थ होय जब, मल का तरल वह सोखती तब ।
*दुर्बलता जब उस में आये, देह से मल तरल बह जाये ।
दो०—यह तो रोग विशेष इक, अतिसार कहलाये ।
अश्विनी मुद्रा को कर, बच रोग से पाये ॥3896
कहा साध "हे गुरु महाराज, ज्ञान अनोखा पाया आज ।
बहु उपकारी मुद्रा जानूं, नित्य करूं व लाभ को पा लूं ।
अगली मुद्रा कथिये नाथ, ज्ञान मिले उस का भी साथ ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, आना सायं फिर इस द्वारे ।
अब तो भया है सायं काल", यह कह उठ गये दीन दयाल ।

## दिन इकतालीसवां (41) सायं

## (6) काकी मुद्रा

सायं भयी साध चलि आया, आय नाथ को शीश झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, काकी मुद्रा का दूं ज्ञान ।
काकी मुद्रा बहु गुणकारी, विधि बतलाऊं उस की सारी ।
दो०—काक चञ्चु सम ओष्ठ को, कर के सहज सुभाय ।
खींचे मुख से पवन को, भर उदर में जाय ॥3897 क
रोके उस को कुछ क्षण, मुख से देय निकार ।
पुनः भरे इस रीत से, कर लें बारं बार ॥3897 ख

*The colon converts the liquid contents from the small intestines into a solid focal mass. In the process 7.50 to 10.50% oz of water are absorbed daily.

हे साधो तुम यह कर देखो, अपना अनुभव आय उलेखो ।"
साधु गुरु आदेश को पाय, जा बैठा इक ओर को जाय ।
कीना उस जिमि नाथ बताया, पुनः लौट प्रभु चरणि आया ।
कहन लगा "हे नाथ दयाल, कीना मैं तव आज्ञा पाल ।
समझ लीना मैं तव उपदेश, सुगम मुद्रा यह है हृदयेश ।
इस मुद्रा का गुण बतलायें, मम जिज्ञासा शांत करायें ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, इस मुद्रा के गुण हैं भारे ।
उदर में वायु जब जा पावे, आमाशय तव शक्ति ग्राहवे ।
*आमाशय से जो रस स्राय, देह को पुष्ट वही कर पाय ।

दो०—अमृत रस आमाशय का, करता पाचन अन्न ।
मिले रक्त में जाय जब, दृढ़ भये तब तन ॥3898 क
काकी मुद्रा नित कर, हे साध प्रवीण ।
आमाशय जब स्वस्थ हो, देह न होवे क्षीण ॥3898 ख

## 7. भुजंगिनी मुद्रा

अगली मुद्रा अब लो जान, भुजंगिन जिस का है अभिधान ।
भुजंग सांप को कहते लोग, उसी से सीखा है यह योग ।
जीव भयंकर जानें जोय, मीत योगी का वह भी होय ।
शिव सांप को गले लिपटाये, यही सीख जग को दे पाये ।

---

* आमाशयरस—Gastrin.

Gastrine—The harmones produced by one part of the lining of the stomach and is released into the blood by nerve impulses that are initiated by tasting food or by the presence of the food in the stomach.

In the stomach gastrine stimulates the secretions of pepsin, a protein splitting enzyme, and hydrochloric acid and stimulates contractions of the stomach wall.

यह मुद्रा इस विध कर पाओ, मुख को खोल बैठ तुम जाओ ।
गले से वायु भीतर जाये, निकल वहीं से बाहिर आये ।
बार बार हे साध सुजान, चलत रहे तव इस विध प्राण ।
करो इसे एकांत में जाय, कहो निज अनुभव तुम फिर आय ।"

दो०—गया साध एकांत में, मुख को खोल विशाल ।
पीन लगा वह पवन को, गुरु आज्ञा को पाल ।।3899

जब उठा वह गुरु ढिंग आया, अपना सब उस हाल सुनाया ।
"क्रिया सुगम यह है महाराज, इसके लाभ भी कथ दो आज ।"
इस विध कथ वह चुप हो पाया, तभी नाथ निज वचन सुनाया ।
"हे साधो इस के गुण भारी, नित करो और रहो सुखारी ।
*आमाशय को सबल बनाये, तिली जिगर व शुद्ध रह पाये ।
वायु शुद्ध अन्तर को करती, वायु दोष मेदे के हरती ।
वायु जिगर को करे सचेत, लाभ जिस का बहु तन के हेत ।
जिगर का रस अमृत का सार, जिस में शक्ति है भरी अपार ।

दो०—जब तक जिगर स्वस्थ है, स्वस्थ देह रह पाय ।
इस मुद्रा के कारणे, जिगरी दोष न आय ।।3900 क

---

* जिगर—Liver—Liver is the largest inernal organ in the body. Blood passes through the liver at a rate of 3 pints per minute. At any instant liver contain about 10 per cent of all the blood in the body. It also carries blood from the pancereas and spleen.

The liver cells help the blood to assimilate food substances and excerte waste materials, toxins and such other hormones.

The liver is the most versatile organ. It stores sugar and glycogen, iron, copper vitamin A, many of the vitamin B complexes and vitamin D.

The liver removes foreign substances and bacteria from the blood, the liver also detoxifies many drugs.

The activities of the liver generate a great deal of the heat, making the organ as important factor in body temperature.

दो०—जिगर प्रहरी देह का, रक्षा करे ज़रूर ।
इस मुद्रा के कारणे, दोष बहुत हों दूर ॥3900 ख

कार्य अनेक जिगर कर पाय, अन्न पाचन में बने सहाय ।
रुधिर का शोधन भी कर पाय, पौष्टिक तत्व अनेक बनाय ।
भुजंगिनी मुद्रा करो हमेश, आये न इस में कुछ भी दोष ।
जिगर है शक्ति का भण्डार, मुद्रा रखती जिसे संभार ।"
सुनी साध ने सारी बात, और कहा "हे जग के त्रात ।
महत्व जिगर का हे गुरु देव, जाना मैं रह आप की सेव ।
अपने मन का एक सवाल, पूछूं आप से दीन दयाल ।
स्वस्थ जिगर को रखने हेत, साधन और कौन अभिप्रेत ।

दो०—इस मुद्रा के साथ जो, हों कुछ साधन और ।
वे भी नाथ बतायें, कर पाऊं इस ठौर" ॥3901

कहा नाथ "हे साध सुजान, है वेला अब बहुत विहान ।
कल प्रात जब आओ तात, स्पष्ट बताऊं तब यह बात ।"
इस विध बोल नाथ उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन बतालीसवां (42) प्रातः

भयी प्रातः साध चलि आया, सद्गुरु को आ माथ झुकाया ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, प्रश्न का उत्तर लो अब जान ।
योगी करत न साधन एक, करत क्रिया वह नित्य अनेक ।
क्रिया अन्य भी ऐसी जानो, प्रभाव उन का भी तुम मानो ।
वमन, नौली और अग्निसार, इन का लाभ भी बहु प्रकार ।

दो०—वारिसार जो करत है, साधो हे सुजान ।
स्वस्थ जिगर उस का रहे, सत्य बात यह जान" ॥3902
सुन कर नाथ की ऐसी बात, साध बोला "हे जग के त्रात ।
उत्तर मिल पाया हे देव, साधन करूं मैं रह तव सेव ।
भुजंगिन मुद्रा का गुण जान, जानना चाहूं अब भगवान ।
इस से लाभ जिगर को होय, क्या अन्य अंग न लाभ विगोय ।"
कहा नाथ "हे साध महान, तव जिज्ञासा को मैं जान ।
बात बताऊं गुप्त जो मीत, जग को जिस की नहीं प्रतीत ।
*गल ग्रंथी जो गल के बीच, उस को भी हो लाभ समीच ।
गल ग्रंथी महत्त्व का अंग, बिगड़े वह जन भये अपंग ।
दो०—ग्रंथी इस का लाभ बहु, है तन को मम मीत ।
स्वस्थ रहे नहीं यह यदि, भये काल विपरीत ॥3903 क
ग्रंथी इस के हेत भी, यह मुद्रा बहु ठीक ।
नित्य करत अभ्यास जो, रहत सदा निर्भीक ॥3903 ख
ग्रंथी में विगाड़ जो आय, और न रस तन को मिल पाय ।

---

* गल ग्रंथी—Thyroid Gland.

Thyroid gland is located in front of and on each side of the thyroid cartilage of the Larynxe. It secretes a Horomone that controls metabolism is adult and young. The hormone is an important factor in the growth and development of young. It is a brownish red organ having two lobes connected by an isthmus. It normally weighs about 10 oz. It holds about 25% of the total iodine in the body. Thyroid hormone is released from the gland directly into the blood stream.

Deficiency of secretion of the thyroid gland results in a number of abnormalities such as lethargy, decreased activity and goiter.

The hormone of the thyroid gland stimulates general metabolism, it also increases the sensibility of various organs, especially the central nervous system and has a pronounced effect in the chage from infantile to adult form.

बौना बौना जन रह पाय, दुर्बलता उस देह में आय ।
गिल्लड इक है रोग शैतान, हो जब जन को करत हैरान ।
यह मुद्रा जो करे सदाई, हो न उस को गिल्लड भाई ।"
सुन कर नाथ की सारी बात, बोला साध "हे जग के त्रात ।
मुद्रा यह जो बहु उपयोगी, नित्य करे जन होय न रोगी ।
कई रोगों से यह बचाये, अंग बहु यह शुद्ध कर पाय ।
एक अंग था आप बताया, तिली नाम जिस का कथ पाया ।
हो उस पर भी इस का प्रभाव, तव मुख से मैं सुने थे भाव ।
स्थित कहां वह अंग गुरुदेव, उस का भी सुन पायें भेव ।

दो०—ज्ञान तिली का भी प्रभो, प्राप्त करूं गुरुदेव ।
इस मुद्रा के कारणे, लाभ तिली जो लेव" ॥3904

सुन कर बात नाथ कह दीन, "प्रश्न यह सुन्दर तुम ने कीन ।
*मुद्रा से तिली लाभ विगोय, संदेह करे न इस में कोय ।
तिली एक ग्रंथी है भाई, जिस की स्थिति उदर में आई ।
रोग युक्त जब यह हो जाये, बढ़ कर बहु ही दुख दे पाये ।
इसको स्वस्थ राखने हेत, मुद्रा यह सदैव अभिप्रेत ।
जन इस अंग को राखे शुद्ध, करे भुजंगिनी हो प्रबुद्ध ।
हे साधो अब तुझे बताऊं, अगली मुद्रा मैं समझाऊ ।"

---

* तिली—Spleen—Spleen is a flattened ablong gland like organ about 5 inches long, 3 to 4 inches wide and upto 1 1/3 inch thick, weighing about 7 oz situated in the upper left abdominal cavity. It is in contact with the pancreas, the diaphragm, the left kidney and the colon. In the unborn child its function primarily is to create blood cells, a function that ceases after birth. The spleen removes from the blood stream disease producing organism and worn out red blood cells, and stores the iron for later use in the blood. It produces antibodies against various disease organism and manufactures a variety of blood cells.
Many diseases affect the spleen, the spleen enlarges some times to enormous size.

## 8. मातंगिनी मुद्रा

वह मातंगिनी मुद्रा भाई, जन को हाथी ने सिखलाई ।
दो०—हाथी जिस विध करत है, नास से जल पान ।
मनुज ने उस से सीखा, योग का यह विधान ॥3905क
नासा से जल पान कर, मुंह से दे निकाल ।
मुख से जल फिर पीयकर, नाक से दे निकाल ॥3905ख
मातंगिन मुद्रा यह कहाय, जो करे सो बहु सुख पाय ।
नाक गले के रोग अनेक, पास न आयें साध के एक ।
1. *नासिका ग्रंथियां हों सचेत, उपयोगी जो श्वास के हेत ।
स्वस्थ रहें वे इस प्रकार, रुग्न भयें जन भये खवार ।
दूभर लेना होत श्वास, इस से बढ़ कर दुख क्या खास ।
2. * ग्रीवा ग्रंथियां भी लो जान, गले में उन का भी है स्थान ।
परहेज यदि न जन कर पाये, सूजन इन में तब आ जाये ।

---

1. नासिका ग्रंथियां—Adenoids. The adenoids are not visible to ordinary nspection. They lie in the nasal part of the throat just where it ommunicates with the nose. If they are enlarged by cold the result will be lockage of the nose, and one becomes month breather.

2. ग्रीवा-ग्रंथियां—Tonsils. The tonsils are situated in the throat and when nlarged can readily be seen by inspection through the mouth, where they ppear between the arches formed on each side by the back of the palate nd the throat.

he tonsils are full of small depressions or pits (openings) known as cryfits. he crypts are lined with mucous memberane of a delicate type. There is ecretism, which to some extent, helps to lubricate the throat. When epeated colds and inflammatim affect the tonsils and surrounding tissues, hese crypts frequently become inuaded by Bacteria. Then they have ecame infected the crypts furnish a partlenlarly adventages location for he multi plication of bacteria. They, in this case, not only became Become on-functioning bodies, but become a menance to health.

खान पान का राखे ध्यान, इस मुद्रा को करे पुमान ।

दो०—ग्रीवा की जो ग्रंथियां, रहें स्वस्थ तब मीत ।

इस मुद्रा को जन करे, चले योग की रीत ॥3906

पाले न जो योग की रीत, मुद्रा से न जिसकी प्रीत ।

वह जन रोग युक्त रह पाये, और न सुखी कभी हो पाये ।

सायं को जब मैं मिल पाऊं, विस्तार सहित सब बात बताऊं ।

स्वामी जी यह कह उठ पाये, अपने कक्ष में तब सिधाये ।

## दिन बतालीसवां (42) सायं

सायं काल साध चलि आया, नाथ की चरणि शीश झुकाया ।

कहा नाथ जी "साध प्यारे, सुन अब मुद्रा के गुण भारे ।

नित्य मुद्रा न यदि कर पायें, ग्रंथिन तभी रुग्न हो जायें ।

तब उपद्रव भयें बहु भारी, श्रवण करो जो लगत बिमारी ।

दो०—विष उपजे जो रोग से, मिले रुधिर जब जाय ।

बहुत व्याधिन तब लगें, को गिनती कर पाय ॥3907

*आमाशय को यही बिगाड़े, पित्ताशय रोगी कर डारे ।

*जोड़ों में पीडा का आना, उसका कारण यही बखाना ।

हृदय के कई रोग लो जान, इसी कारण से वे उपजान ।

फेफड़ों के भी रोग महान, कारण इसी से उपजे जान ।

बहु रोगों से वह बच पाये, जो जन मुद्रा यह अपनाये ।

---

आमाशय = stomach. पित्ताशय = gall bladder

One who has infected tonsils is likely to have infection of gall-bladder on the appendix. The bacteria and their products in the tonsils may enter the blood stream. Such on invasion results in a general poisoning of the systen which manifests in various ways as arthritis, rheumatism ite.

## 9. विपरीतकरी मुद्रा

अगली मुद्रा मैं कथ पाऊं, विधि उस की और गुण बतलाऊं ।
सुनो विपरीतकरी है नाम, बहु गुणों की जो है धाम ।
हाथों में जन शीश टिकाये, गगन मध्य पग को ले जाये ।
दो० — खड़ा जभी सर पर भये, उलटा देह लखाय ।
विपरीतकरी यह मुद्रा, जग विख्यात कहाय ।।3908
विपरीतकरी मुद्रा लो जान, इसमें भरा है गुण महान ।
सब अंगों पर होय प्रभाव, सिर पर इसका विशेष दवाव ।
*मूर्धा ग्रंथी को तुम जानो, विशेष लाभ उसी से मानो ।
सब ग्रंथिन जो तन में लीन, मूर्धा ग्रंथी के आधीन ।
गुरु की आज्ञा के अनुसार, मुद्रा जन लेय आधार ।
1.* रहे न फिर कुछ देह में दोष, जन के स्वस्थ रहें अण्डकोष ।
2.* इक गुण इस का और लो जान, गुर्दों पर प्रभाव लो मान ।
वायु दोष नहीं बाधक होय, हर अंग करे निज कार्य जोय ।
दो० — सकल देह के हेत ही, मुद्रा लो यह जान ।
गुरु आज्ञा से नित्य कर, स्वस्थ रहे इन्सान ।।3909

---

* मूर्धा ग्रंथी—Pituitary gland. The harmones secreted by the Pituitary gland stimulate and control the functioning of almost all the other endo-crine glands in the body.

* 1. अण्डकोष—gonads, testes. Gonach house germ cells which later develop into male gametes spermatozoa. The organs under the influence of the Pituitary gland produce a hormones controlling sexual development and various processes of reproduction.

* 2. गुर्दे—Kindy. Pair of glands whose function is elaboration and excretion of urine. They are situated in the region of the loins, one on each side of the spine. The average length of kidney is slightly more than 4 inches and the usual weight is four 4 to 6 ozes.

हे साधो मैं ने कथ पायीं, नव मुद्रा तुम को बतलाईं ।
प्रथम वर्ग इस को लो जान, द्वितीय वर्ग को अब पहचान ।
इस में मुद्रा तेरह जानो, अब उन का स्वरूप पहचानो ।
साधन सब ये प्राण के हेत, होवे कुण्डली सुप्त सचेत ।
ये मुद्रा वह ही कर पाये, मन को भी जो वश में लाये ।
मन बिना नहीं सधते प्राण, साधो न यह भूलना ज्ञान ।
प्राण रहें जहां, मन रह पाय, मन रहे, तहां प्राण समाय ।
इस ज्ञान को भूले जोय, सिद्ध न उसकी मुद्रा होय ।

दो०—मुद्रा करनी आन कर, कल प्रात हे मीत ।
अब तो है बिलंब भया, उठने का है चीत" ।।3910

## दिन त्रितालीसवां (43) प्रातः

प्रातः काल जब साधु आया, स्वामी जी ने पास बिठाया ।
और कहा "हे साध प्रवीण, आज सीखो गे ज्ञान नवीन ।
योग का यह विशेष है अंग, जिस में कुण्डलिनी का प्रसंग ।
ये मुद्रा जो जन कर पाये, वह तो सिद्ध पुरुष हो जाये ।

### 1. महामुद्रा

महामुद्रा का करूं बखान, सीखो उस को ला कर ध्यान ।
इस मुद्रा को जब कर पाओ, मेरु दण्ड में हरकत पाओ ।
जहां सब नाडिन का है वास, प्राण शक्ति का वहां अधिवास ।
दीर्घकाल जो यह कर पाये, वह ही इस से लाभ उठाये ।

दो०—वाम एडी गुद मूल पर, दृढ़ कर लावे साध ।
दायीं टांग फैलाय कर, पग पकड़े निर्बाध ॥3911 क
गर्दन को संकोच कर, मध्य भवों को देख ।
'महा मुद्रा' अभिधान है, योगी करें उल्लेख ॥3911 ख
इस मुद्रा को कर दिखलाओ, अनुभव अपना आय बतलाओ ।"
बैठा साध तब जाय एकांत, मुद्रा कीनी उस हो शांत ।
सद्गुरु पास तभी चलि आया, और निवेदन वह कर पाया ।
"यह मुद्रा जो आप बताई, मैं अनुभूति अद्भुत पाई ।
प्राणों में कुछ हलचल पाया, चित्त एकाग्र भी हो पाया ।
इक कठिनाई मैने जानी, कठिन टिकानी दृष्टि मानी ।
इसकी रीत सरल बतलायें, सुखपूर्वक हम जो कर पायें ।"
सुनी नाथ उसकी कठिनाई, लागे कहन "सुनो मम भाई ।
दो०—थक जायें ज़ब दृष्टि तव, लो मूंद तुम आंख ।
दे उन्हें विश्राम कुछ, खोल पुनः लो आंख ॥3912
इस विध करत रहो अभ्यास, सिद्धि मिलेगी तब ही खास ।
अगली मुद्रा अब बतलाऊं, महा बंध जिस को कथ पाऊं ।

## 2. महा बंध

सिद्धासन में बैठो साध, मूल बंध तब लो आराध ।
गुदायोनी संकोच कराय, अपान वायु ऊर्ध्व उठ पाय ।
मिले अपान समान के मांहि, योगी प्राण अधो मुख लाहिं ।
प्राण अपान समान जो तीन, एकाग्र करे योगी तल्लीन ।

महा बंध यह बंध कहावे, ऊर्ध्व रेता योगी बन पावे" ।*
सुना नाथ से वर्णन सारा, साध नाथ से वचन उचारा ।
"हे नाथ यह प्राण की बात, स्पष्ट नहीं भयी जगत त्रात ।

दो०—सरल रूप से हे प्रभो, अब समझायें देव ।
मूढ मति मैं शिष्य तव, रहूं सदा तव सेव ।।3913

अपान समान किमि मिल पायें, स्पष्ट बात यह प्रभु कर पायें ।"
सुनी जब साधु की जिज्ञास, कहा नाथ ला मुख पै हास ।
"वायु को जन प्राण लें मान, इस विध भ्रम को मन में लान ।
2. * प्राण नाडियां प्राण कहायें, मूल बंध से ऊर्ध्व खिच पायें ।
जालंधर से गति नीचे खास, नाभि में है समान का वास ।
इस विध तीनों नाभि समायें, महा बंध इस विध कर पायें ।
इस का करे जो नित अभ्यास, सिद्धि मिले तभी उसको खास ।
सरल बात तुम लो यही जान, यह अभ्यास बंधों का मान ।

दो०—तीनों बंध लगाय कर, बैठ पाय जब साध ।
दीर्घ काल अभ्यास से, ले मुद्रा आराध ।।3914

हे साधो तुम को बतलाया, महा बंध का ज्ञान कराया ।
इस का करना दृढ़ अभ्यास, दीर्घ काल तुम सह विश्वास ।
अगली मुद्रा का आधार, जान लो इस को हर प्रकार ।
इस को सिद्ध न जो कर पाये, सिद्धि मुद्राओं में न पाये ।"
सुन नाथ की स्पष्ट यह वाणी, कहा साध "हे सद्गुरु दानी ।

* 1. उर्ध्वरेता होना—वीर्य (रेता) का पतन न होना । उसका नस नाडियों में समाना और उस का रुधिर में विलय होना । वीर्य का रुधिर में विलय होने से देह में शक्ति का संचार होना ।

* 2. प्राणनाडियां—Nerves.

दृढ़ अभ्यास की कथ दी बात, अब बतलायें हे जगत्रात ।
कितना काल न्यूनतम होय, सिद्ध मुद्रा जन जाने सोय ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, उत्तर इस का भी लो जान ।
*दो घड़ी तक बैठ दिखलाओ, सिद्ध भया तब जानन पाओ ।
दो० — चार काल अभ्यास तुम, करना मेरे भाई ।
प्रातः सायं व मध्याह्न, रात्रि को मन लाई ।।3915
अब जाओ तुम मेरे मीत, उठने का है अब मम चीत ।
सायंकाल जभी चलि आओ, अगला ज्ञान तभी सुन पाओ ।"

## दिन त्रितालीसवां (43) सायं

सायं काल जब साधु आया, उसे नाथ जी पास बिठाया ।
और पूछा "हे साध सुजान, था दीन महाबंध का ज्ञान ।
क्या तुम उस को कर के देखा, और उस का क्या गुण उलेखा ।"
कहा साध "हे मम महाराज, समय कुछ बैठा था मैं आज ।
यह मुद्रा न सुगम है नाथ, बिन कृपा सिद्धि न लागे हाथ ।"
नाथ कहा "जो करत अभ्यास, प्रभु की दया पर रख विश्वास ।
सिद्धि पाये बिन लागे देर, करो साधन नित सांझ सवेर ।
दो० — महाबंध जब सिद्ध हो, महावेध तब होय ।
महाबंध के बिना, कर सके नहीं कोय ।।3916

## (3) महाबेध

महाबेध मुद्रा लो जान, मुद्राओं में जो है प्रधान ।
इस की विधि को लो सुन पाओ, तत्काल इसे न तुम कर पाओ ।

---

* घड़ी—एक दिन (24 घंटे) में 64 घड़ियां होती हैं ।

महाबंध जब सिद्ध हो जाय, इस को करना फिर चित्त लाय ।
महाबंध में बैठ के मीत, उड्डियान करो इकाग्र चीत ।
मूलाधार में ध्यान जमाय, सनसनाहट वहां हो पाय ।
मन उस में इस विध रम पाय, उठने का न चित्त में आय ।
दीर्घकाल अभ्यास कर नित्त, रमता ध्यान में जन का चित्त ।
प्राण व मन का होय संयोग, प्राप्त करत जन उत्तम योग ।
कुण्डलिनी शक्ति का इस्थान, दीर्घ काल टिके वहां ध्यान ।

दो०—दीर्घ काल अभ्यास से, नाड़िन चेतन होयं ।
कुण्डली को हि जानिये, उत्तम नाड़ी सोय" ।।3917

सुन कर सद्गुरु का उपदेश, कहा साध ने "हे हृदयेश ।
उत्तम नाडी जो बतलाई, कुण्डली कथ आप जो पाई ।
उस का भी प्रभो दीजो ज्ञान, उस का कारज क्या भगवान ।"
सुन कर नाथ साध की वाणी, सद्गुरु बोले जग कल्याणी ।
"हे साधो जो प्रश्न तुम कीन, मैं बतलाऊं ज्ञान नवीन ।
मेरुदण्ड है सब घट माहीं, शक्ति का वह स्रोत कहाहीं ।
उस का उर्ध्व शीर्ष सहस्त्रार, नीचे का है मूलाधार ।
ऊर्ध्व शीर्ष से जग का ज्ञान, अधः सिरा है कुण्डली स्थान ।
उस में चेतनता जब आये, अध्यात्म पथ तभी खुल पाये ।

दो०—बिन मुद्रा न चेतनता, होय योग के हेत ।
जीवन भर वह सो रहे, मूलाधार अचेत ।।3918

महाबेध मुद्रा कर पाओ, चेतनता कुण्डली में लाओ ।
कुण्डली हो जब चेतन भाई, अन्तर्मुख तब मन हो जाई ।

एकाग्र वृत्ति जन की होय, ज्ञान अध्यात्म पावे सोय ।
दीर्घ काल जो करे अभ्यास, ज्ञान पावे अध्यात्म खास ।
इस रहस्य को योगी जाने, अन्य पुरुष न इसे पहचाने ।

## (4) योनि मुद्रा

इस से अगली मुद्रा जानो, योनि मुद्रा नाम पहचानो ।
इस से कुण्डली का विकास, ऊर्ध्व चक्रों में हो प्रकाश ।
इस की विधि मैं करूं बखान, सुनना ला कर तुम बहु ध्यान ।
दो०—योनि मुद्रा अब सुनो, मुद्रों में सरदार ।
विधि पूर्वक जो यह करे, गहे योग का सार" ॥3919
तभी साधु ने वचन उचारे, "सुने नाथ दिव कथन तिहारे ।
चक्रों का जो वर्णन कीन, वह कथी प्रभो बात नवीन ।
कुण्डली का उन में प्रकाश, यह प्रसंग तो दीखे खास ।
कर किरपा यह भी समझावें, जड़मति शिष्य का भ्रम मिटावें ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, कुण्डली का तुम पाया ज्ञान ।
अब तुम समझो मेरे मीत, सुषुम्ना की कुण्डली से प्रीत ।
दोनों का संबंध सनातन, रहस्य योग का यह पुरातन ।
योगियों ने कर के पहचान, जग को दीना अनोखा ज्ञान ।
दो०—कुण्डली चेतन जब भये, सुषुम्ना में प्रचण्ड ।
विद्युत की एक धार सी, बहे मेरु के दण्ड ॥3820 क
मेरु मध्य छः चक्र हैं, प्राण शक्ति के साध ।
जगमग उन में ज्योति हो, योग जभी लें साध ॥3920 ख

दो०—और यदि कुछ पूछना, चाहो मेरे मीत ।
कल प्रातः आओ जब, तुम पूछो सप्रीत" ।।3920 ग
इतना बोल नाथ उठ पाये, वे अपने तब कक्ष सिधाये ।

दिन चतालीसवां (44) प्रातः

भयी प्रातः नाथ उठ पाये, प्रभु दर्शन कर मन हर्षाये ।
इतने में वही साधु आया, कर दण्डौत बैठ वह पाया ।
बोला तब वह "हे महाराज, फिर समझूं मैं आप से आज ।
योनी मुद्रा किमि कर पायें, जिस से लाभ सकल हम पायें ।
सरल रूप से सब बतलायें, संग नाथ अभ्यास करायें ।"
बोले स्वामी "साध प्यारे, रहस योग के अद्‌भुत सारे ।
देह देह का करत उद्धार, प्राण से प्राणों का उपकार ।
मन ही मन का करत निरोध, आत्मा से हो आत्म बोध ।
योनी मुद्रा को आराध, रहस्य मिलें ये तुम को साध ।
दो०—योनि मुद्रा साध लो, जिमि तुम्हें दूं ज्ञान ।
आनन्द की हो प्राप्ति, पाप ताप से त्राण ।।3921 क
सिद्धासन में बैठ कर, लेवे योगी साध ।
इस मुद्रा को इस विध, जिस विध आये न बाध ।।3921 ख
दाब अंगूठों से निज कान, मध्यमा से तब अपने प्राण ।
तर्जनी से निज नयन दबावे, अंगुल अन्य मुख पर रह पावे ।
पूरक कर भरे निज प्राण, उसे मिलावें संग अपान ।
षट्‌चक्रन का क्रम से ध्यान, योगी करे मन श्रद्धा आन ।

गुरुमन्त्र से शक्ति जगावे, सुप्त कुण्डलिनी जो कहावे ।
हे साधो तुम बैठ दिखाओ, इस मुद्रा में जिमि सुन पाओ ।"
साधु ने आदेश को पाया, सिद्धासन में बैठ दिखाया ।
हाथों से निज अंग दबाये, जिमि थे स्वामी जी समझाये ।
दो०—पूरक कीना नाक से, भीतर भरे प्राण ।
जान पाया न मिलें किमि, संग प्राण अपान ।।3922
उस ने तब मुद्रा को त्यागा, और नाथ से पूछन लागा ।
"सद्गुरो मुझको यह बतायें, प्राण अपान को किमि मिलायें ।
यह तो असमंजस की बात, प्राण न मेरे वश में तात ।"
समझ साध की यह कठिनाई, नाथ जी उस को विधि बताई ।
"कुंभक कर लो जब तुम मीत, जालंधर बंध करो सपरीत ।
मूल बंध तुम तभी लगाना, मूलाधार में मन टिकाना ।
दीर्घ काल जब नित कर पाओ, नाडिन में बहु हल चल पाओ ।
सुप्त कुण्डली भये सचेत, मिले दिव्य ज्ञान अभिप्रेत ।
दो०—जो भये अनुभूति तब, सके न वर्णन होय ।
जिह्वा जाने स्वाद जिमि, सके न कथ वह सोय ।।3923
इस मुद्रा को करते जाना, समय समय पर आ बतलाना ।
अगली मुद्रा अब कथ पायें, जिस को वज्रोणी बतलायें ।

## (5) वज्रोणि मुद्रा

वज्रोणि मुद्रा बहु बलदाय, करे वज्र सम जन की काय ।
हाथों पर नर देह टिकावे, पाओं को ऊपर कर पावे ।
शीर्ष मध्य में ऐसे लटके, जैसे बेल से फल इक सटके ।

वज्रोणि मुद्रा यह कहावे, वीर्य रक्षा नर की कर पावे ।
आयु की वृद्धि इस से होवे, महान शक्ति नर इस से गोवे ।
नाड़ियों की शक्ति बढ़ पावे, मन में बहु उत्साह समावे ।
दो०—इस मुद्रा को जो करे, प्राणवान हो जाय ।
प्राणों की शक्ति बढ़त, योग में हो सहाय ॥3924 क
इस मुद्रा में स्थित रह, कुछ जन करते ध्यान ।
षट्चक्रों की साधना, व कुण्डली उत्सान ॥3924 ख
हे साधो तुम कर दिखलाओ, इस मुद्रा में खड़ हो पाओ ।
करने पर ही मिलता ज्ञान, केवल श्रवण से न हो ज्ञान ।"
साध ने गुरु की आज्ञा मान, भुझों पर खड़ भया देह तान ।
कुछ ही क्षण वह सका वहां रुक, निवेदन किया उस गुरु पग झुक ।
"सुगम नाथ ! न मुद्रा जानूं, कठिन स्थिति इस में बहु मानूं ।
ध्यान तो इस में क्या हो पाय, गिरने का सदा भय सताय ।"
कहा स्वामी "हे साध सुजान, यही था देना तुझ को ज्ञान ।
इस को करो दिवार के साथ, टिके तो दृढ़ता से तब हाथ ।
दो०—स्थित रह संग दिवार के, इस मुद्रा में साध ।
ध्यान कुण्डली में धर, लो योग आराध ॥3925
इसको घर पर जा कर पाना, विलंब भया पुनः कल आना ।"
इस विध बोल नाथ उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन चतालीसवां (44) सायं

साधु सायंकाल चलि आया, निज अनुभव उस आ बतलाया ।
"वज्रोनि मुद्रा मैने कीन, दिवार का भी सहारा लीन ।

कठिन न लागा अब यह खास, नित्य करूंगा मैं अभ्यास ।"
कहा नाथ "हे साध प्यारे, हों कार्य अभ्यास से सारे ।
सुगम कार्य भी बिन अभ्यास, लागे वह तो कठिन ही खास ।
कठिन कार्य भी कर अभ्यास, लगता कठिन न वह कुछ खास ।
दो०—करत करत अभ्यास से, कठिनाई हो दूर ।
प्रभु भी कृपा करत तब, सिद्धि मिलत जरूर ॥3926

## (6) शक्ति चालिनी मुद्रा

अगली मुद्रा अब बतलाऊं, शक्ति चालिनी जो कथ पाऊं ।
मेरु दण्ड कुण्डली का वास, शक्ति वहीं जानो तुम खास ।
कुण्डलिनी शक्ति जो जगावे, शक्ति चालिनीं वही कहावे ।
इस के बिना न शक्ति जागे, अंधकार में नर मन पागे ।
शक्ति को तुम ज्योति जानो, कोटि सूरज सम पहचानो ।
कुण्डली का जब होत उत्थान, सूर्योदय भये अंतर मान ।
चेतन भी चैतन्यता पावे, परम कुशाग्र बुद्ध हो जावे ।
इस मुद्रा से उसे जगावो, सिद्धों में तुम पदवी पावो ।
दो०—हे साधो तुम जान लो, जब तक कुण्डली सुप्त ।
मानव से हि मानवता, रह पावे गी लुप्त ॥3927
कुण्डली पर देवी है साध, उसे ध्यान से तुम आराध ।
साढ़े त्रय कुण्डल वह लाये, सर्प समान सुप्त दिख पाये ।
जब तक सुप्त रहेगी ऐसे, जानो नर को पशु हो जैसे ।
तब तक होगा न कुछ ज्ञान, लाख करे जन यत्न महान ।
यत्न करो कुण्डली उद्बोधो, शक्तिचालिनीं मुद्रा शोधो ।

कुञ्जी से जिमि द्वार चपाट, कुण्डली खोले दशम कपाट ।"
सुन कर नाथ की सारी बात, कहा साध ने हो नत गात ।
"हे देव मुझे यह बतलावें, दशम कपाट किसे कह पावें ।
जिस को खोले कुण्डली जाय, जहां और न कोई उपाय ।
दो०—कहां स्थित वह द्वार है, क्यों वह बंद कपाट ।
और देह में कौन से, जो हैं द्वार चपाट ।।3928
कहा नाथ "जो प्रश्न तू कीन, यह जिज्ञासा नहीं नवीन ।
नव द्वार तो स्पष्ट लखायें, जिन के नाम सभी कथ पायें ।
दो आंखें दो कान गिनायें, गिनती में दो नासिक आयें ।
सतवां लेवो मुख को जान, नीचे के दो और पहचान ।
इस विध नव द्वार जो भाई, जगत कार्य में बनें सहाई ।
ये तो बंद नहीं हैं रहते, निज निज कार्य सभी कर पाते ।
दशमद्वार शिखा में भाई, वह तो बंद सदैव लखाई ।
जीव को नव द्वार ले जायें, जग में सारे कार्य करायें ।
दशम द्वार जीव जब जाये, वहां प्रभु के दर्शन पाये ।
दो०—पूछी तुम ने और जो, बात अनोखी मीत ।
बंद द्वार यह है क्यों, वह भी लेवो चीत ।।3929
दशम द्वार बंद रह पाये, खोले वह जो योग कमाये ।
एक बात पर लो यह जान, इस योग को सुगम मत मान ।
इस योग को वही कर पाय, जो व्यवहार निज शुद्ध बनाय ।
व्यवहार शुद्ध तभी हो पाय, विचारों में जब शुद्धि आय ।
विचार तभी जन के हों शुद्ध, जब आहार जन का हो शुद्ध ।"

साधु ने तभी पूछी बात, "शुद्ध आहार कहें किसे तात ।"
कहा स्वामी तब निज विचार, "सात्विक भोजन शुद्ध आहार ।"
कहा साधु "अब यह बतलायें, शुद्ध विचार किसे कथ पायें ।"
कहा नाथ "यह प्रश्न महान, इस का भी लो उत्तर जान ।
दो०—प्रभु भक्ति जिस चित बसे, सबका मन में हित ।
विचार उस के शुद्ध हों, जानों मेरे मित्त ॥" 3930
कह इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।
साधु ने भी आश्रम त्याग, निज आवास को चलने लाग ।

## दिन पैंतालीसवां (45) प्रातः

प्रातः काल जब साधु आया, फिर नाथ से पूछ वह पाया ।
"आहार का था गुण बताया, विचार का भी मैं सुन पाया ।
व्यवहार शुद्धि क्या हो देव, इस का भी बतलावें भेव ।
सभी गुणों को मैं अपनाऊं, तब ही योग में सिद्धि पाऊं ।"
कहा नाथ "सुन लो मम मीत, योग साधन में तेरी प्रीत ।
गुण ही जन को गुणी बनायें, सहायक योग में बन पायें ।
दो०—सब जग का जो मीत हो, मित्रवत व्यवहार ।
सके वही कर योग को, मन में निश्चय धार ॥3931
अब सुन लो मुझ से मम मीत, शक्ति चालिनी की जो रीत ।
सिद्धासन में बैठ दिखाओ, संग प्राण अपान मिलाओ ।
अश्विनी मुद्रा भी कर संग, सिकोड़ो अपने गुह्य जो अंग ।
दीर्घ काल अभ्यास चलावे, सुषुम्ना में फिर वायु जावे ।
नित्य निरन्तर होय अभ्यास, चित्त में राखे पूरण आस ।

सुषुम्ना नाडी होय सचेत, उस में प्राण उठ पांय अचेत ।
कुण्डली जुड़ी सुषुम्ना संग, चेतन उस के भी हों अंग ।
पड़े प्राण का उस पै दाव, जगावे उस को यह प्रभाव ।
दो०—कुण्डली जाग्रत होय कर, चढ़े ऊर्ध्व की ओर ।
मार्ग सुषम्ना का गहे, पहुंचे मस्तक ठोर ॥ 3932 क
जाय वह सहस्त्रार में, खोले दशम द्वार ।
यही मार्ग है मोक्ष का, योग धर्म अनुसार ॥"3932 ख
सुन कर साध चित्त हर्षाया, ज्ञान अनूपम उस ने पाया ।
कहन लगा "हे नाथ प्यारे, मिले रहस्य योग के न्यारे ।
शक्ति चालिनी योग महान, गुप्त मिला यह आप से ज्ञान ।
यथा शक्ति मैं करूं अभ्यास, कृपा करनी मैं हूं तव दास ।
गुरु कृपा को बिन जन पाये, कुण्डली जागृत न हो पाये ।
हे नाथ तव शरणि यह दास, इस की नतमस्तक अरदास ।
आशिर्वाद मुझे मिल पाये, मेरा योग सफल हो जाये ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, यत्न साध्य है योग महान ।
दो०—जो करे अभ्यास नित्य, रह कर गुरु के पास ।
निज यत्न अनुरूप फिर, सके पा कृपा दास ॥3833
अब मैं तुम को वह बतलाऊं, अगली मुद्रा जो समझाऊं ।

## (7) शांभवी मुद्रा

शांभवी मुद्रा है अभिधान, सिद्धिप्रद यह जान महान ।
किञ्चित मात्र का अभ्यास, चेतन करत नाडिन को खास ।

शंभू की यह मुद्रा खास, श्रवण करो तुम सह विश्वास ।
बहुत गुप्त यह मुद्रा जानो, विशेष कृति शंभु की मानो ।
*जैसा नाम वैसा गुण होय, शांत करत वृत्तियों को सोय ।
नयन स्वयं नयनों को देखें, आत्मराम उन्हीं में पेखें ।
खुले नेत्र ध्यान लगावे, शांभव मुद्रा यही कहावे ।

दो०—नयन खुले तो हों सही, जगत न दीखे लेश ।
अन्तर के पट पै लिखा, दीखे ईश हमेश ॥3934

स्मरण रहे पर सदा यह बात, सिद्ध भये तभी मुद्रा तात ।
हो जब चित्त मुद्रा अनुकूल, भाव रुद्ध जो हों प्रतिकूल ।"
साध कहा "हे मेरे नाथ, कहें अनुकूल के लक्षण साथ ।
कौन लक्षण जिन को हम जान, हैं अनुकूल मुद्रा के मान ।
जीवन में लें उन को धार, जीवन के जो हों आधार ।"
कहा नाथ "जो पूछी बात, विस्तृत उत्तर दूं मैं तात ।
जीव कुछ जग में ऐसे जायें, जो जन्म से हि सिद्ध कहायें ।
जन्म सिद्ध की कहूं न बात, कथूं सामान्य जनों की तात ।

दो०—शांभव मुद्रा के लिए, जो लक्षण अभिप्रेत ।
क्रमशः उनको मैं कहूं, सुन लो पालन हेत ॥3935

शांभव मुद्रा उस की होय, श्रद्धा चित्त में जो संजोय ।
जिस का चित्त शिथिल हो भाई, सके न कर वह योग कमाई ।
अक्षुन्न स्मृति जिस की होय, सकता कर यह मुद्रा सोय ।
एकाग्र कर सके जो चित्त, उसी से मुद्रा हो यह मित्त ।

---

* शांभव—शं (शांत) + भव (होना) ; वह मुद्रा जिस को करने से मन शांत होता है ।

बुद्धि भये न भ्रांत कदा हि, मुद्रा सिद्ध यह भये तदा हि ।
एक बात विशेष बताऊं, कथ संवेग का महत्त्व पाऊं ।
तीव्र जहां संवेग हो पाय, सिद्धि वहां तो देर न लाय ।
तीव्र से भी तीव्रतर होय, यह संवेग तो पावे कोय ।
दो०—चित्त बसें जिसके प्रिय, गुण उपरोक्त साध ।
शांभव मुद्रा सिद्ध कर, करे योग निर्बाध ॥3936
इस मुद्रा का करो अभ्यास, चित्त एकाग्र कर के खास ।
सायं काल जभी आ जाओ, अगली मुद्रा जानन पाओ ।

## दिन पैंतालीसवां (45) सायं

सायं काल साध वह आया, सद्गुरु चरणी शीष झुकाया ।
और कहा हे सद्गुरु देव, गूढ़ गहे मैं योग के भेव ।
प्रत्यक्ष मिला मुझे प्रमाण, गुरु से ही जन पावे ज्ञान ।
शांभव मुद्रा का अभ्यास, अवश्य करूं मैं सह विश्वास ।
गुरु मूर्ति से बहु मुझ को प्यार, मम दृष्टि में वह हो साकार ।
हर दम रहे वह मम समक्ष, कृपा करो हे गुरु वर दक्ष ।
दो०—मम दृष्टि में वास होय, गुरु मूर्ति का नाथ ।
विचरूं जब संसार में, रहें गुरु मम साथ ॥"3937
कहा नाथ "हे साध सुजान, शांभव का मिल पाया ज्ञान ।
अगली मुद्रा मैं कथ पाऊं, 'पृथ्वी धारणा' अब बताऊं ।

## (8) पृथ्वी धारणा मुद्रा

मूलाधार तुम जानो मीत, वहां एकाग्र कर लो चीत ।
वहां पर अपना मन टिकाओ, पीला कमल वहां लख पाओ ।

हैं उस कमल के पत्ते चार, चमचमाता अतीव आकार ।
धारणा जब वहां हो पाये, पृथ्वी धारणा वह कहाये ।"
कीना तब यह साध सवाल, "सद्गुरु मेरे परम दयाल ।
चित्त एकाग्र जब हो पाय, इस का प्रभाव क्या हो पाय ।
दो०—एक बात है और भी, मेरे दीना नाथ ।
कारण पीले रंग का, समझावें इस साथ ॥3938 क
जानन चाहूं और भी, हे मेरे भगवान ।
चार पात का भाव जो, उस का भी दें ज्ञान" ॥3938 ख
सुनी साधु की यह जिज्ञास, बोले नाथ ला मुख पै हास ।
"हे साध मैं तुझे बतलाऊं, बात योग की यह समझाऊं ।
तेरा प्रश्न प्रथम जो साध, लो प्राण जब वहां आराध ।
जागृत कुण्डली तब हो पाय, साधक समाधि स्थित हो जाय ।
चाहिए दीर्घकाल अभ्यास, सिद्धि तभी मिल सकती खास ।
अल्पकाल ही करत अभ्यास, उस का सफल न होय प्रयास ।
प्रश्न दूसर जो तुम कर पाय, पीत वर्ण हि क्यों यहां आय ।
इस का भी लो उत्तर जान, पीत धरातल का रंग मान ।
दो०—पृथ्वी की हो धारणा, रंग पीत ही होय ।
कुण्डली की भी साधना, साधक सिद्धि गोय ॥3939
प्रश्न तीसरा तुम कर पाये, चार पात जो मन में लाये ।
उस की भी बतलाऊं बात, इस में गूढ़ रहस्य है तात ।
मेरु दण्ड को तुम तो जानो, स्रोत मुख्य नाडिन का मानो ।
छः केन्द्र भी तुम लेवो जान, मेरु दण्ड में उन का स्थान ।

वही षट चक्र जानें लोग, ध्यान लगा जहां करते योग ।
नाडियां निकल वहां से तात, दें शक्ति अंगों को दिन रात ।
चक्र को तुम कमल लो जान, नाडियां पत्ते लो पहचान ।
नाडिन निकलत जितनी साई, उतने वे ही पात कहाहीं ।

दो०—मूला धारी कमल से, निकलें नाडिन चार ।
चार पात उस कमल के, योगी लें मन धार ॥3940 क
इस उत्तर से जान लो, सब चक्रन की बात ।
जितनीजितनी नाड़ियां, उतने उतने पात" ॥3940 ख

कहा साध "हे नाथ महान, आज मिला विलक्षण ज्ञान ।
यह ज्ञान न कहीं मिल पाया, आज प्रभु जो आप बताया ।
मेरु दण्ड के चक्र बताये, यौगिक कमल वही समझाये ।
कमलों के जो पात कहाते, प्राण नाडिन हैं वे सुहाते ।
चक्रों में जो ध्यान लगाये, निज कुण्डली को वह जगाये ।
मैं ज्ञान यह आप से पाया, किमि कथूं प्रभु आप की दाया ।"
कहा नाथ "हे साध सुजान, समझा जो तुम ने यह ज्ञान ।
यह तो राम प्रभु की दाया, जगती को जिन योग सिखाया ।
कलि में लेकर उन अवतार, लुप्त योग का कीन उद्धार ।

दो०—राम प्रभु को स्मरण कर, जिन का यह वरदान ।
जग भूला था योग को, दीना जग को ज्ञान ॥3941

हे साध अब शाम हो आयी, सुन पक्षियों की चहचहायी ।
निज नीड़ों में वे चलि आये, जग सकल विश्राम को पाये ।
कल प्रातः तुम आना मीत, अगली मुद्रा कहें सप्रीत ।"

## दिन छतालीसवां (46) प्रातः

### (9) जल धारणा मुद्रा

प्रातः भयी साध चलि आया, स्वामी जी को शीश झुकाया ।
और कहा "हे नाथ महान, मिला आप से दिव्य ज्ञान ।
अगली मुद्रा का अब ज्ञान, आप से पाऊं मैं भगवान ।"
कहा स्वामी "हे साध सुजान, जल धारणा का दूं मैं ज्ञान ।
स्वाधिष्ठान में मन टिकाओ, मन एकाग्र वहां कर पाओ ।
स्वाधिष्ठान है जल का स्थान, छः दल कमल वहां लो मान ।
दो०—सुन्दरता उस कमल की, क्या वर्णूं मैं साध ।
चित्त रमें उस देश में, वहीं प्रभु आराध ॥3942 क
धवल वर्ण उस कमल का, छः दलों के साथ ।
स्मरण करे जो ध्यान से, लगे योग उस हाथ" ॥3942 ख
जिज्ञासा साधु के चित्त आई, सद्गुरु चरणि उस प्रकटाई ।
कहा साध ने "हे मम नाथ, यह बतला कर करें सनाथ ।
मूलाधार में पत्ते चार, पत्ते छः यहां किस प्रकार ।
संख्या यह है क्यों बढ़ पायी, मम बुद्धि नहीं जानन पायी ।
इसमें भी रहस्य हो कोई, अभी आप से समझूं सोई ।"
कहा नाथ "तेरी जिज्ञास, यह तो उचित ही है खास ।
सभी जगह नहीं दल समान, कारण इस में लो तुम जान ।
दल रूप में नाडियां भाई, इन से शक्ति देह में जाई ।
जितनी शक्ति जहां दरकार, नाडिन संख्या उसी प्रकार ।

दो०—इसी नियम से जान लो, मेरु दण्ड का ज्ञान ।
चक्रों का भी ज्ञान जो, समझाया प्रभु आन ॥3943

प्रभु ने दीना जग को ज्ञान, भूल गया था जिसे जहान ।
अगली मुद्रा कह दूं साध, लेते योगी जिसे आराध ।

## 10. अग्निधारणा मुद्रा

अग्निधारणा मुद्रा भाई, जो साधे उस को सुखदाई ।
नाभि स्थान अग्नि का जान, पाछे उस के चक्र महान ।
मेरु दण्ड में स्थित है जोई, मणीपूर कहावे सोई ।
सुन्दर कमल वहां ले जान, योगी जिस का करते ध्यान ।
उस का रंग है रक्त महान, दश दल उस के लेवो मान ।
उसी चक्र में ध्यान लगाना, फिर तुम मुझ को आ बतलाना ।"
समझी बात साध ने सारी, बैठा ध्यान में आज्ञाकारी ।

दो०—बैठ गया वह ध्यान में, मणिपूर चित्त लाय ।
प्रभु समक्ष फिर आय कर, बैठा माथ झुकाय ॥3944

तब नाथ ने उसे बतलाया, "हे साध तुम ध्यान लगाया ।
मणिपूर के दश दल ध्यायें, शक्ति के जो स्रोत कहायें ।
जितना अधिक करे जन ध्यान, शक्ति उतनी ही गहे पुमान ।
आंतों में यह शक्ति जाये, जठराग्नि बढ़ इसी से पाये ।
जठराग्नि जीवन का आधार, इस ध्यान का गुण है अपार ।
दल संख्या जो दस है भाई, संख्या उचित ही रच पाई ।

निशि दिन शक्ति का संचार, हो रहा इन से हर प्रकार ।
इस मुद्रा का महत्त्व जान, करते रहना सदैव ध्यान ।
दो०—साधो मुद्रा जान लो, मणि पूर बतलाई ।
दीर्घकाल अभ्यास से, हो तुझे सुखदाई ॥3945

## 11. वायवी धारणा मुद्रा

अगली मुद्रा का दूं ज्ञान, वायवी धारणा है अभिधान ।
अनाहतचक्र में धर ध्यान, धूएं जैसा रंग लो मान ।
बारह दल का पद्म है मीत, इसी से इस का गुण प्रतीत ।
बहु दिशा में प्राण संचार, इससे होता हर प्रकार ।
जिगर तिली व आदि जो अंग, जुड़े सभी हैं इसी के संग ।
शक्ति मिलती यहीं से भाई, स्वस्थ रहें व हों सुखदाई ।
इस चक्र का करे जो ध्यान, प्राण की शक्ति बढ़े महान ।
निरोग रहेंगे सारे अंग, होय न देह फिर कभी अपांग ।
दो०—हे साधो तुम जान लो, द्वादश दल महान ।
वायु का यहां ध्यान धर, स्वस्थ रहे पुमान ॥3946 क
वायु का रंग जान लो, धूम्र के है नाई ।
चित्त टिके उस रूप में, तव सहज ही साईं ॥3946 ख
अब तुम जाओ निज इस्थान, सायं आना फिर इस स्थान ।
अगली मुद्रा मैं बतलाऊं, जिस के गुण मैं किमि समझाऊं ।
इतना कह उठ पाये नाथ, छोड़ के साधु का वे साथ ।

## दिन छतालीसवां (46) सायं

## (12) आकाशी धारणा मुद्रा

सायं वेला भया सुहाना, साधु ने निज चित्त अनुमाना ।
नाथ कहा मुद्रा बतलाऊं, जिस के गुण मैं किमि कथ पाऊं ।
आज सुनूंगा वही मैं ज्ञान, स्वयं नाथ जो कथा महान ।
ऐसा कर वह चित्त अनुमान, चला आश्रम की ओर सुजान ।
आ आश्रम उस माथ झुकाया, आशिष सद्गुरु का था पाया ।
दो०—पा आशिष वह नाथ की, बोला साध सुजान ।
"हे नाथ बतलाईये, जो नूतन है ज्ञान" ॥3947
बोले नाथ "हे साध सुजान, मुद्रा का तुम पाया ज्ञान ।
यह भी जान लिया तू साध, देह से इन का नात अगाध ।
सूक्ष्म सूक्ष्म अंग अनेक, इन से गहें लाभ प्रत्येक ।
भूलो न तुम बात यह भाई, मुद्रा अति संजीवन दाई ।
अब आकाशी मुद्रा भाई, प्राण को भी प्राण प्रदाई ।
विशुद्ध चक्र में है आकाश, जहां मिलेगा दिव्य प्रकाश ।
चमचम करता दिव्य समुंद, विकसित जहां है दिव्य कुमुद ।
सोलह पातों का वह फूल, प्राण शक्ति ही उस की थूल ।
दो०—ध्यान धरो उस चक्र का, नित्य नियम से मीत ।
हृदय को तब शक्ति मिले, रहे तुझे प्रतीत" ॥3948
साध कहा तब "हे महाराज, दूर करो इक भ्रांति आज ।
सबसे अधिक पात यहां देव, इस का भी बतलाओ भेव ।"
स्वामी बोले "साध सुयोग, प्रिय होता जिस जन को योग ।

वही प्रश्न ऐसे कर पावे, ज्ञान सूक्ष्म को इमि ग्राहवे ।
लेवो जान यहां तुम भाई, इस मुद्रा की जो प्रभुताई ।
यहां से शक्ति दिल को जाये, फुफुस भी बल यहां से पावे ।
ये दोनों हैं प्राणाधार, मानो जीवन के वे सार ।
बाधा इन में यदि कुछ आय, इति श्री जीवन की हो पाय ।
इसी कारण हैं सोलह पात, सोहल कला शक्ति साक्षात ।

दो०—संपूर्ण शक्ति जान लो, इस चक्र के मांझ ।
ध्यान धरो इस हेत तुम, नित्य प्रातः सांझ" ॥3949

कहा साध "हे सद्गुरु देव, समझूं अब इक और मैं भेव ।
सबन मुद्रन में कौन विशेष, जिस का करूं अभ्यास हमेश ।
यदि कुछ ऐसा होय विधान, उस का भी मुझे दीजो ज्ञान ।
जैसा करें प्रभो आदेश, पालन करूंगा वही हमेश ।"
कहा स्वामी "मत जाना भूल, प्रश्न तुम्हारा बहु अनुकूल ।
एक ही मुद्रा का अभ्यास, होता वह सिद्धिदायक खास ।
दीर्घ काल जो करे निरन्तर, साधना में न आवे अन्तर ।
एक भी मुद्रा सिद्धि दायी, होवे योगी को सुखदायी ।

दो०—एक मुद्रा को साध कर, प्राप्त करे जन लक्ष्य ।
जो इच्छा हो साध लो, तुम योगी हो दक्ष" ॥3950

कहा साध "हे दया निधान, दया के सागर हो भगवान ।
कठिन योग को सरल बनायें, शिष्यन का उत्साह बढ़ायें ।
प्रभु की आज्ञा शिरोकर धार्य, करूंगा ऐसा ही मैं कार्य ।
एक बात प्रभु करें स्पष्ट, मेरी भ्रांति हो जिमि नष्ट ।

बात लक्ष्य की जो कथ पाई, कौन लक्ष्य वह जग सुखदायी ।
कौन लक्ष्य हम चित्त में धार, लेवें मुद्रा का आधार ।
कर कृपा यह ज़रूर बतायें, दीन दयाल दया कर पायें ।"
कहा नाथ "तव प्रश्न महान, पूछा कभी न किसी ने आन ।

दो०—मनमाना ही लक्ष्य ले, अथवा लक्ष्य न खास ।
देखे हैं जन बहुत हम, करते योग अभ्यास ॥3951

लक्ष्य मुद्रा का भिन्न न होय, शास्त्रों में तो कथा है सोय ।
इसके लक्ष्य का बस यह रूप, चित्त भये निरोध स्वरूप ।
प्राण व मन का भये संयोग, दूर भयें सब देह के रोग ।
हे साध अब करें विश्राम, ढल गई है आज की शाम ।
कल प्रात हम और बतायें, आगे का प्रसंग कथ पायें ।"

## दिन संतालीसवां (47) प्रातः

## (13) पाशिनी मुद्रा

काल प्रातः आया साध, उसके चित्त जिज्ञास अगाध ।
गुरु पूर्ण और शिष्य जिज्ञासु, नूतन ज्ञान का वह पिपासु ।
प्रभु कृपा से भया संयोग, निरन्तर बहती धारा योग ।

दो०—कहा नाथ ने साध से, "हे साध प्रवीण ।
अगली मुद्रा मैं कथूं, मिले ज्ञान नवीन ॥3952

अगली मुद्रा पाशनी जान, उसका अब मैं करूं बखान ।
उसमें तन जन इमि कस पाये, पाशबंधा ही वह लखाये ।
एक टांग को प्रथम उठाओ, गर्दन पाछे वह रख पाओ ।
दूजी से भी इमि कर पाओ, दोनों को वहां दृढ़ टिकाओ ।

इस विध बैठो निश्चल मीत, पाशनी मुद्रा की यह रीत ।"
साध ने कीना तब प्रयास, लागी कठिन उस को यह खास ।
गर्दन पर इक टांग टिकाई, दूसरी उस से न उठ पायी ।
कहा नाथ "मत होवो निराश, योगी कभी न होंय हताश ।
दो० — इस मुद्रा के कारणे, प्राण शक्ति बढ़ पाये ।
नित्य करे अभ्यास जो, दृढ़ता तन में आये" ॥3953
कहा साध "हे नाथ बतायें, ध्यान यहां हम कहां लगायें ।
सफल होय मम मुद्रा नाथ, ध्यान लगाऊं भी उस साथ ।"
कहा नाथ "तुम पूछा जोय, ध्यान बिना क्या मुद्रा होय ।
इस मुद्रा में ध्यान महान, लो समझ तुम धर कर ध्यान ।
गुदा ऊपर मेरु के बीच, कुण्डलिनी का स्थान समीच ।
वहीं पर मन टिकाओ भाई, एकाग्र वृत्ति तब हो जाई ।
दीर्घकाल इसका अभ्यास, करता है जो सह विश्वास ।
जागृत कुण्डलिनी हो जाये, और सिद्ध योगी कहलाये ।
दो० — इस विध करना साध तुम, मुद्रा का अभ्यास ।
सिद्ध होय जब पाशिनी, सफल जानो प्रयास ॥3954
मुद्रा सब हैं तुझे बताईं, दो वर्गों में जो कथ पाईं ।
प्रथम वर्ग में नौ हैं मीत, अन्य में तेरह की प्रतीत ।
प्रथम वर्ग जब जन कर पाये, ग्रंथियों को सशक्त बनाये ।
वर्ग दूसरे का अभ्यास, देता लाभ प्राण को खास ।
विधि सारी तुम है सुन पाई, सुनना सुगम पर कठिन कमाई ।
बहु वर्षों तक कर अभ्यास, सफल होय तब तव प्रयास ।"

कहा साध "हे नाथ दयाल, जानो तुम मम मन का हाल ।
मन है दुर्बल, दुर्बल शरीर, योग्य नहीं सह सकें बहु पीर ।
मेरे मन है दृढ़ विश्वास, कृपा तेरी सदैव मम पास ।
दो०—तव कृपा से नाथ मम, लगूं योग से पार ।
मुद्रा सब मैं कर सकूं, सद्गुरु ले आधार ।।3955
मुद्रा से मन स्थिरता पाय, मुद्रा से स्थित प्रज्ञ हो जाय ।
मुद्रा से सम प्राण अपान, मुद्रा से हो शक्ति उत्थान ।
मुद्रा से कुण्डली उद्बोध, मुद्रा से नाडिन का शोध ।
मुद्रा से दशद्वार प्रवेश, मुद्रा से हो समाधि विशेष ।
मुद्रा से देह रहे निरोग, मुद्रा नष्ट करे बहु रोग ।
मुद्रा ग्रंथिन करत सचेत, अनेकों रोग निवारण हेत ।
मुद्रा से गल ग्रंथि शुद्ध, मुद्रा से मधुग्रंथि प्रबुद्ध ।
मुद्रा मूर्धा रस स्रावत, अमृत रस का पान करावत ।
दो०—तन की सकल ग्रंथियां, जिन से अमृत स्राव ।
मुद्रा के अभ्यास से, रस का नहीं अभाव ।।3956
हे नाथ यह समस्त ज्ञान, मिला आप की शरण में आन ।
पूछूं प्रश्न मैं अब इक सोय, रह रह कर जो उत्पन्न होय ।
मुद्रा सिद्ध जो न कर पावे, कौन योग वह जन ग्राहवे ।
मन को वश करने के हेत, मार्ग सुगम कौन अभिप्रेत ।
ऐसी विधि यदि आप बतायें, बहु जनता का हितकर पायें ।"
सुनकर उस की यह जिज्ञास, नाथ कहा "है प्रश्न यह खास ।

मुद्रा सिद्ध वही कर पाये, दीर्घ काल जो योग कमाये ।
इसका उत्तर देंगे शाम, अब जाओ हम करें विश्राम ।"

## दिन संतालीसवां (47) सायं

सायं काल साध चलि आया, वही प्रश्न तब उस कथ पाया ।
दो०— साधु का यह प्रश्न था, मुद्रा कठिन उपाय ।
चित्त एकाग्र करन हित, जनता क्या कर पाय ॥3957
कहा नाथ "तुम को बतलाऊं, तेरी भ्रांति दूर कर पाऊं ।
योग हित प्रभु लीन अवतार, जनता पर उन का उपकार ।
जो जन मुद्रा नहीं कर पाय, उसके लिए हैं अन्य उपाय ।
सद्गुरु शरणी जब चलि आये, सरल रीति से ध्यान लगाये ।"
उत्सुकता उस मन उपजायी, साधु वाणी तभी कथ पायी ।
"हे नाथ वह ध्यान की रीत, हम को भी वह हो प्रतीत ।
कर कृपा वह स्पष्ट बतायें, श्रीमुख से अब हम सुन पायें ।"
कहा नाथ "तुम सुन लो भाई, क्रिया ध्यान की सरल बताई ।
दो०— ध्यान क्रिया न कठिन है, प्रभु बतलाई खास ।
गुरु पूर्ण होय शिष्य का, शिष्य चित्त विश्वास ॥3958
ध्यान करे सो ध्याता होय, श्रद्धावान उस का मन होय ।
मन पवित्र और दृढ़ विश्वास, ध्याता के ये गुण हैं खास ।
ध्येय के तुम भेद लो जान, स्थूल व ज्योति लो पहचान ।
तीजा भेद सूक्ष्म है भाई, इन का ध्यान करे जगताई ।
ध्येय के भेद तीन बताये, ध्याता एक में मन टिकाये ।
गुरु कृपा से चित्त टिक पाये, योग युक्त तब शिष्य कहाये ।"

बोला साध "हे नाथ महान, विस्तृत देवें यह सब ज्ञान ।
स्थूल ज्योति और सूक्ष्म देव, तीनों का बतलावें भेव ।
दो०—ध्येय तीन जो हैं कथे, इन तीनों का भेद ।
सुन पाऊं मैं नाथ से, गुरु के मुख पै वेद" ॥3959
नाथ कहा "हे साध सुजान, स्थूल ध्येय को इस विध जान ।
मूर्त रूप जो मन में आये, ध्येय वही तो स्थूल कहाये ।
ईश्वर भावना जन की होय, रूप साकार प्रभु का सोय ।
मन में केवल उस का ध्यान, बुद्धि माने उसे भगवान ।
यह है स्थूल ध्यान की रीत, हो जिस की साकार से प्रीत ।
*यही रीत सब शास्त्रन गाई, गीता में भी यही बताई ।"
साध ने पूछा "हे भगवान, किस मूर्त का जन करे ध्यान ।
इसका निर्णय जब हो जाये, जन ध्यान में तब लग पाये ।
दो०—जन लगे तब ध्यान में, जब हो निर्णय नाथ ।
बुद्धि को किस रूप में, सौंपे मन किस हाथ ।"3960
कहा नाथ "तव ठीक अनुमान, लगे तभी जन का कुछ ध्यान ।
निर्णय को जब वह कर पाये, किस ध्येय में ध्यान लगाये ।
जन के नहीं यह वश की बात, मन चंचल मन भागा जात ।
स्थिरता न उस के लिखि ललाट, मानव का मग करत चपाट ।

---

* श्रीमद्भगवद्गीता में साकार ध्यान का उल्लेख श्री कृष्ण भगवान के शब्दों में इस प्रकार है—
"मय्येव मन आधत्स्व, मयि बुद्धि निवेशय"
अर्थ—मेरे स्वरूप में ही मन लगाओ और मेरे स्वरूप में ही बुद्धि को लीन करो ।
—गीता—12.8

चित्त की संगी बुद्धि जोय, उस पर भी विश्वास न होय ।
भ्रमित होत वह क्षण में मीत, अटपटी दोनों की है रीत ।
निर्णय ध्येय का न आसान, किंकर्त्तव्य हो मूढ पुमान ।
अन्य न उसका देत को साथ, ध्येय का निर्णय गुरु के हाथ ।
दो०—गुरु बतलाये शिष्य को, हो जो उस का ध्येय ।
मन बुद्धि को मान्य वही, जो कथे गुरु ध्येय ।।3961
हे साधो यह निश्चित बात, गुरु दे रूप ध्येय का तात ।
अब तो वेला बहुत विहायी, प्रातः काल मिलेंगे भाई ।

## दिन अठतालीसवां (48) प्रातः

काल प्रातः भया सुहाना, सब जीवों ने सुख को माना ।
योगी राज नाथ भी जागे, प्रातकर्म में थे वे लागे ।
प्रभु की सुध में भये विलीन, साध भया आ चरणि आसीन ।
जभी नाथ जी नयन उघारे, साधु ने तभी पग सत्कारे ।
बोला साध "हे दीन दयाल, ध्यान संबंधी एक सवाल ।
कर कृपा मुझे यह बतलायें, जब साकार में मन लगायें ।
चित्त टिके किस स्थान विशेष, होय न जिमि वह अस्थिर लेश ।"
सुन कर उसकी यह जिज्ञास, नाथ कहा "है प्रश्न यह खास ।
दो०—मुख्य बात तो है यही, चंचल भये न चित्त ।
विधि बतलाऊं मैं तुझे, जो है इसी निमित्त ।।3962
एक विधि तो है यही भाई, जान इष्ट को सगा सहायी ।
स्मरण करे उसको इस रीत, जैसे बढ़े उस संग प्रीत ।

मात पिता उस को ले मान, बंधु भाई वा उस को जान ।
प्रीतम का वा रूप पहचान, करे निछावर उस पै प्राण ।
कभी विरह में उस के रोय, मिल कर कभी रोमांचित होय ।
कभी प्राण का होय उत्थान, उछले धरत से तन लो जान ।
मांडूकी मुद्र जन की होय, गिरे कभी तन सुध को खोय ।
कभी पड़ा वह रहे बेसुध, ध्यान में इष्ट के खो निज बुध ।
ध्यान में जन जभी खो जाये, भूख प्यास न उसे सताये ।

दो०—इस ध्यान की रीत को, जाने वही युमान ।
गुरु से जिस को हो मिला, इष्ट रूप भगवान" ।।3963

सुन साध जो नाथ कथ पायी, उस की उत्सुकता बढ़ पायी ।
पूछा उसने "हे भगवान, क्या इस ध्यान के हैं प्रमाण ।"
कहा नाथ "तू पूछा ठीक, इस की तो है पुरातन लीक ।
इस ध्यान के बहु प्रमाण, मीरा तुलसी सूर लो जान ।
गुरु मेरे के शिष्य अनेक, रहत ध्यान में जो प्रत्येक ।
सदा रहें वे ध्यानासीन, गुरु के ध्यान में रहते लीन ।
श्वास भस्त्रिका कभी चल पाये, भूमि से कभी तन उठ जाये ।
कभी वे अश्रु खूब बहावें, हो मस्त कभी प्रभु गुण गावें ।

दो०—ध्यानावस्था देखनी, यदि चाहो तुम मीत ।
प्रभु भक्तों के संग में, रह देखो सप्रीत ।।3964

भक्त करे जब प्रभु का ध्यान, प्रभु बसें जब चित्त में आन ।
देहाध्यास भक्त खो पाये, ध्यानावस्था यही कहाये ।
ऐसा अनुभव जिस का होय, निज तन को प्रभु तन में खोय ।

उस दशा का वर्णन भाई, हो सके नहीं भर भी राई ।
मैं मुलख प्रभु रूप ध्याया, दश वर्ष तक वहीं खो पाया ।
जग को देखा नहीं दस साल, केवल संग रहें प्रभु दयाल ।
अपनी बीती मैं बतलाई, गुरु कृपा से है यह पाई ।
हो समझे तुम मेरे मीत, ध्यान स्थूल की इक यह रीत ।

दो०—एक रीत तुम और भी, जानो मुझ से मीत ।
मिला गुरु से इष्ट जोय, मन निरखे सप्रीत ।।3965

आसन निज तुम स्थिर लगाओ, निज को सन्मुख इष्ट बिठाओ ।
आंखें मूंद हृदय में देखो, स्पष्ट इष्ट के रूप को पेखो ।
स्वयं को उस से सम्मुख पाओ, ऐसी धारणा कर दिखाओ ।
इष्ट के अंग अंग का ध्यान, क्रम से करता जाये पुमान ।
प्रथम इष्ट के चरण ध्यावे, उसी ध्यान में मन खो जावे ।
पग नख में ही चित्त टिकावे, जिस विध वृत्ति स्थिर हो पावे ।
अथवा उस का आसन देखे, कमल सदृश पद्मासन पेखे ।
मन उखड़ जब वहां से पावे, नाभि में तभी चित्त टिकावे ।
इष्ट की नाभि को लो मान, उत्पन्न उस से ब्रह्मा जान ।

दो०—ध्यान नाभि का जानिये, विष्णु की है नाभ ।
जिससे ब्रह्मा ऊपजा, सुन्दर उस की आभ ।।3966

वक्षस्थल को लो फिर देख, विशालता उसकी हि लो पेख ।
उसकी दृढ़ता वज्र समान, छिपा हृदय जहां कोमल मान ।
कोमल हृदय दयामय होय, भक्त जनों का आश्रय सोय ।
बहुत काल वहां ध्यान लगाना, कण्ठस्थल फिर मन ले जाना ।

पुष्पों की वहां माला देख, कल्प वृक्ष के फूल हैं पेख ।
इक इक फूल को देखे चित्त, एकाग्रता हो इसी निमित्त ।
चित्त एकाग्र होये भाई, योगी जन की यही कमाई ।
मन न एकाग्र यदि कर पाया, योगी होकर कर क्या कमाया ।

दो०—योगी जन की संपदा, समझो यह ही मीत ।
जीवन भर कर योग को, वश करे निज चीत ॥3967

अब मध्यान्ह भया है साध, जा कर तुम लो योग आराध ।
सायं वेला फिर चलि आना, वार्ता आगे की सुन पाना ।'

## दिन अठतालीसवां (48) सायं

सायंकाल साध चलि आया, स्वामी वही प्रसंग चलाया ।
कण्ठ का लीना जब कर ध्यान, कन्धों का फिर कर लो ध्यान ।
चित्त की वृत्ति वहीं टिकाओ, दृढ़ स्कंध हैं देखत जाओ ।
इन पर जगत का सारा भार, सिमर सिमर जन उतरे पार ।
सकल जगत का त्याग आधार, कन्धों पर चित्त भये सवार ।
इन का जिस ने लीन आधार, उसे शक्ति मिल पाई अपार ।

दो०—इन कंधों पर साध जी, टिका जगत का भार ।
इन पर ही जन सौंप दे, निज जीवन का भार ॥3968

इस विध कंधों का कर ध्यान, भुजाओं का फिर करो ध्यान ।
सुन्दर वे सुडौल बहु भाई, टिके सहज ही मन वहां जाई ।
भक्तों के वे रक्षक होईं, दुष्ट जनों के घातक सोई ।
जगती इन से पावे त्राण, हरते पापियों के वे प्राण ।
इन भुजाओं में शक्ति अपार, इन के आश्रित सब संसार ।

इन भुजाओं को जभी ध्यावें, सदा ही भय से मुक्ति पावें ।
जिन के चित्त इन पर विश्वास, बसे उनके मन साहस खास ।
कायरता रहे उन से दूर, विचरें जगती में वे शूर ।
दो०—भुज युगल का ध्यान धर, और धार विश्वास ।
योग युक्त जन जब भये, पावे सिद्धि खास ।।3969
*कर लो फिर तुम कर का ध्यान, दक्षिण कर लो चित्त में आन ।
वरद उठा जो है वह हाथ, भक्त का भाग्य वदा उस हाथ ।
दिव्य ज्योति का हाथ स्रोत, भक्त के हृदय भये उद्योत ।
दिव्य आशिष का यह संकेत, उठा भक्त के ही जो हेत ।
वरद हस्त का कर लो ध्यान, इस ध्यान से बहुत कल्याण ।
ध्यान धरो निज भाग्य बनाओ, आशिष नित्य इष्ट से पाओ ।
ध्यान से अन्तर होवे शुद्ध, ध्यान से होय उजागर बुद्ध
धरे जो वरद हस्त का ध्यान, भाग्यवान वह भये पुमान ।
दो०—भाग्य खुले उस जीव का, सदा करे जो ध्यान ।
प्रभु किरपा उस पर भये, और आत्म कल्याण ।।3970
अब तुझे वह ध्यान बतावें, उत्तम ध्यान जिसे कह पावें ।
प्रभु के मुखार विंद का ध्यान, जिस पै खेलत मधुर मुस्कान ।
वह प्रसन्न मुद्रा का रूप, विश्व विमोहक परम अनूप ।
उस पै चित्त जभी टिक पाय, चित्त वृत्ति एकाग्र हो जाय ।
प्रसन्न वदन निज इष्ट को देख, करे मन में तब भक्त उल्लेख ।
मैं तो भाग्यवान हूं नाथ, प्रसन्न आप, मैं भया सनाथ ।

*कर—हाथ ।

प्रभु जिस पै प्रसन्न हो भाई, उस का भाग्य कथा न जाई ।
इस विचार को चित्त में लाय, दीर्घ काल मन वहीं टिकाय ।
दो०—चित्त टिके जब वदन पै, जिस पै है मुस्कान ।
उत्तम जान ध्यान वह, मिला गुरु से दान ॥3971
कभी मुख है कोप में पेखे, पाप कर्म जब जग में देखे ।
पापिन पर वे कर रहे कोप, अधर्म का हो जिमि शीघ्र लोप ।
प्रभु लें धर्म हेत अवतार, करते पापिन का संहार ।
कोप मुद्रा का यही संकेत, देख रहे प्रभु पाप अचेत ।
इष्ट की शक्ति को पहचान, करत रहे जन उस का ध्यान ।
यह ध्यान भी उत्तम जान, प्रभु का रुद्र रूप पहचान ।
इस विध प्रभु के रूप अनेक, ध्यान में ला सको प्रत्येक ।
प्रसन्न मुद्रा में दिख पायें, जन के बिगड़े भाग्य बनायें ।
प्रभु के मुख को देखत जाओ, चित्त एकाग्र इमि कर पाओ ।
दो०—ध्यान करे जो वदन का, दीर्घ काल प्रयन्त ।
चित्त एकाग्र हो सके, भ्रांति का भी अन्त ॥3972
हे साधो अब तुम चलि जाओ, प्रातःकाल जब फिर तुम आओ ।
अगला हम ध्यान बतलावें, जो पूछो वह भी समझावें ।

## दिन अनूजवां (49) प्रातः

अगली प्रात साध चलि आया, आ नाथ को माथ झुकाया ।
बैठ गया वह उन के चरणी, पूर्ण रूप हो गुरु की शरणी ।
कहा नाथ "हे साध सुजान, आगे का तुझे कह दूं ज्ञान ।

मुख का तुझे बतलाया ध्यान, चक्षुओं का फिर करना ध्यान ।
चक्षु इष्ट के लो तुम देख, करुणा दृष्टि वहां पर पेख ।
करुणा सागर ईश कहाते, वही गुण दृष्टि में हम पाते ।
दो०—देख प्रभु की दृष्टि को, करुणामयी महान ।
चित्त उसी में लीन कर, बैठो लाय ध्यान ।।3973
करुणा भक्तों पर कर पावें, दुखों से प्रभु उन्हें बचावें ।
अघ चंगुल से मुक्त करावें, धर्म परायण हमें बनावें ।
सदा ध्यान में इष्ट ध्यावो, दृष्टि में जहां करुणा पावो ।
स्मरण रहे पर तुम को भाई, सदा न करुणा रहे समाई ।
इष्ट का दूजा भी है रूप, वह भी रहता है वहीं गूप ।
जिन आंखों से करुण स्रावे, ज्वाला लपट भी वहीं से आवे ।
उस रूप का भी कर लो ध्यान, भस्म हों जन के पाप महान ।
दोनों रूपों में हे साध, लो ध्यान में इष्ट आराध ।
दो०—हे साध तुम देखना, इष्ट के नेत्र मीत ।
एकाग्र वृत्ति हो सके, यदि भजो सप्रीत ।।3974
अब बतलाऊं तुम को ध्यान, ध्यान सर्वोत्तम लेवो जान ।
यदि इस में तव मन लग जाये, भस्मी भूत काम हो पाये ।"
सुन कर नाथ की ऐसी बात, साध कहा "हे जगत त्रात ।
वह ध्यान मुझ को बतलायें, भस्म काम जिस से कर पायें ।"
कहा नाथ "सुन लो वही ध्यान, जिस का कीना अभी बखान ।
इष्ट के मसत्क (मस्तक) को लो देख, भृकुटी मध्य ही लेवो पेख ।

वहां रेखा तुझे दिख पायें, योग की रेख वे कहायें ।
वहां पर है प्रकाश भी साथ, ध्यान धरो और बनो सनाथ ।

दो०—इस मस्तक पै ध्यान को, नित्य धरे जो मीत ।
इष्ट बसे उस चित्त में, लेय काम को जीत ।।3975

## ज्योति ध्यान

स्थूल ध्यान का कीन बखान, सुन लीना तुम सहित ध्यान ।
*ज्योति ध्यान अब करूं बखान, शास्त्र करें जिस का गुण गान ।
*तीन रूप ज्योति के जान, भौतिक दैविक आत्मिक मान ।
भौतिक ज्योति को सब जानें, अग्नितत्व को सब पहचानें ।
भौतिक ज्योति अग्नि का रूप, जो प्रकट में तेज स्वरूप ।
दृष्टि से भी नज़र जो आवे, भौतिक ज्योति वही कहावे ।
इस के रूप अनेक हैं मीत, जिन की सबन को है प्रतीत ।
अग्नि से बहु काम कर पायें, इस से हम प्रकाश भी पावें ।
भौतिक जीवन इसी अधीन, बिन इस के सब होय विलीन ।

दो०—भौतिक ज्योति जानिये, अग्नि का वह रूप ।
अग्नि के सभी जानते, हैं अनेक स्वरूप ।।3976

---

* वैदिक गायत्री मन्त्र में ज्योति ध्यान का उल्लेख है ।
* ज्योति ध्यान तीन प्रकार की है—

1. भौतिक ज्योति—जैसे आग, दीपक, सितारे, चांद, बिजली, सूर्य आदि ।
2. दैवी या मानस ज्योति—मन का प्रकाश । इस का वर्णन वेदों में इस प्रकार किया है—

"ज्योतिषामपि ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु ।"

अर्थ—मेरा मन जो ज्योतियों की भी ज्योति है वहशिव संकल्प हो ।

3. आत्म ज्योति—आत्मा का ज्योतिर्मय स्वरूप ।

उन में एक रूप को ध्यावे, ज्योति ध्यान वही कहावे ।
जुगनु आदि को पुरुष ध्यावें, दीपशिखा में चित्त लगावें ।
कोई सितारा मन में देख, चन्द्रमा को कोई जन पेख ।
मन में वह प्रकाश ध्याता, ज्योति ध्यान नित्य कर पाता ।
सूर्य की कोई आभा देख, गायत्री मन्त्र सहित उल्लेख ।
ज्योति ध्यान से लाभ उठाय, धीमान वह पुरुष बन पाय ।
ज्योति ध्यान जो करता मीत, करत प्रकाशित निज वह चीत ।
बुद्धि उस की होत उजागर, मन विचरे प्रकाश के सागर ।
दो०—ध्यान सुना तुम साध जी, भौतिक ज्योति मीत ।
दिव्य जोत का ध्यान भी, सुन लो सहित प्रीत ।।3977
हे साधो अब तुम चलि जाओ, सायं काल समय पर आओ ।
कीन श्रवण नाथ की वाणी, गया चला वह गुरु सन्मानी ।

## दिन अनूजवां (49) सायं

सायं वेला जब हो पाया, साधु पुनः था गुरु पग आया ।
कर दण्डौत कहा "भगवान, दिव्य ज्योति का कथिये ध्यान ।
दिव्य ज्योति क्या होती नाथ, यह बतला कर करें सनाथ ।"
कहा नाथ "तुम को समझाऊं, दिव्य ज्योति का रूप बताऊं ।
सूक्ष्म रूप रहे देह मांहि, अखण्ड ज्योति जगे तन मांहि ।
इस का ध्यान करें किस रीत, श्रवण करो तुम सहित प्रीत ।
दो०—श्रवण करो तुम साध जी, इस ज्योति का ध्यान ।
सरल रूप से मैं कहूं, है यह गूढ़ ज्ञान ।।3978

मन सभी के देह में रहता, पर न किसी को भी दिख पाता ।
ज्योतियों की भी ज्योत लो जान, उस का करो तुम नित्य ध्यान ।"
पूछा साधु "हे महाराज, मन खुद करता है सब काज ।
वह देखे बन देखन हारा, देखे जग का सकल पसारा ।
निज को किमि वह देखन पावे, यही बात न समझ में आवे ।
आंख सकत सब दृश्य को पेख, सकती नहीं निज को वह देख ।
मन पर लागू यही है बात, भ्रांति दूर करो जग त्रात ।"
तर्क युत बात जब सुन पाई, नाथ बात तब उसे बताई ।

दो०—"साध बात यह समझ लो, आंख व मन में भेद ।
मन की शक्ति असीम है, कहते हैं सब वेद ।।3979

परम ज्योति लो मन को जान, शक्तियों की भी शक्ति मान ।
द्रुततम उस की गति है मीत, सकें न सुगम रीत से जीत ।
वह प्रमाथी दृढ़तम जान, समझना उसे नहीं आसान ।
जगती को उस कीन अधीन, जीव की गति को वश उस कीन ।
बन्धन का वह कारण जान, मोक्ष का कारण भी पहचान ।
जीव का संगी यह स्थायी, जन्म जन्मांतर में हि भाई ।
योगी इस को वश कर पाये, विना योग नहीं वश में आये ।
मन ही मन का रूप निहारे, निज में निज को लय कर डारे ।
ऐसा योग करो तुम साध, दिव्य ज्योति यह लो आराध ।

दो०—चित्त ज्योति आराध कर, आत्म ज्योति आराध ।
उस का भी वर्णन करूं, तव समक्ष हे साध ।।3980

आत्म जोत को मुख्य लो मान, ज्योतियों का जब कीजो ध्यान ।

बड़ा ध्यान यह सबसे भाई, इसको समझ मोक्ष प्रदायी ।
देह के भीतर यह प्रकाश, होय बिन इस के सर्व विनाश ।
आत्म रूप को देखन हारा, विरला ही हो जन को प्यारा ।
गुरु कृपा जहां पर हो जाये, ज्योति प्रकट वहां हो पाये ।
बातों से न समझ में आये, कहने वाला समझ न पाये ।
ऐसी ज्योति अनोखी भाई, को समझे इस की प्रभुताई ।
इस ज्योति का ध्यान लगाना, मानव जीवन सफल बनाना ।
दो०—गुरु कृपा को पाय कर, हो जो इस का ध्यान ।
चित्त एकाग्र होत तब, उत्तम यह है ध्यान" ॥3981
सुन कर नाथ से ज्ञान महान, कहन लगा वह साध सुजान ।
"ध्यान नाथ जो यह सुन पाया, मुक्ति का जो उपाय बताया ।
गुरु कृपा से हि सिद्ध हो पाय, आत्म ज्योति नज़र में आय ।
मैं हूं दासों का भी दास, शिष्य अधिकारी हूं न खास ।
नहीं सेवा न गुण है कोई, मुझ पर किरपा किस विध होई ।
शरण आये की करो सहाय, सेवक को कुछ कहो उपाय ।
ऐसा मैं भी ध्यान लगाऊं, तव कृपा से मैं मुक्ति पाऊं ।
अहैतुक कृपा यदि हो जाये, जीवन सफल तभी हो पाये ।
दो०—कृपा सागर नाथ मम, शरणी आया दास ।
इस पर भी कृपा करो, जग से भया उदास" ॥3982
बोले स्वामी "मुमुक्षु भाई, श्रवण कौन तव आतुरताई ।
प्रातः काल पुनः आ जाना, हमरे कथन तभी सुन पाना ।
कह इतना स्वामी उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन पचासवां (50) प्रातः

प्रातः काल जब साधु आया, स्वामी जी वही प्रसंग चलाया ।
कहा नाथ "हे साध प्यारे, तेरे भाव सुने हैं सारे ।
उत्तम शिष्य उसे मैं मानूं, मुमुक्षु जिस को मैं पहचानूं ।
इच्छा मुक्ति की जिसे होय, मुमुक्षु शिष्य कहावे सोय ।
मुमुक्षु शिष्य कृपा का पात्र, उस से अधिक न कोई सुपात्र ।

दो०—करो मुक्ति हित साधना, आत्म तत्व विचार ।
प्रभु की कृपा पाय कर, करो आत्म उद्धार" ॥3983

कहा साध तब "हे मम नाथ, आत्म तत्व बता करें सनाथ ।
उस का क्या स्वरूप मन लाऊं, कहां देख मैं उस को पाऊं ।
आत्म ज्योति का नाथ ध्यान, आप ने कथ पाया भगवान ।
उस ज्योति का क्या आकार, ध्यान करूं मैं किस प्रकार ।
यह सब मुझ को नाथ बताना, गूढ़ विषय मुझ को समझाना ।
जैसे हो मुझ को आदेश, करूं वैसे मैं मम हृदयेश ।
मुझ पर दया करनी गुरुदेव, रहूं आजीवन तेरी सेव ।
आप की कृपा को पा जाऊं, छूटे देह मुक्त हो जाऊं ।

दो०—देह धारण न मैं करूं, इस जीवन के बाद ।
छूटूं मैं इस चक्र से, जहां क्लेश अगाद" ॥3984

सुनी नाथ उसकी जिज्ञास, उसको जान अधिकारी खास ।
कहन लगे "हे साध प्यारे, भले लगे हैं वचन तिहारे ।
आत्म सर्वज्ञ सनातन जान, उसके ध्यान से मिलता ज्ञान ।
दिव्य ज्योति है उस का रूप, पांच तत्व से भिन्न स्वरूप ।

अब बतलाऊं तुझ को स्थान, जहां लगाना नित्य ध्यान ।
कण्ठकूप के भीतर साध, छिपी रहे इक ज्योति अगाध ।
मायावी जन देख न पावे, उससे जानो ज्योति लजावे ।
माया से जो हट कर चाले, गुरु आज्ञा को मन संभाले ।

दो०—फिर करे जब ध्यान वह, कण्ठ कूप के बीच ।
दर्शन ज्योति का भये, ध्यानी बने समीच ॥3985

उपदेश गुरु का लो यह जान, दीर्घ काल में मिलता ज्ञान ।
नित्य करे अभ्यास जो भाई, सुलभ उसे ही कुछ हो पाई ।
और मुख्य इक बात लो जान, बिन श्रद्धा न मिलता ज्ञान ।
श्रद्धापूर्वक करो अभ्यास, लेश न आवे अन्तर खास ।
दीर्घ काल जब होय व्यतीत, स्वयं प्रकटे वह ज्योति चीत ।
स्वेच्छा से ही प्रकट हो पाय, और न होवे कोई उपाय ।
जिसे वरण करे वह ज्योत, उस के चित्त ही हो उद्योत ।
ज्योति प्रकट जभी हो जाये, गांठ हृदय की तब खुल पाये ।

दो०—गांठ संशय की जब तक, मन में होवे मीत ।
भ्रांति में रहे भटकता, यही सनातन रीत ॥3986

आत्म ज्योति जब घट प्रकाशे, जीव की भ्रांति सकल विनाशे ।
संशय मन में रहे न कोई, आत्म जोत प्रकट जब होई ।
आत्म जोत का होय प्रकाश, काम क्रोध का भये विनाश ।
आत्म जोत का दर्शन पावे, भेद बुद्धि मिट उस की जावे ।
आत्म जोत निज तन में देख, जीव जन्तु में सके भी पेख ।
आत्म जोत जो देख न पावे, भेद बुद्धि ना उस की जावे ।

आत्म जोत जो देखे मीत, ईश्वर अंश ही पेखे चीत ।
आत्मा ईश्वर का ही रूप, अंशी का ही अंश स्वरूप ।

दो०—हो ईश्वर को देखना, देखिये आत्म जोत ।
ईश्वर का ही अंश वह, जिस से घट उद्योत ॥3987

हे साध मध्याह्न हो पाई, उठने की है मन में आई ।
सायंकाल जभी मिल पायें, इसी विषय पर फिर कथ पायें ।

## दिन पचासवां (50) सायं

सायंकाल जभी हो पाया, आ साधु तभी माथ झुकाया ।
नतमस्तक उस कीन निवेदन, "जिस ज्ञान को वर्णत वेदन ।
वही ज्ञान तव मुख से नाथ, कर श्रवण मैं भया सनाथ ।
अगला हो प्रसंग जो देव, श्रवण करूं रह आप की सेव ।"
कहा स्वामी "हे साध सुजान, ध्यान स्थूल वा ज्योति ध्यान ।
दोनों श्रवण किये तुम आन, सूक्ष्म ध्यान अब करूं बखान ।

## सूक्ष्म ध्यान

दो०—एक बात मैं पूछता, तुम बतलाओ मीत ।
सब से सूक्ष्म होत क्या, जो आये तव चीत" ॥3988

सोच में डूबा वह अगाध, उत्तर दे नहीं पाया साध ।
देख साध की यह लाचारी, बात नाथ जी तब उच्चारी ।
"हे साध मैं तुझे बतलाऊं, विश्व में सूक्ष्म बहु कुछ पाऊं ।
हमरी खोज तो यह ही होय, जिस से और नहीं सूक्ष्म कोय ।
आओ विचार करें हम मीत, एकाग्र करके बुद्ध व चीत ।

सूक्ष्म वही जो स्थूल समाये, यह सिद्धांत न भूलन पाये ।
है पृथ्वी से जल सूक्ष्म जान, पृथ्वी मध्य समाया मान ।
जल में भी होय वायु भाई, जल से अधिक है सूक्ष्मताई ।
वायु भीतर क्या समाया, क्या कभी है ध्यान में आया ।
दो०—वायु बीच आकाश है, होय जो न प्रतीत ।
सूक्ष्मतम वही जानिये, पांच तत्व में मीत ॥3989
आकाश से भी सूक्ष्म होय, उसको जाने ज्ञानी कोय ।
हृदय में आकाश है भाई, उस के मध्य जीव सुखदाई ।
जीव आकाश से सूक्ष्म होय, संशय कर सके नहीं कोय ।
अब मैं पूछूं तुम से भाई, जीव से किस की सूक्ष्मताई ।"
साध न उत्तर जब दे पाया, स्वामी जी ने तब समझाया ।
सकल विश्व इक शक्ति समायी, जीव के भी बीच जो भाई ।
उस शक्ति को ही सूक्ष्म जानो, सूक्ष्म ध्यान उसी का मानो ।
उस शक्ति की जो सूक्ष्मताई, सके न वर्णन कर को भाई ।
दो०—उसी शक्ति के ध्यान में, लीन रहें बहु साध ।
परे न उस से ध्यान है, लो समझ तुम साध" ॥3990
कहा साध "हे नाथ दयाल, सदा भक्तों पर हो कृपाल ।
हो कठिन से कठिन जो काम, सुधरे आप का ले कर नाम ।
शरण आपकी जो जन आये, पर अपर का ज्ञान वह पाये ।
स्थूल व सूक्ष्म का सब ज्ञान, आप से मिल पाया भगवान ।
स्थूल ज्ञान जान मैं पाया, सूक्ष्म चित्त में अभी न आया ।
नज़र न वस्तु जो कहीं आवे, जन किमि वह ध्यान में लावे ।

मेरी भ्रांति दूर हो नाथ, यह समझा कर करें सनाथ।
आप बिना को भ्रांति मिटावे, ज्ञान न गुरु बिन कहीं जन पावे।
दो०—इस ध्यान का हे प्रभो, करें पुनः विस्तार।
मन में जिमि वह ला सकूं, ले तव पग आधार" ॥3991
सुनी नाथ उस की जिज्ञास, और कहा ला मुख पै हास।
"सूक्ष्म ध्यान सुगम न भाई, इस में होती है कठिनाई।"
कहा साध ने "हे महाराज, समझूं वही कठिनाई आज।
आप की चरणों की रह सेव, हर कठिनाई सहूं मैं देव।"
कहा स्वामी "हे साध सुजान, तुम को तो है इस का ज्ञान।
कोई भी वस्तु देखन हेत, साधन दो ही हों अभिप्रेत।
ठीक आंख हो मेरे भाई, प्रकाश की भी हो अधिकाई।
दोनों का जब होय संयोग, वस्तु देख सकें तभी लोग।
दो०—है यही विधि ध्यान में, लो समझ तुम साध।
चित्त वहां पर आंख है, प्रज्ञा ज्योति अगाध ॥3992 क
चित्त एकाग्र चाहिए, निर्मल बुद्धि भाई।
सूक्ष्म का तब ज्ञान हो, तप की कर कमाई" ॥3992 ख
कहा साध "हे नाथ प्यारे, समझ लिए मैं भाव तिहारे।
तप वही मुझ को बतलायें, जिस से ये गुण मुझ में आयें।
निर्मल बुद्धि हो मेरी नाथ, मन भी एकाग्र उस के साथ।"
कहा नाथ अब कल तुम आना, इसका उत्तर तब सुन पाना।"

## दिन इकावन (51) प्रातः

प्रातः काल जब साधु आया, स्वामी जी ने तब कथ पाया ।
"हे साधो तुझ को बतलाऊं, तप की भाषा मैं समझाऊं ।
सत्य संतोष और स्वाध्याय, यही हैं तप के तीन उपाय ।
इन तीनों पर चल कर मीत, बुद्धि शुद्ध और मन पर जीत ।
दो०—सूक्ष्म शक्ति को देखना, यदि चाहो तुम साध ।
इन नियमों को पाल कर, लो योग आराध" ॥3993
कहा साध "हे जग के नाथ, सदा रहे तव दया का हाथ ।
पाल सकूं मैं सारे नेम, और रहे तव चरणि प्रेम ।
आज्ञा हो तो पूछ ले दास, नाम इस शक्ति का क्या खास ।
सबसे सूदम जिसे बताया, करूं ध्यान जिसका समझाया ।
बिन नाम न स्मरण हो पाये, ऐसा हम सुनते हैं आये ।"
कहा नाथ "तू ठीक उचारा, नाम रूप का सकल पसारा ।
अनादि शक्ति का क्या हो नाम, इसी भ्रांति में जगत तमाम ।
नाम सनातन जो विख्यात, जानो वह है "ओं" ही तात ।
देश काल के फिर अनुसार, भिन्न नामों का भया पसार ।
दो०—यही बात तुम जान लो, उसके नाम अनेक ।
मानव ने हैं सब रचे, नाम न उसका एक ॥ 3994
गुरुमुख से जो नाम सुन पाये, नाम उसी से उस को ध्याये ।"
साध तब पूछा, "हे भगवान, उस शक्ति के कुछ गुण लूं जान ।"
कहा नाथ "यह प्रश्न तिहारा, ज्ञान मिले उत्तर से भारा ।
उस शक्ति के जिमि नाम अनन्त, उसके गुणों का भी न अन्त ।

1.*'ईश्वर' नाम उसका विख्यात, सृष्टि का वह स्वामी तात ।
क्लेशों से वह सदा अछूता, कर्म का फल न उस को छूता ।
वासना का तो नाम न मीत, उसके सब गुण नहीं प्रतीत ।
2.*निर्गुण के गुण को बतलाये, जो कहे सो हार ही जाये ।

दो०—ईश्वर के गुण जो सुने, कथन करूं मैं मीत ।
विश्वव्यापक ईश है, योग से होय प्रतीत ।।3995

सच्चिदानन्द वही है मीत, सृष्टि का लो कर्ता चीत ।
भर्ता हर्ता उस को जान, ईश्वर को सर्वज्ञ पहचान ।
तीन काल का उसको ज्ञान, निश्चय से लो ऐसा मान ।
अकाल पुरुष वही है भाई, काल की उस पर न प्रभुताई ।
अन्तिम गुण जो करूं बखान, उस पै देना विशेष ध्यान ।
धर्मराज वह सर्वश्रेष्ठ, उस से मिलता न्याय श्रेष्ठ ।
जैसा जीव कर्म कर पावे, वैसा फल अवश्य ही पावे ।

दो०—ईश्वर के जो गुण कथे, तव समक्ष हे साध ।
अंश मात्र ही जानिये, शक्ति परम अगाध ।। 3996

हे साधो जो मैं कथ पाया, समझ सभी तुमने है पाया ।
योग विद्या अथाह है मीत, पूछो और जो है तव चीत ।"
कहा साध "हे गुरु भगवान, सुना आप से गूढ़ मैं ज्ञान ।
इससे आगे क्या हो ज्ञान, नहीं जानूं मैं हूं अनजान ।
समाधि नाम सुना है देव, वह क्या होती है अधिदेव ।
हो यदि इसका भी समाधान, जानूं नूतन मिला है ज्ञान ।

1. * देखो योग दर्शन I. 24
2. * निर्गुण—प्रकृति के तीन गुणों—सत्व, रज, तम—से परे ।

अज्ञ शिष्य मैं शरणी आया, ज्ञान अथाह आप से पाया ।
मुमुक्षु और जिज्ञासु नाथ, शरण पड़ा मैं करो सनाथ ।
दो०—शरणी आये दास पर, किरपा कीजो देव ।
इच्छा मेरी एक है, सदा रहूं तव सेव ॥" 3997
कहा नाथ "हे साध प्यारे, भले लगे हैं भाव तिहारे ।
सायंकाल जभी चलि आओ, जो कहूं मैं तभी सुन पाओ ।"
स्वामी कथ इतना उठ पाये, अपने कक्ष में वे सिधाये ।

## दिन इकावन (51) सायं

सायं भयी साध आ पाया, उसका था अति मन हर्षाया ।
इकावन दिन तक पाया ज्ञान, पाये गुरु भी दया निधान ।
कहा नाथ उसको "हे तात, प्रश्न किया था तुम जो प्रात ।
उसका उत्तर अब दे पाऊं, तभी बात अन्तिम कह पाऊँ ।
प्रश्न था समाधि का तुम कीन, लो तुम इस विध उसको चीन ।
उत्तम दशा ध्यान की जोय, समाधि अवस्था वह ही होय ।
ध्यान में देह सुधि रह पाये, समाधि मैं वह भी खो जाये ।
लवन नीर में जिमि घुल जाता, इष्ट में साधक तिमि समाता ।
दो०—यही अवस्था जानिये, समाधि की मम मीत ।
दीर्घ काल अभ्यास से, इसकी हो प्रतीत ॥ 3998
हठ योग तुम सीख हो पाये, साधन सप्त जहां हैं आये ।
करना इन का तुम अभ्यास, करके कहीं एकांत निवास ।
करत न जो अभ्यास कमाई, निष्फल योग होत है भाई ।
बहु संगी न तुम हो पाना, रह एकांत योग कर पाना ।

एक वर्ष तक कर अभ्यास, लौट सको फिर हमरे पास ।
साधन में को बाधा पाओ, स्मरण प्रभु को तब कर पाओ ।
राम योगेश्वर हों सहायी, बाधा दूर करें वे भाई ।
खुशी खुशी अब तुम चलि जाओ, प्रभु को कभी न भूलन पाओ ।

दो०—लौटो गे जब फिर कभी, इस विषय पर भाई ।
सूक्ष्म करें विचार तब, शांति से मन लाई ॥3999 क
इतना कह कर नाथ ने, उसे विदाई दीन ।
गुरु की कर प्रदक्षिणा, चरण धूल उस लीन ॥3999 ख
पूर्ण भया यह योग का, शिक्षा काण्ड महान ।
स्वामी मुलख राज दिया, जगती को यह ज्ञान ॥3999 ग

हठ योग के सातों साधन, कीन मुलख उन का परिपादन ।
*सप्त साधन उन ये बतलाये, शोधन दृढ़ता स्थैर्य कह पाय ।
धीरता चौथा तब बतलाय, पंचम लाघव को समझाय ।
छटा फिर प्रत्यक्ष बताया, सप्तम उन निर्लिप्त सुनाया ।
साधन सप्त जो ले अपनाय, योगी वह ही जन बन पाय ।
क्रियां साधनों की समझाईं, साधु को कुछ सिद्ध करायीं ।

---

* सप्त साधन जिनका विस्तार इस काण्ड में आया है वे ये हैं और उनके संबंध में ये क्रियाएं है—

1. शोधन—षट्कर्मों द्वारा
2. दृढ़ता—आसनों द्वारा ।
3. स्थिरता—मुद्राओं द्वारा ।
4. धीरता—प्रत्याहार द्वारा ।
5. लाघव—प्राणायाम द्वारा ।
6. प्रत्यक्ष (आत्म दर्शन)—ध्यान द्वारा ।
7. निर्लिप्त—समाधि द्वारा ।

शोधन हित षट्कर्म बताये, नेति धौति आदि करवाये ।
आसन दृढ़ता हित जो होय, साधु को करवाये उन सोय ।
दो०—शोधन दृढ़ता हेत जो, क्रियां हैं कथ पायीं ।
अपने सन्मुख नाथ ने, साधु को करवाईं ॥ 4000
मुद्रा का फिर दीना ज्ञान, स्थिरता जिससे मिले महान ।
जिनसे दूर रहें बहु रोग, जिन रोगों से ग्रस्त बहु लोग ।
धीरता का भी कीन बखान, क्रिया है प्रत्याहार महान ।
इस क्रिया को जो कर पायें, संयमी पुरुष वही कहायें ।
लाघव साधन नाथ बताया, प्राणायाम उसे करवाया ।
उसे प्राण के भेद बताये, योग में जिन से सिद्धि पाये ।
गहन विषय तब कीन बखान, जिमि प्रत्यक्ष हो आत्मज्ञान ।
इस हेतु उन ध्यान बताया, सह विस्तार उसे समझाया ।
दो०—स्वामी जी संक्षेप से, समाधि कीन बखान ।
स्थिति उत्तम जो ध्यान की, और योग की जान ॥ 4001
सद्गुरु मुलखराज और साध, इन का पावन यह संवाद ।
पढ़े सुने जो सहित ध्यान, अवश्य मिलेगा उसको ज्ञान ।
साधनों का यह कोष महान, सरल भाषा में भया बखान ।
परम योगी के मुख से आया, और न साधन को छुट पाया ।
"सेवक" धन्य निज को तू जान, मिला लिपिक बनने का मान ।
हे प्रभो अब क्या कथ पाऊं, किस मुख से तव अस्तुत गाऊं ।
तव चरणों में यही अरदास, सदा रहे तव चरणि यह दास ।
विनय एक यह है भगवान, मुलख राज जब दीना ज्ञान ।

साधु को उन दीन आदेश, लौट के आना फिर इस देश ।
सूक्ष्म करें तब योग विचार, कीना साध ने वह स्वीकार ।
जो 'विचार' तब वे कथ पायें, अवश्य रहस वे दिव सुनायें ।

दो०—उनके दिव्य विचार सब, सुन पाऊं मैं नाथ ।
"विचार काण्ड" लिखवायें, इसी ग्रंथ के साथ ।।4002क
आज संपूर्ण है भया, शिक्षा काण्ड महान ।
*चैत्र मास इक विंशती, वर्ष बीस सपन्न जान ।।4002ख
हाथ जोड़ अब वेनती, मैं करूं भगवान ।
जीव मात्र का हे प्रभो, योग करे कल्यान ।।4002ग

इति

इति श्री सद्गुरु योगेश्वर स्वामी मुलखराज जी महाराज के शिष्य "सेवक" चमन लाल कपूर कृत योगावतार श्री प्रभु राम लाल जी महाराज की दिव्य जीवनी **"श्री योग महादिव्य रामायण ।"** का **"शिक्षा काण्ड" संपूर्ण ।**

* होशियारपुर, 21 चैत्र विक्रमी संवत, 2053, वृहस्पतिवार । तदनुसार 3 अप्रैल, ईस्वी वर्ष 1997 ।

---

Composed & Designed By : Compile Computer System – 243/7 Fateh Pura, Jal.